श्रीराम शर्मा आचार्य

कर्मयोग और कर्म-कौशल

लेखक

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

पुनर्मुद्रित सन् २०१० मूल्य : ३३.०० रुपये

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

दो शब्द

कर्म ही मानव जीवन का मेरुदंड है। यदि कर्म नहीं रहा होता तो यह मानव योनि लुंज-पुंज निरर्थक-सी बनकर रह गई होती। इसे सुर दुर्लभ जीवन की संज्ञा नहीं मिली होती। कर्म ही वह सौरभ है जो इस विश्व को नंदन कानन बनाए हुए है।

सर्वव्यापी वायु की तरह कर्म मनुष्य जीवन के प्रत्येक क्षण में समाया हुआ है। सोते, जागते, उठते, बैठते, खाते, पीते, काम करते, विश्राम करते हुए मनुष्य कर्म ही करता है। यह कर्म ही उसके सुख-दु:ख का हेतु होता है। पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक का आधार कर्म ही है।

कर्म तो सभी करते हैं, किंतु किस मनोयोग से कर्म किया जाए कि सफलता मिलकर ही रहे। असफल हो जाने पर किस प्रकार बिना उद्विग्न हुए पुन: उसमें प्रवृत्त हुआ जा सके। कर्म तथा आकांक्षाओं, विचारणाओं में सामंजस्य किस प्रकार स्थापित किया जाए जिससे स्वयं सुखी होने के साथ-साथ विश्वमानव को भी सुखी बनाया जा सके। कर्म उसके कर्ता को पहले क्षण सफलता के हर्ष से उन्मत्त बना देता है तो दूसरे ही क्षण असफलता का विषाद उसे सिर धुनने को विवश कर देता है। इस विडंबना से बचने के लिए कर्म के प्रति समग्र दृष्टिकोण रखना आवश्यक है।

पशु-पक्षी तथा उद्भिज भी कर्म करते हैं, पर वे मनुष्य की तरह कर्म करने में स्वतंत्र नहीं होते। उन्हें प्रकृति ने नियंत्रण में रखा है, मनुष्य को यह स्वतंत्रता इसी कारण मिली है कि वह विवेकवान है, उसका अंत:करण उसे सद्कर्म करने को प्रेरित करता रहता है।

कर्म की यह स्वतंत्रता व्यक्तिगत जीवन तथा सामाजिक जीवन को स्वर्गीय सुखों से भर देने के लिए पर्याप्त है। किंतु कर्म की महत्ता तथा समग्र दृष्टिकोण के अभाव में व्यक्ति ऐसे कर्म भी कर बैठता है जिससे नरक की सृष्टि होती है। इस पुस्तक में इतनी जानकारी प्रस्तुत की गई है जिससे व्यक्ति धरती पर स्वर्ग की सृष्टि करने के लिए उठ खड़ा हो।

—प्रकाशक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

विषय-सूची

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कर्मयोग और कर्म-कौशल

दो माली एक साथ दो बाग लगाते हैं। कुछ ही समय में एक माली की वाटिका पल्लवित, पुष्पित और विकसित हो उठती है। सारा बाग इधर से उधर तक समान रूप से हरा-भरा, लहराता हुआ अपनी सुंदरता और सुवास से वातावरण को ओत-प्रोत करता है। जो भी अपना-पराया, शत्रु-मित्र और आने-जाने वाला उसके पास से निकलता है, उसका हृदय प्रसन्न हो उठता है, आँखें तृप्त हो जाती हैं, तब मन सुवासित हो उठता है और मुख से अनायास ही निकल पड़ता है—अहा, कितनी सुंदर वाटिका है, कैसा मनमोहक बाग है। इसका माली बड़ा कुशल व्यक्ति मालूम होता है। माली अपनी इस सफलता को देखता, सुनता और आत्मा में एक अनिर्वचनीय आनंद का, सुख-संतोष का अनुभव करता है। उसे अपने श्रम, अपनी साधना और अपनी चिंता का श्रेय मिल जाता है। यही कर्म-कुशलता है, कर्मयोग है।

दूसरे माली का बाग कहीं हरा-भरा, कहीं नीरस और शुष्क, कोई डाली फूलों से सजी है तो कोई पत्तों से भी रहित है। कोई पौधा सीधा खड़ा है तो कोई नमस्कार कर रहा है। कहीं कलियाँ खिलकर फूल बन रही हैं तो कहीं विकसित होने से पहले ही मुरझा गई हैं। किसी ओर तो सुगंध आ रही है तो कहीं कूड़े-करकट की दुर्गंध उठ रही है। न क्यारियाँ ठीक हैं और न पौधों की काट-छाँट। हर ओर अव्यवस्था और अस्त-व्यस्तता ही दृष्टिगोचर होती है। बाग की यत्र-तात्रिक सुंदरता भी उस सार्वत्रिक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कुरूपता में मिलकर कुरूप बन जाती है, असंगत और अनुपयुक्त लगती है।

ऐसा विकृत बाग न तो किसी को प्रसन्न कर पाता है और न सुवासित, उसे देखकर न तो कोई ठहरता है और न प्रशंसा करता है। बहुत बार तो लोग सहसा देखकर यही निर्णय नहीं कर पाते हैं, कि यह कोई वाटिका है या वन-स्थली। लोग देखते और यों ही चले जाते हैं और यदि कोई कुछ टिप्पणी करता भी है तो कहता है—'बड़ा रद्दी बाग है, इसका माली बड़ा अयोग्य और अकुशल मालूम होता है।'

बस, उस माली का सारा श्रम और सारा कर्म व्यर्थ चला गया। उसकी साधना असफल हो गई और वह अपनी आत्मा में एक ग्लानि, एक क्षोभ, एक लज्जा, एक निराशा और एक असंतोष अनुभव करता है। उसका सुख और संतोष, श्रम और श्रेय सभी कुछ नष्ट हो जाता है। यही अकर्म, अकुशलता और अनायोग है।

दोनों माली मनुष्य हैं, दोनों ने एक जैसा ही काम किया। दोनों के साधन और सुभीते एक जैसे थे और दोनों ने सफलता के लक्ष्य से श्रम किया, तब क्या कारण है कि एक श्रेय का और दूसरा हेय का अधिकारी बना? कारण है और वह यह कि उन दोनों में से एक कर्मयोगी है और दूसरा कर्मभोगी।

एक ने अपने कर्तव्य की प्रत्येक शाखा पर पूरा ध्यान और मनोयोग दिया है। उसने समय पर बीज बोए, समय पर समुचित पानी दिया। क्यारियों की रचना की, अंकुरों की रक्षा और पौधों की खोज-खबर रखी। कहाँ पर विजातीय वनस्पति उग रही है, कहाँ पर कीड़ा लग सकता है, कौन-सा पौधा झुक सकता है? हवा का कौन-सा रुख किस डाल को हानि पहुँचा सकता है और किधर कौन जंतु आ सकता है—इनमें से किसी बात से वह गाफिल नहीं रहा। उसने हर पौधे, हर अंकुर, हर पत्ते, हर कली

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

और हर फूल की सुरक्षा और विकास की चिंता की। विजातीय वनस्पति को निराया और जानवरों का मार्ग अवरुद्ध किया। उसकी इस सतर्कता, सावधानी और जागरूकता ने उसे सफलता और श्रेय का अधिकारी बनाया। उसने कर्म योगपूर्वक किया वह कर्मयोगी रहा।

दूसरे ने इनमें से किसी बात पर ध्यान नहीं दिया। बीज सूख रहा है, सूखने दिया। पानी की व्यवस्था नहीं की, अंकुर निकल रहे हैं या नहीं, इस बात को क्यारी-क्यारी के पास जाकर नहीं देखा। पौधा सड़ रहा है, झुक या गिर रहा है, उसने परवाह नहीं की, फूल मुरझा रहे हैं, कलियाँ सूख रही हैं, पत्ता जले जा रहे हैं, इस बात से वह निरपेक्ष रहा। क्यारी टूट गई है या धारा फूट निकली है, उसने न देखा और न उसकी व्यवस्था की। वह जोत-बोकर भाग्य के भरोसे बैठ रहा। जो पौधे स्वयं की शक्ति से प्रफुल्लित हो गए, जो फूल स्वयं खिल उठे, उसी में वह संतुष्ट हो गया और उस संयोग को ही अपनी सफलता मानकर आलसी बन गया। दो-चार खिले पौधों में उसकी आसक्ति हो गई और वह घूम-घूमकर उनकी ही हाजरी बजाने लगा। दूसरे पौधों और उनकी दशा से विमुख हो गया, सफल पौधों के प्रति अपनी आसक्ति की उपासना में लग गया। उसी में अपनत्व और अहंकार को केंद्रित करके बैठ गया। परिणामस्वरूप शेष बाग वीरान हो गया। माली की निंदा और उसकी अकर्मता की भर्त्सना हुई और अंततः वह अशांति, असंतोष और असफलता का भागी बना। यही अकुशलता है, कर्मभोग है।

यह उदाहरण इस सत्य को सिद्ध करता है कि मानव जीवन की सफलता कर्मयोग में है, कर्मभोग में नहीं। इसलिए मनुष्य को श्रेय अथवा निःश्रेयस प्राप्त करने के लिए कर्मभोगी नहीं, कर्मयोगी बनना चाहिए। उसे जीवन की हर छोटी-बड़ी शाखा पर समान रूप से संपूर्ण योग्यता और मनोयोग से ध्यान देना चाहिए। उस काम को

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जिसमें अधिक लाभ है, जिसका फल अधिक मूल्यवान है, पूरे तन-मन से करना और जो अपेक्षाकृत कम लाभ की संभावना वाला है, उसकी उपेक्षा करना कर्म-कौशल नहीं है। कार्यकुशलता का प्रमाण इस बात में है कि छोटे-से-छोटा काम भी इस कौशल से किया जाए कि वह सुंदर और महत्त्वपूर्ण बनकर कर्ता की ईमानदारी का साक्षी जैसा बोल उठे। कर्म का स्वरूप ही मनुष्य के गुण-कर्म-स्वभाव की तसवीर है, उसी के अनुसार गुणी एवं गुणज्ञ लोग किसी कर्मयोगी को अंक दिया करते हैं, उसका ठीक-ठीक मूल्यांकन किया करते हैं।

मनुष्य का सारा जीवन ही कर्ममयता से भरा हुआ है। किसी समय भी वह कर्म रहित होकर नहीं रह सकता। सोते-जागते, उठते-बैठते, यहाँ तक कि श्वास लेने में भी वह एक कर्म ही करता रहता है। और तो और, यदि श्वास लेने की क्रिया ही ठीक से पूरी न की जाए, उसमें भी अस्त-व्यस्तता, व्यवधान अथवा प्रमाद बरता जाए तो स्वास्थ्य के लिए एक बड़ा संकट उपस्थित हो जाए और उसकी यह सामान्य क्रिया भी असफलता की गोद में चली जाए।

आदि से लेकर अंत तक मनुष्य के जीवन में कर्म ही कर्म भरे पड़े हैं। परिवार के लिए अन्न, वस्त्र आदि की व्यवस्था, बच्चों की पढ़ाई, रोजी-रोजगार, बीमारियों का चक्कर, शादी-विवाह, मेल-मिलाप आदि तरह-तरह के कर्म उसे करते ही रहने पड़ते हैं। इतने और इतने से भी और न जाने कितने ज्यादा कर्मों के बीच कर्म-कुशलता ही वह संबल है, जिसके आधार पर सभी ओर सफलता और सभी ओर सुख-संतोष पाया जा सकता है। अन्यथा, यदि एक कर्म सफल होकर अंजलि भर सुख देगा, तो चार असफल होकर पास की भी सुख-शांति छीन ले जाएँगे। कर्म-कौशल इसी में है कि कामों की एक ऐसी व्यवस्था, ऐसा विधान बनाया जाए, जिसकी धुरी पर सारे कर्तव्य अपनी-अपनी कक्षा में वांछित गति से चक्कर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लगाते रहें, जिससे हर काम पर दृष्टि रखी जाए और सब पर उचित ध्यान दिया जा सके। किन्हीं एक-दो रुचिकर कामों से आसक्ति जोड़कर बैठ रहना सारे कर्म-कलाप को छितरा देगा और तब उनको समेटने तथा सँभालने में इतना और अनावश्यक रूप में श्रम करना पड़ेगा कि जिंदगी बोझ बनकर रह जाएगी।

संपूर्ण कर्म-व्यवस्था तभी ठीक रह सकती है, जब प्रत्येक कार्य को चतुराई के साथ अपेक्षित मनोयोग से किया जाए। न तो किसी काम को छोड़ा ही जा सकता है और किसी को पकड़कर बैठाया ही जा सकता है। समय और परिस्थिति के अनुसार सारे कामों को पूरा करना आवश्यक है। जिस ओर ध्यान न दिया जाएगा, उसी ओर अशांतिदायक अव्यवस्था फैल जाएगी। उदाहरण के लिए मान लीजिए, बच्चों को खूब खिला-पिलाकर स्वस्थ तो बना दिया, किंतु उनकी शिक्षा की ओर ध्यान नहीं दिया, तो निश्चय ही वे अशिक्षित बच्चे आगे चलकर एक बड़ी अशांति एवं अव्यवस्था के कारण बनेंगे। दिन और रात परिश्रम करके धन की प्रचुरता कर ली, पर उसको पुण्य, परमार्थ अथवा अन्य आवश्यक कामों में व्यय करने में कृपणता की, तो क्या वह धन चोरों, डाकुओं, ईर्ष्यालुओं और शत्रुओं की दुरभिसंधि का केंद्र बनकर जीवन में भय और शंका उत्पन्न नहीं करेगा? क्या वह परिवार में कलह और संघर्ष का सूत्रपात नहीं करेगा? दिनभर काम तो खूब किया जाए पर आहार की ओर ध्यान न दिया जाए, तो क्या स्वास्थ्य सुरक्षित रखा जा सकता है? इसी प्रकार पत्नी को भोजन, वस्त्र तो प्रचुर मात्रा में दिया जाए, पर उसकी प्रेम-पिपासा की उपेक्षा कर दी जाए, तो क्या यह विश्वास किया जा सकता है कि वह संतुष्ट रहेगी और कलह अथवा क्लेश पैदा नहीं करेगी।

और भी, यदि किसी एक ओर आसक्ति जोड़कर बैठ रहा जाए तो भी जीवन में शांति तथा स्थिरता के लिए खतरा पैदा हो जाएगा। पुत्र से आसक्ति है, उसकी पढ़ाई, रहन-सहन और स्वास्थ्य,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सुंदरता पर पूरा ध्यान देते हैं, पर पुत्री की उपेक्षा कर देते हैं तो क्या वह आशा की जा सकती है कि उस पर इस पक्षपात की अशांतिकारक प्रतिक्रिया न होगी। इसी प्रकार यदि शरीर से आसक्ति रखकर आत्मा की और आत्मा को प्रधानता देकर शरीर की, सर्वथा उपेक्षा कर दी जाए तो न लोक बनेगा और न परलोक, दोनों बिगड़ जाएँगे।

इन दोनों के अपेक्षित अनुपात ही लोक, परलोक के संराधक हो सकते हैं। कला से आसक्ति रखकर परिश्रम-साध्य कर्मों के अनास्थावादी जीवन में कभी सुखी नहीं रह सकते। कला यदि आत्मा को विकसित करती है तो परिश्रम शरीर-यात्रा का सहायक है, दोनों आवश्यक हैं, दोनों को अपेक्षित महत्त्व मिलना ही चाहिए। इसी महत्त्व के समुचित संतुलन का निर्वाह ही कर्म-कौशल अथवा कर्मयोग माना गया है, इसके विपरीत आसक्ति अथवा उपेक्षा का आरोप अकुशलता अथवा कर्मभोग कहा गया है। जीवन में यदि ऐसी सात्त्विक सुख-शांति चाहिए, जो कि लोक से लेकर परलोक तक सहायक बने, तो मनुष्य को कुशल तथा सफल माली की तरह कर्मभोगी नहीं, कर्मयोगी बनना चाहिए।

महत्त्वाकांक्षाओं का पागलपन

वित्तैषणा, पुत्रैषणा और लोकैषणा की तृष्णा, वासना, अहंता से विक्षुब्ध हुए मनुष्य उन उत्पाती पागलों का रूप धारण कर लेते हैं, जो न स्वयं चैन से रहते हैं और न दूसरों को चैन से रहने देते हैं। महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति अपने लिए विशेष लाभ भले ही प्राप्त कर लेते हों, पर जनसमाज के लिए वे संकट रूप ही बने रहते हैं। असंतुष्ट जीवन में जीने का कोई आनंद नहीं। जो कुछ हमें मिला है उस पर संतोष, गर्व और उल्लास करते हुए यदि आज आनंद नहीं मना सकते हैं तो कल यदि आज से अधिक मिल जाए तो सुखी बन सकेंगे इसका क्या भरोसा? तृष्णा तो हर सफलता के बाद आग में घी डालने की तरह बढ़ती ही जाती है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इसलिए जिन्हें निरंतर लालसाओं, कामनाओं की आग में झुलसना हो, उन्हीं को अपनी मनोभूमि में असंतोष रूपी जीवित चिता सँजो लेनी चाहिए।

समाजसेवा, परमार्थ, आत्मविकास, विद्याध्ययन, भौतिक उन्नति का प्रत्येक कार्य देर तक कर सकना उन्हीं के लिए संभव होता है, जो धैर्यवान और स्थिर चित्त हैं और ये दोनों गुण केवल उन्हें प्राप्त हो सकते हैं जो अपनी आज की उपलब्धियों पर संतोष अनुभव करते हुए कल अधिक उन्नतिशील बनने को अपना एक सरल स्वाभाविक कर्तव्य मानते हैं। संसार में अनेक धन हैं, पर संतोष का धन सबसे बड़ा धन है। कबीर की यह उक्ति बड़ी सारगर्भित है जिसमें कहा गया है—"**जब आवे संतोष धन सब धन धूरि समान।**" यह धन जहाँ भी होगा वहाँ आनंद की निर्झरिणी बहेगी। पति-पत्नी यदि आपस में संतुष्ट हैं तो उन्हें स्वर्गीय जीवन का रस इसी जीवन में उपलब्ध होगा। गाँव के लड़के पढ़-लिखकर शहरों को भागते हैं, यदि उन्हें ग्राम्य जीवन में संतोष रख सकने का साहस हो, तो वे शहरी तड़क-भड़क में अपने स्वास्थ्य की बरबादी करने की अपेक्षा ग्रामीण समाज को और अधिक अच्छा बनाने के लिए उसी क्षेत्र में रहकर अपनी और अपने देहाती भाइयों की बहुत बड़ी सेवा कर सकते हैं।

हर व्यक्ति अपने गुण-कर्म-स्वभाव का अधिकाधिक विकास करे—यह उचित है। अधिक विद्वान बनना, अधिक सेवाभावी होना, अधिक चरित्रवान रहना, अधिक सभ्य, सुसंस्कृत एवं आदर्शवादी होना किसी भी व्यक्ति के लिए कम गौरव की बात नहीं है। ये ही महत्त्वाकांक्षाएँ उचित हैं और उपयोगी भी। उन्हीं की छूट हर आदमी को रहनी चाहिए, पर अधिक धन जमा करने की, अधिक ऐश करने की, अधिक वाहवाही लूटने के लिए उद्धत काम करने की छूट किसी व्यक्ति को न रहे। इसके लिए कानूनी या नैतिक नियंत्रण रहे तो यह सर्वथा उचित ही होगा।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आध्यात्मिक दृष्टिकोण संतोष का दृष्टिकोण है। उसमें हर व्यक्ति को धैर्य और औचित्य के साथ-साथ प्रगति करते चलने की छूट है, पर जनसाधारण के मध्यम स्तर से बहुत अधिक ऊँचा बढ़ने का निषेध है। जिनमें जो योग्यताएँ हों वे उन्हें अपने से छोटे या पिछड़े हुए साथियों को उन्नतिशील बनाने में खरच करें और जिस प्रकार फौजी सिपाही साथ-साथ कदम-से-कदम मिलाते हुए एक-सी पोशाक और वरदी धारण करते हुए मार्च करते चलते हैं उसी प्रकार हमें भी अपने सारे समाज को एक समान विकसित करते हुए साथ-साथ आगे बढ़ने की बात सोचनी चाहिए।

भगवान बुद्ध जब मरने लगे और उनसे पूछा गया कि क्या आपको इस मृत्यु के बाद स्वर्ग या मुक्ति की प्राप्ति होगी? तो उन्होंने हँसकर कहा—"जब तक एक भी व्यक्ति इस संसार के बंधन में बँधा हुआ है, तब तक मैं अपनी व्यक्तिगत सुख-आकांक्षा की कामना नहीं कर सकता। मैं बार-बार जन्मूँगा और मनुष्य तथा हर प्राणी को अपने स्तर का बनाने के लिए सृष्टि के अंत तक प्रयत्न करता रहूँगा।" यही है आध्यात्मिक साम्यवाद। सभ्य व्यक्ति का, सभ्य समाज का यही आदर्श होना चाहिए। व्यक्ति को क्षमता एवं प्रतिभा ईश्वर ने इसी उद्देश्य के लिए दिए हैं कि वह अपने से पिछड़े लोगों को कम-से-कम अपने स्तर तक ऊपर उठाने में उनका उपयोग करे। गुजर-बसर के बारे में जो जितना संयमी रहता है और स्वेच्छा से गरीबी का जीवन स्वीकार करता है, वह उतना ही बड़ा माना जाता है। भारतीय संस्कृति का यही सनातन आदर्श रहा है। ऋषि, मुनि स्वेच्छा से गरीबी का जीवन व्यतीत करते रहे हैं। जन समाज में भी वही प्रशंसनीय है, जो अपनी व्यक्तिगत भौतिक सुख-सुविधाएँ इकट्ठी करने में नहीं, अपनी सामर्थ्य से दूसरों को सुखी बनाने में एक श्रेष्ठ सत्पुरुष की तरह संलग्न है। भारत की आत्मा एक ही स्वर में पुकारती रही है—

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

नत्वहं कामये राज्यं न सौख्यं न पुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्त्तिनाशनम्॥

मैं अपने लिए राज्य की, सुख की, स्वर्ग की कामना नहीं करता, मेरी एकमात्र आकांक्षा यही है कि दुखियों के दुःख दूर करने में अपने को घुला और गला सकूँ।

यह आदर्श जिन्होंने जीवन में धारण किया हुआ है, वे ही विश्वशांति के स्तंभ बन सकते हैं। उन्हीं की संख्या बढ़ने से यह वसुधा अपने को धन्य मान सकती है। ऐसे ही नर-रत्नों से यह संसार गुलाब के महकते फूलों से भरे बगीचे की तरह सुरभित हो सकता है। उन्हीं की परमार्थ बुद्धि का लाभ उठाकर छोटे-छोटे अनेकों को आगे बढ़ने का अवसर मिलता है। चंदन का वृक्ष अपनी सुगंधि से अपने समीपवर्ती अनेक पौधों को सुवासित कर देता है। यही जीवनयापन की सर्वश्रेष्ठ नीति है। पर यह संभव उसी के लिए हो सकती है, जो व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं की दृष्टि में अंधा और पागल नहीं हो रहा है।

जिसे दौलत! दौलत!! दौलत!!! की निरंतर रट लगी रहती है और इसी गोरखधंधे में मकड़ी के जाले की तरह दिन-रात उलझा हुआ ताना-बाना बुनता है, उसे इतनी फुरसत नहीं मिलेगी जो अपने से गिरे हुओं की बात सोचे, जो अपनी आंतरिक दुर्बलताओं के संबंध में विचार करे, जो आदर्शवादी जीवनयापन करने के लिए अपने को संयमी और सीमित रखकर दूसरों को सुखी-संतुष्ट बनाने के लिए कोई कदम बढ़ाने का साहस करे?

असंतोष भी सराहनीय हो सकता है पर वह होगा तभी, जब उसका उपयोग जाति-कल्याण, साधना, संयम, सेवा, ज्ञानवृद्धि, परमार्थ जैसी दैवी संपदाओं को बढ़ाने के लिए हो। आसुरी संपदाएँ बढ़ाने का असंतोष तो जितना ही बढ़ेगा उतनी ही अशांति उत्पन्न करेगा। संघर्षों की जड़ यही है। अधिकारों के लिए सब जागरूक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

हैं, कर्तव्यों की किसी को चिंता नहीं। हर व्यक्ति के मुँह से यही शिकायत सुनी जाती है कि मुझे यह नहीं मिला, यह नहीं दिया गया, इससे मैं वंचित हूँ। किसी फूटे मुँह में से यह शब्द सुनाई नहीं पड़ते कि मुझे दुनिया से इतना मिला, लोगों ने इतना दिया। हमें जो उपलब्ध है, क्या वह लाखों-करोड़ों की अपेक्षा कहीं अधिक नहीं है? ईश्वर ने, समाज ने, जितना हमें दिया है उसके प्रति क्या हम उपयुक्त कृतज्ञता के भाव धारण किए हुए हैं? मन में ऐसी भावना नहीं आती कि क्षणभर के लिए अपनी उपलब्धियों पर हर्ष मनाने, संतोष अवगत करने, कृतज्ञता प्रकट करने और धन्यवाद देने के लिए भी गुंजाइश रहे। ऐसी श्मशान जैसी शुष्क मनोभूमि जिनकी बनी हुई है उन्हें अपने जीवन में भला कहाँ रस आ सकता है? जिन्हें हर घड़ी तृष्णा सताती रहती है, वे उद्विग्न प्रेत, पिशाच की तरह इस मरघट से उस मरघट में भटकते रहते हैं। यह अभागे अपनी ही हीनता के मारे हुए हैं, अपनी ही अतृप्ति से दुखी बने हुए हैं, भला इनके द्वारा किसी दूसरे का क्या हित-साधन हो सकता है?

धन की तरह ही ख्याति और मान प्रतिष्ठा की महत्त्वाकांक्षा भी संसार में भारी विपत्ति उत्पन्न करने वाली सिद्ध होती है। पद, सत्ता और अधिकार के लोभ में उतने ही अनर्थ होते हैं जितने धन-लिप्सा से होते हैं। संस्थाओं के पदाधिकारी बनने के लिए, स्वयं श्रेय-लाभ करने के लिए कितने ही व्यक्ति बुरी तरह लड़ते हैं, गुटबंदी करते हैं और संस्था तथा आदर्श को भारी क्षति पहुँचाते हैं। संस्थाओं में भीतरी गुटबंदी का कारण व्यक्तियों की श्रेय आकांक्षा ही रहती है। सच बात यह है कि बिना पदाधिकारी बने कोई भी व्यक्ति किसी संस्था की अधिक ठोस सेवा कर सकता है, पर लोगों को सेवा की नहीं, प्रतिष्ठा की भूख रहती है, फलस्वरूप सार्वजनिक संगठनों को कलह का अखाड़ा बनाते और दुर्गतिग्रस्त होते आएदिन देखा जाता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

थोड़ा त्याग करके बहुत यश लूटने की लिप्सा बहुत लोगों में देखी जाती है। अखबारों में नाम और फोटो छपाने के लोभ में कई लोग सत्कर्मों का बहाना करते रहते हैं। यश मिलने की शर्त पर ही थोड़ी उदारता दिखाने वाले लोग बहुत होते हैं। कितने ही लोग इसके लिए बड़ी-बड़ी प्रवंचनाएँ करते हैं, वे अपने साथी-सहयोगियों के साथ विश्वासघात करने में भी नहीं चूकते। ठाठ-बाट, फैशन, सजावट में भी यही महत्त्वाकांक्षा काम करती है कि हमें बड़ा आदमी और अमीर समझा जाए। इसी उद्देश्य से लोग निरर्थक और खरचीला आडंबर बनाए रहते और उसके भार से दबे हुए भारी कठिनाई एवं चिंता सहन करते रहते हैं। भौतिक महत्त्वाकांक्षाएँ मनुष्य के लिए सदा ही विपत्ति साबित होती रही हैं। जो उन्हें जिस हद तक छोड़ सके उसे उतना ही बुद्धिमान मानना चाहिए।

महत्त्वाकांक्षाएँ यदि तृष्णा और वासना के लिए लगी हुई हैं तो वे व्यक्ति और समाज के लिए अहितकर ही सिद्ध होंगी। कोई व्यक्ति अधिक धनी बनकर अधिक ऐशोआराम भोगकर अपनी दुष्प्रवृत्तियों को ही भड़का सकता है। उससे अंततः उसका पतन ही होगा। प्रगति और संतोष का एक ही सच्चा माध्यम है, वह है व्यक्तित्व का विकास। सद्गुणों को अपनाकर संयम और सदाचार, सेवा और सद्भावना की अधिकाधिक मात्रा जब अंतःकरण में बढ़ती जाती है तो व्यक्तित्व का विकास होता है। दया, करुणा, त्याग और परमार्थ की भावनाओं को चरितार्थ करने की महत्त्वाकांक्षाएँ ही सच्ची और श्रेयस्कर महत्त्वाकांक्षा कही जा सकती हैं। दैवी संपदाएँ, सत्प्रवृत्तियाँ ही वह आध्यात्मिक विभूतियाँ हैं जिन्हें पाकर मनुष्य स्वयं भी आनंद और संतोष का लाभ करता है और अपने समीपवर्ती समाज को भी सुख-शांति का आनंद देता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जीवन का स्तर ऊँचा उठाने का यह अर्थ गलत है कि भौतिक सुख-सुविधाओं के ऐशोआराम के साधनों को हम बढ़ाते चलें और मनुष्य जन्म की दुर्लभ विभूति को इसी में बरबाद कर दें। जीवन जीने का आदर्श एवं दृष्टिकोण और ऊँचा उठे तो ही यह कहा जा सकेगा कि जीवन स्तर सच्चे अर्थों में ऊपर उठा है। व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं के पागलपन ने दुनिया का अनर्थ ही किया है, पाप और विनाश को ही बढ़ाया है, इन्हें त्यागा जाना चाहिए। महत्त्वाकांक्षाओं का सही अर्थ परमार्थ है। इसमें एक-दूसरे से आगे बढ़ने की प्रतिस्पर्द्धा यदि स्वस्थ रूप से चलती रहे, तो इसमें अपना भी हित-साधन है और समाज का भी।

अपनी महत्त्वाकांक्षाओं का केंद्र बिंदु बदलें

मनुष्य प्रगतिशील प्राणी है, उसकी भावनाएँ स्वभावतः विकासोन्मुख होती हैं। सुखी और समृद्ध बनने की इच्छा-आकांक्षा किसे न होगी? इन्हीं आंतरिक प्रेरणाओं से प्रेरित होकर लोग क्रियाशील बनते हैं और कष्ट-साध्य श्रम एवं साहसपूर्ण प्रयास करके अभीष्ट प्रयोजन पूरे करने के लिए आगे बढ़ते हैं।

उत्कृष्ट और निकृष्ट दोनों ही स्तरों के व्यक्ति अपनी-अपनी मान्यताओं के अनुरूप मार्ग निर्धारित करते हैं और उस पर कदम बढ़ाते हुए गतिशील होते चले जाते हैं। धीरे-धीरे वे अपनी निर्धारित दिशा में काफी प्रगति भी कर लेते हैं। वह प्रगति मनोयोग और श्रम पर निर्भर रहती है। जिसकी जितनी लगन और तत्परता होती है, जो जितना साहस और धैर्य प्रदर्शित करता है, जिसका जितना श्रम होता है, वह उतनी ही गति से अपनी अभीष्ट दिशा में बढ़ता चला जाता है।

अधिकांश लोगों की अभीष्ट आकांक्षा इंद्रिय-सुख भोगने, धन संग्रह करने या दूसरों पर अपना रोब गाँठने की होती है, इसी परिधि में प्रायः सारा मनोयोग लगा रहता है। प्रयत्न का फल तो होना ही चाहिए, होता भी है। कितनेक लोग एक सीमा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

तक उपर्युक्त आकांक्षाओं की पूर्ति भी करते हैं। कई व्यक्ति धनीमानी और शौक-मौज करते हुए देखे भी जाते हैं।

साथ ही यह भी होता है कि बहुत प्रयत्न पर भी परिस्थितिवश बहुत ही स्वल्प उपलब्धियाँ हाथ लग पाती हैं। दिनभर मेहनत करने पर भी परिवार का पेट पालना कठिन पड़ता है। जितना भोगने और जितना संग्रह करने की लालसा रहती है, उसका एक स्वल्प अंश भी हाथ नहीं लग पाता। दूसरों पर अपना शासन अथवा रोब रखने की इच्छा रहते हुए भी, उल्टा अवसर ही हाथ रहता है, औरों के प्रभाव एवं दबाव में रहते-रहते जीवन का अधिकांश भाग व्यतीत हो जाता है। इच्छा करना ही पर्याप्त नहीं होता, उसकी पूर्ति के लिए उपयुक्त साहस, श्रम, योग्यता, प्रतिभा, अवसर आदि अनेक अन्य साधनों की भी आवश्यकता रहती है, वे सभी उपयुक्त मात्रा में जुटाए जा सकें तो सफलता का पथ प्रशस्त होता है, अन्यथा असफलता का ही मुँह देखना पड़ता है। आकांक्षा की तुलना में जो नगण्य-सी सफलता मिली उसी से मन मारकर काम चलाना पड़ता है।

आकांक्षा के अनुरूप परिस्थिति न मिलने से असंतोष एवं विक्षोभ रहना स्वाभाविक है। आज अधिकांश व्यक्ति ऐसे ही असंतुष्ट एवं क्षुब्ध दिखाई पड़ते हैं। वे अपने को असफल एवं अभागा मानते हुए, जिस-तिस पर दोषारोपण करते हुए, किसी प्रकार मौत के दिन पूरे करते हैं। जिन्हें कुछ सफलताएँ मिली भी हैं, वे उनकी आकांक्षाओं की तुलना में बहुत स्वल्प होती हैं। दूसरों की दृष्टि में सुखी-संपन्न दीखते हुए भी वे अपनी दृष्टि में अभावग्रस्त ही बने रहते हैं। इस प्रकार सफल और असफल कहे जाने वाले दोनों ही वर्ग के लोग अपने-आप में दीन-दरिद्र ही होते हैं। कोई विरला ही यह अनुभव करता होगा कि हम संतुष्ट हैं, सफल हैं और जीवन की सार्थकता पर गर्व अनुभव कर रहे हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सीमित अर्थ साधनों से गुजर हो सकती है, मर्यादित इंद्रिय भोगों से काम चल सकता है और सादगी से भी सम्मान मिल सकता है, तब फिर इन भौतिक आकांक्षाओं को लक्ष्य बनाने से क्या प्रयोजन? मनुष्य की सीमित शक्ति, सीमित भौतिक लाभ ही कमा सकती है और वे निश्चय ही बढ़ी-चढ़ी आकांक्षाओं की तुलना में स्वल्प ही बने रहेंगे। ऐसी असंतुष्ट जिंदगी जीने से क्या लाभ?

भूल का निराकरण जीवनोद्देश्य को पुनः निर्धारित करके करना चाहिए। हमें अपने व्यक्तित्व के विकास को वास्तविक लाभ मानना चाहिए। गुण-कर्म-स्वभाव की उत्कृष्टता में जो आत्म-संतोष एवं आत्मगौरव प्राप्त होता है, उसे इंद्रिय भोगों से बढ़-चढ़कर मानना चाहिए। अपनी प्रतिभा, सम्मति या सामर्थ्य से किसी को चमत्कृत-आतंकित करने की अपेक्षा यह अच्छा है कि अपनी सज्जनता एवं शालीनता द्वारा दूसरों के हृदय में अपने लिए श्रद्धा का बीजांकुर उगाया जाए।

किसी की वास्तविक प्रगति उसकी सज्जनता एवं आंतरिक महानता के आधार पर ही नापी जा सकती है। जिसका व्यक्तित्व बड़ा है, वस्तुतः वही बड़ा आदमी है। बड़प्पन स्वार्थों की संकीर्णता से बाहर निकलकर परमार्थ की विशालता अपनाने में है। बड़े आदमी जो सोचते और करते हैं, उसमें उनके सीमित संकीर्ण स्वार्थों की प्रधानता नहीं होती, वरन वे विश्वमानव के सुख और शांति को प्रधानता देते हैं और उसके लिए जितना बन पड़ता है त्याग और प्रयत्न भी करते हैं।

सीमित शक्तियों को जिस दिशा में लगा दिया जाए, उसी को प्रधानता मिलती है। यदि भोग और लोभ में ही मन लगा रहे तो महानता की दिशा में कुछ अधिक कर सकना संभव ही न होगा। सीमित शक्तियाँ, भौतिक प्रलोभनों को पूर्ण करने में ही कम पड़ेंगी, फिर परमार्थ के लिए न समय बचेगा, न मन और न धन। मन का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रुचि केंद्र बदले, जीवनोद्‌देश्य बदले और महान व्यक्तित्व विकसित करने की आकांक्षा जगे, तो स्वभावतः लौकिक आकांक्षाएँ घटाने की आवश्यकता अनुभव होगी। जब थोड़े-से गुजर हो सकती है, तो बड़ा प्रपंच किस लिए जोड़ा जाए? जो इस तरह सोच सकेगा, वही अपना मनोयोग महानता की उपलब्धि के लिए कुछ ठोस प्रयत्न करने में लगा सकेगा। जब तक मनोभूमि में इस तरह का परिवर्तन न हो, तब तक पुण्य कर्म तो एक प्रदर्शन जैसे उथले और अधूरे ही बने रहेंगे।

सच्ची प्रगति का, जीवन की सार्थकता का प्रयोजन पूरा करने के लिए यह आवश्यक है कि हम अपना लक्ष्य बदलें। भौतिक प्रगति की आकांक्षा सीमित एवं संयमित करते हुए अपना मनोयोग आदर्शवादिता एवं उत्कृष्टता की अभिवृद्धि में लगाएँ। हमारी महत्त्वाकांक्षाओं का केंद्र बिंदु भौतिक प्रगति नहीं, आत्मिक प्रगति होना चाहिए तभी कर्मयोग की सार्थकता है।

अनुपयुक्त आकांक्षाएँ और उनका असंतोष

असंतोष जहाँ मानसिक दरिद्रता का चिह्न है, वहाँ एक मानसिक संताप भी है जो मनुष्य को निरंतर गीली लकड़ी की तरह कष्ट के साथ जलाया करता है। असंतोष की उत्पत्ति अभाव भावना से होती है। जो अभाव अनुभव किया करता है, वह स्वाभाविक है कि अपने आप को गरीब समझे। उसे न होते हुए भी दूसरों के पास अपने से अधिक संपत्ति तथा सुख-साधन दीखते हैं। जिसके फलस्वरूप उसे ईर्ष्या तथा दीनता का भी भागी बनना पड़ता है। इस विकृति से मनुष्य का मानसिक पतन हो जाता है।

असंतोष एक मानसिक संताप तो ही है, असंतुष्ट व्यक्ति कभी प्रसन्न नहीं रह पाता। खिन्न रहना उसका स्वभाव बन जाया करता है। वह हर समय अपने अंदर रोष, क्षोभ तथा तनाव का अनुभव किया करता है। खिन्नता हर प्रकार के शोक-संतापों की जड़ है। इसको आश्रय देते ही संपूर्ण जीवन दुःखों का भंडार बन जाता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

खिन्नता असंतुष्ट मन की ही अभिव्यक्ति है। असंतोष रखने से कुढ़न, कुंठा एवं विषाद के सिवाय कुछ भी तो हाथ नहीं लगता। मनुष्य का हित इसी में है कि वह असंतोष को पास न फटकने दे। यह आशा, उत्साह तथा जीवन-तत्त्व का प्रबल शत्रु है। मन ही मन कुढ़ते, जलते और असंतुष्ट रहने से काम करने की दक्षता तथा क्षमता दोनों नष्ट हो जाती हैं। किसी काम करने को जी नहीं चाहता और यदि कोई काम किया भी जाता है या करना पड़ता है तो उसकी बेगार ही टलती है। वह कुशलता नहीं आ पाती जो किसी काम की शोभा एवं सफलता कही जाती है। जीवन को सफल एवं शुभ बनाने के लिए असंतोष का परित्याग बहुत आवश्यक है।

आज के इस संघर्षपूर्ण जीवन में असंतोष के बहुत-से कारण बढ़ गए हैं। किंतु मुख्य कारण प्रतियोगिता की प्रवृत्ति है। यों तो प्रतियोगिता की भावना बुरी चीज नहीं है। प्रतियोगिता अथवा प्रतिस्पर्द्धा मनुष्य को आगे बढ़ने में सहायक होती है, प्रेरणा देती है। मनुष्य यह सोचकर, कि मैं किसी से पीछे न रह जाऊँ, आगे बढ़ने, उन्नति और विकास करने के लिए जी-जान से जुट जाता है। वह किसी से पीछे न रहने के लिए हर संभव उपाय करता है।

किंतु यही प्रेरणाप्रद गुण तब दोष बन जाता है, जब अनावश्यक प्रतियोगिता की स्पर्द्धा पाल ली जाती है। उन वस्तुओं को पाने अथवा वह जीवनपद्धति अपनाने की हिर्स, जिसकी न तो आवश्यकता और न अपने अनुकूल ही है, ऐसी स्पर्द्धा जिससे असंतोष एवं अशांति के सिवाय कुछ लाभ नहीं होता। आज अधिकतर लोग इसी प्रकार फैशन, प्रदर्शन, विलास वस्तुओं तथा खरचीले जीवन की स्पर्द्धा में ही लग गए हैं। इस माने में सुख-सुविधा संबंधी आज के वैज्ञानिक आविष्कार चपल बुद्धि वाले लोगों के लिए काफी अहितकर सिद्ध होते हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

यदि यही स्पर्द्धा, मितव्यय तथा सादा जिंदगी अपनाने, अनावश्यकताओं को पास न आने देने जैसे गुणों के संबंध में रखी जाएँ, तो जहाँ जीवन में सुख, संतोष अथवा शांति का अभाव ही अभाव दिखलाई देता है, वहाँ फिर इनकी कमी न रहे। महापुरुषों ने सादा जीवन उच्च विचार का दर्शन जनता के सामने कुछ यों ही नहीं रख दिया है। इसमें कुछ हितकर तत्त्व भी सन्निहित हैं और वह तत्त्व यही तो हैं कि इस जीवन दर्शन का अपनाने वाला कभी अभाव असंतोष की भावना से पीड़ित नहीं होता।

असंतोष उत्पन्न करने में अनावश्यक, अनुचित अथवा अयोग्य आकांक्षाओं का बहुत हाथ रहता है। यदि मनुष्य इनसे पीछा छुड़ा सके तो असंतोष स्वयं ही उसे छोड़कर चला जाए और जीवन में सर्वत्र सुख-शांति ही दिखलाई देने लगे। किंतु खेद है कि मनुष्य इनके माया जाल में पड़कर पथभ्रष्ट हो जाता है और वह ही सब कुछ करता रहता है जो नहीं करना चाहिए और जो करना चाहिए उसकी ओर ध्यान नहीं देता। सुख-संतोष के लिए करना तो यह मुनासिब है कि अयोग्य अथवा अनावश्यक आकांक्षाओं को खोज-खोजकर निकाल फेंके, किंतु करता यह है कि उनकी तुष्टि के लिए मरता-खपता हुआ उन्हें पालता, बढ़ाता रहता है।

आकांक्षाओं के महत्त्व से इनकार नहीं किया जा सकता। उनका जीवन में होना जरूरी है और कल्पनाशील होने से स्वाभाविक भी है। यदि मनुष्य के हृदय में आकांक्षाओं का उदय होना सर्वथा स्थगित हो जाए तो जल्दी ही संसार की गतिशीलता, उन्नति एवं विकासशीलता का भाव ही अस्त हो जाए। आज संसार का जो विकसित एवं अग्रसर स्वरूप दिखाई देता है, वह बहुत-से व्यक्तियों की आकांक्षा का ही तो परिणाम है। वैज्ञानिक, कवि, कलाकार, शिल्पी आदि जो भी संसार के संराधक माने जाते हैं, इनकी आकांक्षा के फलस्वरूप ही तो यह सारा, साहित्य-संधान, सृजन एवं सौंदर्य दिखलाई देता है, जो इस बात की गवाही देता है कि मनुष्य जाति

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

दिन-दिन अधिकाधिक उज्ज्वल भविष्य की ओर बढ़ती जा रही है। किसी वैज्ञानिक के मस्तिष्क में जब यह प्रश्न उठता है कि यह क्या है, कैसा है और कैसे चल रहा है, तब उसे जानने, उसकी खोज करने के लिए उसके मन में एक अभिलाषा जाग उठती है, जिसकी प्रेरणा से वह जीवन को कर्तव्यों में नियोजित कर संसार की सेवा में रहस्यों तथा आश्चर्यों के द्वार खोल देता है।

इसी प्रकार कवि के हृदय में जब भावनाओं का उद्वेग होता है, तब उन्हें व्यक्त करने के लिए वह आकांक्षा से प्रेरित हो उठता है जिसका परिपाक साहित्य के रूप में समाज के सम्मुख आता है। विज्ञान, साहित्य, कला, अर्थ, सृजन, दर्शन, धर्म अथवा राजनीति किसी भी क्षेत्र में जो कुछ अस्तित्वमय दृष्टिगोचर होता है, ये सब मनुष्यों की आकांक्षाओं का ही परिणाम, उनकी सृजनेच्छा की ही अभिव्यक्ति है, उसी का मूर्तिमान स्वरूप है। आकांक्षा के अभाव में सृजन असंभव है।

जो आकांक्षा मनुष्य को महान सृजेता बना देती है, वही उसे अशांति एवं असंतोष में भी चलने के लिए डाल देती है। एक ही प्रेरणा के इन विपरीत परिणामों का एक कारण है, वह है आकांक्षाओं का स्वरूप। महत् आकांक्षाएँ जहाँ मनुष्य को महान बनाकर सुख-संतोष के स्वर्ग का स्वामी बना देती हैं, वहाँ निकृष्ट एवं विकृत आकांक्षाएँ उसे दुःख दारिद्र्य, अशांति एवं असंतोष के नरक में ढकेल देती हैं।

भोग, विलास, शान-शौकत, प्रदर्शन-प्रमाद, हिर्स तथा हवस आदि की अयोग्यता से दूषित आकांक्षाएँ विकृत तथा निकृष्ट मानी गई हैं, और जिनमें संसार का हित, उच्च कर्तृत्व, शिव-संकल्प तथा निःस्वार्थ भावना की प्रेरणा रहती है, उनको महत् तथा महनीय कहा गया है।

महत् आकांक्षाओं की प्रेरणा पर चलने वाले व्यक्ति अपनी जीवनपद्धति में उन चीजों को स्थान नहीं देते, जो उनको अपने से

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बाँधकर रख सकती है। उनका सारा समय, सारा श्रम तथा जीवन-तत्त्व अपना माँगलिक उद्देश्य पूरा करने में ही लगा रहता है। उनको यह अवकाश कहाँ रहता है कि वे अपने लिए, अपनी इंद्रियों के लिए भोग-विलास की सामग्री इकट्ठी करते फिरें। उन्हें इतनी छूट कहाँ होती है कि वे जिस शरीर, जिस बुद्धि और जिस शक्ति के बलबूते पर महानता के उन्नत शिखर पर चढ़ने का संकल्प कर चुके हैं, उसे प्रमाद की उपासना में नष्ट कर डालें। शारीरिक उपादानों के साथ जो जीवन मनुष्य को मिला है उसको चाहे निस्सार मार्गों में नष्ट कर डालिए या चाहे तो उसका समुचित दिशा में सदुपयोग करके परमार्थ के शिलाधार पर अपना स्थायित्व स्थापित कर जाइए, वे इस द्विविध गति से सर्वथा परिचित होते हैं। उन्हें जरा भी दुर्बुद्धि नहीं होती कि जिस मानव जीवन से लोक एवं परलोक दोनों पर विजय प्राप्त की जा सकती है, उसे नारकीय स्थिति में अथवा स्वयं नरक बनाकर नष्ट कर डाला जाए। इस प्रकार के उच्च विचार तथा उच्च उद्देश्य रखने वाले महापुरुषों को अशांति अथवा असंतोष सता सकता है—यह संभव नहीं। जो संसार से आवश्यकता भर लेकर उसका भंडार भर देने की भावना रखते हों, ऐसे उदार एवं उच्चमना व्यक्तियों के समीप दुःख, दारिद्र्य अथवा लोभ-लिप्सा की छाया भी आने का साहस नहीं करेगी।

जिसके पास इंद्रियों और अहं की तृप्ति के सिवाय कोई अभिलाषा ही नहीं है, स्वार्थ एवं सुख-लिप्सा के आगे कोई विचार ही नहीं है उसका सुखी तथा संतुष्ट रहना किस प्रकार संभव हो सकता है? स्वार्थपूर्ण एक आकांक्षा की पूर्ति चार नई आकांक्षाओं को जन्म दे देती है और जब तक उनमें से एक-दो की पूर्ति का जोड़-तोड़ किया जाता है कि तब तक अनेक और खड़ी हो जाती है। भोगमूलक इच्छाओं का न कभी अंत होता है और न उनकी स्थायी तृप्ति ही। ऐसा कदापि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

संभव नहीं कि आज यदि सिनेमा देखने अथवा किसी वस्तु के उपभोग की इच्छापूर्ति कर दी गई तो वह अब भविष्य में फिर नहीं उठेगी। इच्छाओं का तो यह स्वभाव ही होता है कि ज्यों-ज्यों उनकी पूर्ति की जाती है, त्यों-त्यों वे अधिक जल्दी और अधिकारपूर्वक उठकर खड़ी होने लगती हैं। इस प्रकार इनके जाल में फँसा हुआ व्यक्ति कभी भी सुखी अथवा संतुष्ट नहीं हो पाता। इच्छाओं की तृष्णा एवं बाहुल्य के अनुपात में साधन की सर्वदा कमी ही रहती है।

यदि एक बार यह भी कल्पना कर ली जाए कि किसी व्यक्ति के पास संसार के सारे साधन, सारी संपत्तियाँ और सारे उपभोग, उपकरण आ जाते हैं और उसकी कितनी और किन्हीं भी इच्छाओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त होते हैं, तब भी तो भोगों की अधिकता के कारण या तो वह स्वयं शिथिल हो जाएगा अथवा उसे जीवन तथा संसार से इस अतिशयता के कारण अरुचि हो जाएगी। उसके लिए न तो कोई नवीनता रहेगी और न आकर्षण। तब इस प्रकार का निस्सार, निर्जीव तथा निरुद्देश्य जीवन उसके लिए कितना असह्य बन जाएगा, इसका अनुमान लगा सकना संभव नहीं।

आकांक्षाएँ, स्वाभाविक हैं, ठीक हैं, तथापि जीवन में सुख-संतोष की रक्षा के लिए उन्हीं आकांक्षाओं को प्रश्रय देना चाहिए जो महान एवं उपकारी हों। स्वार्थपूर्ण निकृष्ट आकांक्षाएँ, सुख-संतोष की प्रबल शत्रु हैं। यदि परिस्थिति अथवा क्षमताएँ किन्हीं महत्त्वाकांक्षाओं के योग्य नहीं है, तब भी तो अयोग्य एवं अनावश्यक आकांक्षाओं से पीछा छुड़ाकर सुख-शांतिपूर्वक सादा एवं सरल जीवनयापन किया ही जा सकता है। यदि महत्त्वाकांक्षाओं को धारण नहीं किया जा सकता तो ऐसी आकांक्षाओं को छोड़ा तो जा ही सकता है जिनकी तुष्टि संभव नहीं हो सकती।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पुरुषार्थ धर्म है, कामनाएँ बंधन

पूर्व जन्मों के प्रारब्धवश इस जीवन में जो काम, संयोग और परिस्थितियाँ मनुष्य को उपलब्ध हों, उनमें संतोष रखते हुए आगे की उन्नति के लिए उद्योग करना धर्म है। शरीर जिस साधना में तत्पर हो उसी को पूरा करना मनुष्य का कर्तव्य है। अपनी परिस्थितियों से बहुत अधिक की कामना करना ही मनुष्य की दुःखद स्थिति का कारण है। अनियंत्रित मनोरथ का त्याग करना ही अपने पूर्व-प्रारब्ध के लिए संतोष करने का अच्छा उपाय है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि आगे के लिए अधिक सुंदर परिस्थितियाँ प्राप्त करने की चेष्टा न करें। श्रेय की इच्छा करने वाले मनुष्य को न तो निष्क्रिय रहना चाहिए और न ही विविध कामनाएँ करनी चाहिए।

सेना में सिपाही की योग्यता के अनुसार कमांडर उसे कोई एक काम सौंप देता है। योग्यता बढ़ा लेने पर कमांडर क्रमशः उसे उच्च पद देता चला जाता है। किंतु सिपाही की स्थिति में रहते हुए सेनानायक के पद की आकांक्षा करने से न तो वह सिपाही के कर्तव्यों का भली भाँति पालन कर सकेगा और न ही सेनानायक का पद ही मिल सकेगा। इससे दुःख तो मिलेगा ही दुष्परिणाम भी उपस्थित हो सकते हैं।

एक ही परिस्थिति में यदि दत्तचित्त से लगे रहें, तो उसमें भी आशाजनक परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। कभी इधर, कभी उधर की दौड़-भाग करना मनुष्य की अस्थिरता का चिह्न है। जो तरह-तरह की कामनाएँ मन में करते रहते हैं उन्हें ही यह परेशानी भुगतनी पड़ती है। अधिक-से-अधिक धन, अधिक सुख-सुविधाओं की लिप्सा ही मनुष्य को कमजोर और दुखी बनाती है, क्योंकि यदि उन्नति के लिए उचित योग्यता, शक्ति और परिस्थितियाँ न हुईं तो आकांक्षाओं की कभी पूर्ति नहीं हो सकेगी और उससे दुखी, अधीर, चिंतित और निराश ही बने रहेंगे।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

दूसरों को अधिक सुखी और संपन्न देखकर ईर्ष्या करना और परमात्मा को दोषी ठहराना, मनुष्य की बहुत बड़ी भूल है। ऐसा वह इसलिए कहता है कि उसे केवल अपने अधिकार प्रिय हैं। पूर्व जीवन में उसने क्या किया है इसकी भी तो कुछ संगत होनी चाहिए। किसी को कम किसी को अधिक देने का अन्याय भला परमात्मा क्यों करेगा? मनुष्य अपने ही कर्मों का लाभ या घाटा उठाता है। एक रुपया देकर किसी को भला पाँच रुपये की कीमत की भी कोई वस्तु मिली है? योग्यता से अधिक दे देने की भूल भला परमात्मा क्यों करेगा? ऐसा यदि हो तो उसे लोग अन्यायी ही तो कहेंगे। यही क्या कुछ कम उपकार है जो उसने आपको मनुष्य जीवन जैसा अलभ्य अवसर प्रदान किया है। आप चाहें तो अपने जीवन का मूल्य बढ़ा सकते हैं और कर्तव्यपालन तथा अन्य सद्गुणों द्वारा आगे के लिए शुभ परिस्थितियाँ, अच्छे परिणाम और मंगल संयोग प्राप्त कर सकते हैं।

काम बदलने की चिंता आप मत कीजिए। यह एक प्रकार की 'कर्म-हिंसा' है। इसी में पुरुषार्थ करते रहिए। भली परिस्थितियों के संयोग ईश्वरीय प्रेरणा से स्वतः प्राप्त हो जाते हैं, उसके लिए कोई जोड़-तोड़ नहीं करनी पड़ती। आप क्रियाशील रहिए, उद्योग करते जाइए, उन्नति के अवसर आपके जीवन में जरूर आएँगे। पर कदाचित आपके प्रारब्ध कुछ इस तरह के नहीं हैं कि आप अधिक उन्नति कर सकें तो खीझ और उत्तेजना से प्राप्त परिस्थिति का संतोष भी आपको नहीं मिल सकेगा। इसीलिए फलप्राप्ति की कामना को गीताकार ने दोष बताया है और मनुष्य को निरंतर कर्म करने की प्रेरणा दी है।

जाग्रत मनुष्य कभी क्रियाहीन नहीं रहेगा। प्राप्त परिस्थितियों में जो लोग प्रसन्नतापूर्वक लगे रहते हैं जीवन का सुख उन्हीं को मिलता है। सुख किसी वस्तु या परिस्थिति विशेष में नहीं है। वह एक मानसिक भाव है, जो प्रत्येक स्थिति में प्रसन्न रहने से मिल

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जाता है। छोटी-छोटी बातों में दुखी रहने का तात्पर्य यह है कि आप परमात्मा के विधान की अवहेलना करना चाहते हैं। यों न सोचिए वरन अपने से दयनीय स्थिति के व्यक्तियों से अपनी तुलना कीजिए और पूर्ण प्रसन्न रहने का प्रयत्न कीजिए। पुरुषार्थ करने की आप में शक्ति होगी तो अच्छे परिणाम भी मिल जाएँगे, पर परिणाम की ओर अपना ध्यान बनाए रखकर प्राप्त आनंद को क्यों छोड़ते हैं? जाग्रत पुरुष इसीलिए प्रत्येक परिस्थिति में सुख का अनुभव करते हैं और तप, त्याग, परोपकार द्वारा अपनी भावनाओं को उत्कृष्ट बनाकर आगे के लिए शुभ्र फल संचय कर लेते हैं। इस जीवन की बढ़ी हुई योग्यता ही तो अन्य जन्मों के संस्कार रूप में दिखाई देती है।

दूसरी अवस्था में मनुष्य की कर्म-भावना का विश्लेषण आता है। पुरुषार्थ अपनी शारीरिक या पारिवारिक आवश्यकताएँ पूर्ण कर लेने को ही नहीं कहते। मनुष्य इस संसार में रहकर यहाँ के हवा, पानी, धरती, प्रकाश आदि का स्वच्छंद उपभोग करता है, इस तरह वह धरतीमाता का भी ऋणी है। जो उपकार प्रकृति और परमात्मा ने उस पर किए हैं उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का सही तरीका यह है कि मनुष्य भी प्राणिमात्र की सेवा और उपकार भावना से काम करे। स्वार्थों तक ही सीमित रहने से पशु और मनुष्य में भेद भी कुछ नहीं रह जाता। परमात्मा का श्रेष्ठ पुत्र कहलाने का सौभाग्य तो तब मिलता है, जब निष्काम भावना से सृष्टि के अन्य प्राणियों के साथ समता, न्याय और कर्तव्यपालन की उदारता बनी रहे।

बच्चों का पालन-पोषण, व्यापार, देश-रक्षा, मेहनत-मजदूरी, ज्ञान-संपादन और जन-मार्गदर्शन, इन कर्मों में से ऊँच-नीच, छोटे-बड़े, कम महत्त्वपूर्ण या अधिक महत्त्वपूर्ण होने की एक ही कसौटी है और वह है—मनुष्य की भावना। स्वार्थ सम्मुख रखकर परोपकार दिखाई देने वाले कर्म भी फलदायक नहीं होते।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

निष्काम भाव से की हुई बच्चों की सेवा और प्राणिमात्र के हित के लिए किया गया उपदेश दोनों का ही फल समान है। क्योंकि उनकी भावना एक ही है। कर्म की विविधता में उसका मूल्य भावना स्तर पर आँका जाता है। किसी व्यक्ति की आप चोरों से रक्षा करें और बदले में आधा धन माँगने लगें तो आपकी यह सेवा प्रभावशील न रहेगी। कर्म का महत्त्व फल त्याग से है। सच्चा सुख, संतोष तो तब मिलता है जब मनुष्य अपने आप को परमात्मा का एक उपकरण मानकर विशुद्ध त्याग-भावना से परोपकार करता है। जीवन-मुक्त का लक्षण फल-प्राप्ति की कामना का परित्याग ही बताया गया है।

मुक्ति के लिए मनुष्य को तरह-तरह के साधन ढूँढ़ने की आवश्यकता नहीं है। वेश बदलना, या काम छोड़ देना भी बुद्धि-संगत नहीं है। ऐसा करके मनुष्य निष्क्रिय हो नहीं सकता। खाने-पीने, चलने-उठने-बैठने के सामान्य कर्म तो मनुष्य को प्रत्येक अवस्था में करने ही पड़ते हैं। कर्म करते हुए फलप्राप्ति की वासना अथवा मनोरथ का परित्याग होना चाहिए। क्योंकि आकांक्षाएँ स्वार्थपरता की जननी हैं। इस तरह से लोकोपकारी कर्तव्य कर्मों का संपादन नहीं हो सकता।

प्रकृति हमें नित्य, निरंतर निष्काम कर्म करने की शिक्षा देती रहती है। सूर्य-चंद्रमा प्रकाश देते हैं। बदले में कुछ प्राप्त करने की उनकी भावना नहीं होती। वृक्ष अपने फलों का उपभोग अपने लिए नहीं करते। पहाड़ लोगों को असीम खनिज देते हैं, नदियाँ शीतल जल से लोगों को तृप्त करती रहती हैं। इन्हें कभी किसी तरह की कोई भी कामना नहीं होती। लोक-कल्याण के लिए निरंतर एक-सी स्थिति में चलते रहना ही उनका धर्म है। मनुष्य की दशा भी इसी तरह की होनी चाहिए। सुख कर्म से है, फ़ल तो उसके विनाश का प्रारंभ मात्र है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

मुक्ति एक लक्ष्य है जो निरंतर चलते रहने से प्राप्त होता है। उच्च स्थिति प्राप्त करने के लिए मनुष्य छलांग से काम नहीं ले सकता। बीच की साधनावस्था से होकर आगे बढ़ना ही स्वाभाविक नियम है। अकुलाहट, तीव्रता या चित्त में विकार आना मनोरथ पूरा न होने का लक्षण है।

आत्मकल्याण के विविध साधनों की प्रत्येक स्थिति में हर मनुष्य के लिए सरल और सुलभ साधना—निष्काम कर्म की भावना ही है। कठोर साधनों की अपेक्षा यह मार्ग अधिक सरल है जिसे गीता में "निष्काम कर्मयोग" के नाम से प्रतिपादित किया गया है। कर्तव्य भावना का ज्ञान और मनोरथ के परित्याग से परमात्मा की स्थिति का बोध हो जाता है और मनुष्य जन्म-मरण के भव-बंधन से मुक्ति पा लेता है। यही मनुष्य जीवन का लक्ष्य है। इसके लिए निष्काम कर्म से बढ़कर और कोई दूसरा उपाय श्रेष्ठ नहीं है।

निराशा से बचने का उपाय—कम कामनाएँ

"मनुष्य कुछ भी नहीं है, वह एक चलता-फिरता, धूल-पिंड है, उसकी शक्तियाँ सीमित हैं। वह नियति के हाथ की कठपुतली है, भाग्य का खिलौना और हर समय काल का कवल है।"

इस प्रकार के निषेधात्मक एवं निराशापूर्ण विचार रखने वाले निस्संदेह धूल-पिंड, भाग्य की कठपुतली और जीवित अवस्था में भी मृतक ही होते हैं। जो कायर और निराशावादी है, वह अभागा ही है। जहाँ संसार में लोग कंधा से कंधा भिड़ाकर उन्नति और विकास के लिए निरंतर संघर्ष कर रहे हैं, वहाँ निराशावादी विषाद का रोग पाले हुए दुनिया के एक कोने में पड़े हुए मक्खियाँ मारा करते हैं। समाज की निरपेक्षता तथा संसार की नश्वरता को कोसा करते हैं। मनुष्य की इस दशा को दुर्भाग्य नहीं तो और क्या कहा जाएगा।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

मनुष्य योनि में आकर जिसने जीवन में कोई विशेष कार्य नहीं किया, किसी के कुछ काम नहीं आया, उसने मनुष्य शरीर देने वाले उस परमात्मा को लज्जित कर दिया। अपने में अनंत शक्ति होने पर भी दीनतापूर्ण जीवन बिताना, दयनीयता को अंगीकार करना अपने साथ घोर अन्याय करना है। मनुष्य जीवन रोने-कलपने के लिए नहीं, हँसते-मुस्कराते हुए अपना तथा दूसरों का उत्कर्ष करने के लिए है।

मनुष्य जीवन के लिए निराशा अस्वाभाविक है। यह एक प्रकार का मानसिक रोग है, जो मनुष्य को हीन विचारों, जीवन में आई कठिनाइयों और असफलता के कारण लग जाता है। इच्छाओं की पूर्ति न होने, मनचाही परिस्थितियाँ न पाने से मनुष्य में संसार के प्रति, अपने प्रति तथा समाज के प्रति घृणा हो जाती है। बार-बार असफलता पाने से मनुष्य का साहस टूट जाता है और वह निराश होकर बैठ जाता है। जीवन के प्रति उसका कोई अनुराग नहीं रह जाता। निराशाग्रस्त मनुष्य दिन-रात अपनी इच्छाओं, कामनाओं और वांछनाओं की अपूर्ति पर आँसू बहाता हुआ, उनका काल्पनिक चिंतन करता हुआ तड़पा करता है। एक कुढ़न, एक त्रस्तता, एक वेदना हर समय उसके मनोमंदिर को जलाया करती है। बार-बार असफलता पाने से मनुष्य का अपने प्रति एक क्षुद्र भाव बन जाता है। उसे यह विश्वास हो जाता है कि वह किसी काम के योग्य नहीं है। उसमें कोई क्षमता नहीं है, जिसके बल पर वह अपने स्वप्नों को पूरा कर सके, सुख और शांति पा सके।

साहस रहित मनुष्य का वैराग्य, असफलता जन्य विरक्ति और निराशा से उपजी हुई आत्मग्लानि बड़ी भयंकर होती है। इससे मनुष्य की अंतरात्मा कुचल जाती है।

ऐसे असात्त्विक वैराग्य का मुख्य कारण मनुष्य की मनोवांछाओं की असफलता ही है जिसके कारण अपने से तथा संसार से घृणा हो जाती है। प्रतिक्रियास्वरूप संसार भी उससे

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

नफ़रत करने लगता है। ऐसी स्थिति में मनुष्य की मनोदशा उस भयानक बिंदु के पास तक पहुँच जाती है, जहाँ पर वह त्रास से त्राण पाने के लिए आत्महत्या जैसे जघन्य पाप की ओर तक प्रवृत्त होने लगता है।

जो भी अधिक इच्छाएँ रखेगा, बहुत प्रकार की कामनाएँ करेगा, उसका ऐसी स्थिति में पहुँच जाना स्वाभाविक ही है। किसी मनुष्य की सभी मनोकामनाएँ सदा पूरी नहीं होतीं। वह हो भी नहीं सकतीं। मनुष्य की वांछाएँ इतनी अधिक होती हैं कि यदि संसार के समस्त साधन लगा दिए जाएँ, तब भी वे पूरी न होंगी।

ऐसा नहीं है कि मनुष्यों की इच्छाएँ पूर्ण नहीं होती हों, किंतु इच्छाएँ उसी मनुष्य की पूर्ण होती हैं, जो उनको सीमित एवं नियंत्रित रखता है। जिसकी आकांक्षाएँ अनियंत्रित हैं, जिनका कोई ओर-छोर ही नहीं है, उनकी कोई महत्त्वाकांक्षा पूर्ण होने में संदेह रहता है। बहुधा अनंत आकांक्षाओं वाले व्यक्ति को घोरतम निराशा का ही सामना करना पड़ता है।

इच्छाओं के ऐसे दुष्परिणाम देखकर ही भारतीय मनीषियों ने इच्छाओं को त्याज्य बतलाया है। जिन्होंने अच्छी प्रकार इस सत्य को अनुभव कर लिया था कि जो इच्छाओं के प्रति त्याग भावना नहीं रखता, उसकी इच्छाएँ धीरे-धीरे एक से दो, दो से चार होती हुई शीघ्र ही बढ़ती चली जाती हैं और फिर वे न तो नियंत्रण में आ पाती हैं न पूरी हो पाती हैं। फलस्वरूप मनुष्य को घोर निराशा की स्थिति में पहुँचा देती हैं। अतएव ऋषि-मुनियों ने हृदय को पूर्ण रूप से निष्काम रखने का ही आदेश दिया है।

इस इच्छा त्याग का गलत अर्थ लगाकर लोग यह कह उठते हैं कि जिसमें कोई इच्छा नहीं होगी, वह कोई काम ही न करेगा और यदि एक दिन संसार का हर मनुष्य इच्छा रहित होकर निष्काम हो जाए तो सृष्टि की सारी गतिविधि ही नष्ट हो जाए और यह चौपट हो जाए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इच्छाओं के त्याग का अर्थ यह कदापि नहीं कि मनुष्य प्रगति, विकास, उत्थान और उन्नति की सारी कामनाएँ छोड़कर निष्क्रिय होकर बैठ जाए। इच्छाओं के त्याग का अर्थ—उन इच्छाओं को छोड़ देना है, जो मनुष्य के वास्तविक विकास में काम नहीं आती, बल्कि उलटे उसे पतन की ओर ही ले जाती हैं। जो वस्तुएँ आत्मोन्नति में उपयोगी नहीं, जो परिस्थितियाँ मनुष्य को भुलाकर अपने तक सीमित कर लेती हैं, मनुष्य को उनकी कामना नहीं करनी चाहिए। साथ ही वांछनीय कामनाओं को इतना महत्त्व न दिया जाए कि उनकी अपूर्णता शोक बनकर सारे जीवन को ही आक्रांत कर ले।

मनुष्य का लगाव इच्छाओं से नहीं, बल्कि उनकी पूर्ति के लिए किए जाने वाले कर्म से ही होना चाहिए। इससे कर्म की गति में तीव्रता आएगी। मनुष्य की क्षमताओं में वृद्धि होगी, जिससे मनोवांछित फल पाने में कोई संदेह नहीं रह जाएगा। इसके साथ ही केवल कर्म से लगाव होने पर यदि कोई प्रयत्न असफल हो जाता है तो मनुष्य उससे अधिक उपयुक्त प्रयत्न में लग जाएगा। असफलता उसे प्रभावित नहीं कर पाएगी। इच्छा के प्रति लगाव रहने से प्रयत्न की असफलता पर मनोवांछा पूरी न होने से उसका जी रो उठेगा। वह अपनी कामना के लिए तड़पने और कलपने लगेगा। अपेक्षित फल न पाने से उसे कर्म के प्रति विरक्ति होने लगेगी, प्रयत्नों से घृणा हो जाएगी और तब का अभाव उसको निष्क्रिय बनाकर घोर निराशा की स्थिति में भेज देगा। अस्तु मनुष्य को मनोवांछाएँ प्राप्त करने और निराशा के भयानक अभिशाप से बचने के लिए अपना लगाव इच्छाओं के प्रति नहीं, बल्कि उनके लिए आवश्यक प्रयत्नों के प्रति ही रखना चाहिए।

मनुष्य की वे ही कामनाएँ उपयुक्त कही जा सकती हैं जो उसके विकास में सहायक हों। संपत्ति की कामना तभी उपयुक्त है

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जब वह कोई महान कार्य संपादित करने में काम आए। संपत्ति की कामना इसलिए करना ठीक नहीं कि लोग हमें धनवान समझें, समाज में प्रभाव बढ़े, संसार की हर चीज प्राप्त की जाए, भोगों के साधन संग्रह किए जाएँ। लोग संतान की कामना करते हैं। ठीक है, संतान की कामना स्वाभाविक है, किंतु संतान को केवल इसलिए चाहना कि मैं पुत्रवान समझा जाऊँ, संपत्ति का कोई उत्तराधिकारी हो जाए, बहुत उपयुक्त नहीं। देश को अपने प्रतिनिधि के रूप में एक अच्छा नागरिक देने के लिए संतान की कामना महान एवं उपयुक्त है। लोग जीवन में कीर्ति चाहते हैं, अपनी ख्याति चाहते हैं और उसके लिए न जाने कौन-कौन-से उपाय किया करते हैं। ख्याति इसीलिए चाहना ठीक नहीं कि समाज में प्रभाव बढ़ेगा, उससे हजार प्रकार के काम निकलेंगे, लोग आदर करेंगे, प्रतिष्ठा बढ़ेगी। मनुष्य को कीर्तिकामी होना चाहिए, किंतु यह तभी ठीक होगा कि वह कीर्ति का उपार्जन अपने सत्कर्मों से करे, अन्याय और धूर्तता से नहीं। इस प्रकार की उपयुक्त कामनाएँ रखने वाला व्यक्ति कभी भी उनकी असफलताओं से दुखी नहीं होता और न कभी निराशा की स्थिति में पहुँचता है। अपने व्यक्तिगत सुख-भोग के लिए विषयों की कामना परिणाम में ही नहीं, प्रारंभ में भी दुःखदायी होती है। आत्मविकास और समाज-कल्याण के लिए की गई कामनाएँ आदि एवं अंत दोनों में ही सुखदायी एवं कल्याणकारी रहती हैं। जीवन में निराशा से बचने के लिए मनुष्य को कम-से-कम कामनाएँ रखना ही ठीक है। कामनाओं की अधिकता ही निराशा और पतन का कारण होती है।

कामनाएँ, असंगत न होने पाएँ

गीता में बतलाया गया है कि "कामनाओं से क्रोध का जन्म होता है और क्रोध से बुद्धि नष्ट हो जाती है। बुद्धि के नष्ट होने से मनुष्य मूर्खतापूर्ण अपकर्मों में प्रवृत्त हो जाता है।" "अपकर्म, अशांति और असंतोष के कारण होते हैं। यह क्रम स्पष्ट करता है

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कि अशांति तथा असंतोष के दुःख का मूल कारण कामनाएँ ही होती हैं। यदि कामनाओं से छुट्टी पा ली जाए तो दुःखों से आप ही आप मुक्ति मिल जाए।"

किंतु एक ओर यह भी माना जाता है कि कामनाएँ मानवीय प्रगति का आधार हैं। कामनाओं से ही कर्म प्रेरित होते हैं और कर्म मनुष्य को उन्नति की ओर ले जाते हैं। मनुष्य के मन में यदि कामनाओं का जन्म न हो तो मनुष्य जड़ पदार्थों की तरह निकम्मा हो जाए। पशुओं की तरह अप्रगतिशील बना रहे। सृष्टि के प्रारंभिक काल में मनुष्य भी अन्य पशुओं की तरह ही एक पशु था। पशुओं की प्रवृत्तियों और जीवन स्थिति में जो जड़ता और अप्रगतिशीलता का दोष था, वही मनुष्य की प्रवृत्तियों और जीवन स्थिति में था। पशुओं और मनुष्यों में कोई विशेष अंतर नहीं था।

किंतु ज्यों-ज्यों मनुष्य में चेतना और उसके साथ कामनाओं का जन्म होने लगा, मनुष्य प्रगति करता हुआ आगे बढ़ने लगा और बढ़ता-बढ़ता आज वह इस सुंदर स्थिति में आ गया है। पशु-कामनाओं के अभाव में जहाँ पहले थे, वही आज भी पड़े हुए हैं। उनसे भी यदि मानव प्राणी की तरह कामनाओं की प्रेरणा होती तो वे भी शायद अपनी आदि स्थिति से कुछ-न-कुछ आगे बढ़ लिए होते।

यह सारा संसार कामना के आधार पर ही बना और विकसित हुआ है। बताया गया है कि पहले केवल शून्य के सिवाय और कुछ नहीं था। एकाकी ईश्वर ही उस पूरे शून्य में परिव्याप्त हुआ स्थित था। अपने एकाकीपन से ऊबकर ईश्वर ने संसार की कामना की और वह बनकर तैयार हो गया। उसके अंश मनुष्यों की नित नूतन कामनाएँ उसे सँवारने और विकसित करने लगीं। कामनाओं का मानव जीवन से बहुत बड़ा संबंध है। उनको हेय तथा हानिकर मानने में आपत्ति होती है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

तब आखिर इन विरोधी तथ्यों में सत्य क्या है? अपने स्थान पर ये दोनों तथ्य सत्य तथा मान्य हैं। कामनाओं के आधार पर ही मनुष्य की प्रगति तथा विकास होता है और कामनाएँ ही उसके दु:ख का कारण भी हैं। जो कामनाएँ सृजनात्मक, शुभ और सामाजिक हित की होती हैं, वे तो मानव जीवन के विकास की कारण होती हैं, इसके विपरीत जो कामनाएँ अशुभ, असुंदर और समाज-विरोधी होती हैं, वे एकमात्र दु:ख का कारण बनती हैं।

जिन कामनाओं में केवल अपना स्वार्थ ही समाया रहता है, उनको अशुभ कामनाएँ ही कहना होगा। फिर चाहे वे भोजन, वस्त्र, निवास, उन्नति, विकास और आत्मोद्धार संबंधी ही क्यों न हों। अध्यात्म संबंधी व्यक्तिगत कामनाओं को अशुभ कहने, सुनने में कुछ अटपटा जरूर लग सकता है।

मानिए एक मनुष्य व्यक्तिगत आत्मोद्धार की कामना करता है और उसके लिए प्रयत्नरत होकर गृह-त्याग कर देता है, तो क्या उसकी यह कामना उचित कही जा सकती है? यदि इस कामना को उचित कहा जा सकता है, तो फिर उसके गृह-त्याग से जो संकट परिवार पर आएगा उसका दायित्व किस पर होगा? निश्चय ही इसका दायित्व उस पर ही होगा, जो अपना आवश्यक कर्तव्य छोड़कर व्यक्तिगत उद्धार के लिए चला गया है। कोई भी कामना, कितनी ही ऊँची क्यों न हो, यदि उसकी पूर्ति में किन्हीं ऐसे व्यक्तियों को कष्ट होता है, जिनको नहीं होना चाहिए, तो वे अनुचित हैं, अशुभ हैं। उनका परिणाम दु:ख के सिवाय और कुछ नहीं हो सकता है।

बहुत-सी कामनाएँ ऐसी होती हैं, जो समाज-विरोधी न होने पर भी दु:खदायी होती हैं। वे कामनाएँ होती हैं अपनी स्थिति से परे की कामनाएँ। उदाहरण के लिए किसी ऐसे आदमी को लीजिए जो जीवन में एक उच्च पद पाने की आकांक्षा रखता है। उसकी यह कामना व्यक्तिगत होते हुए भी अनुचित तथा अशुभ नहीं कही जा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सकती। क्योंकि उसकी इस कामना से न तो समाज का विरोध होता है और न इससे किन्हीं ऐसे लोगों को कष्ट होगा, जिन्हें नहीं होना चाहिए। बल्कि ऐसी कामनाओं को तो शुभ ही कहा जाना चाहिए। वह इसलिए कि व्यक्तिगत होने पर भी ये समाज के लिए हितकारी होती हैं। व्यक्ति की उन्नति में ही तो समाज की उन्नति निहित रहती है। व्यक्ति, व्यक्ति के रूप में उन्नति करते जाने पर भी पूरे समाज की ही उन्नति होती चलती है। व्यक्तियों से ही तो समाज बनता है। व्यक्ति की अच्छाई-बुराई से समाज का ही विकास-ह्रास होता है। व्यक्ति समाज का ही एक अंग होता है। जैसा स्वयं बनता है, मानो वैसा ही समाज के बनने में सहायक होता है। अस्तु, व्यक्तिगत ऐसी कामनाओं को बुरा नहीं माना जा सकता है।

तथापि व्यक्तिगत विकास की कामनाएँ भी यदा-कदा अशांति और असंतोष का कारण बन बैठती हैं। ऐसी कामनाएँ, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, वे होती हैं जो अपनी स्थिति के परे की होती हैं। कोई व्यक्ति जीवन में एक ऊँचा पद चाहता है। अच्छा है, ठीक है, बड़ा शुभ है। किंतु क्या उसने इस कामना को पालने से पहले यह देख लिया है कि उसकी आकांक्षा के अनुरूप उसकी स्थिति भी है ? यदि उसने ऐसा नहीं किया है तो निश्चय ही उसकी पोषित कामना उसके लिए अशांति और असंतोष का कारण बनेगी। क्योंकि स्थिति की अनुरूपता के अभाव में उसकी पूर्ति संभव नहीं। अपूर्ण कामनाओं से दुःख होना स्वाभाविक ही है।

जीवन में कोई ऊँचा पद, केवल यों ही कामना मात्र करने से तो मिल ही नहीं जाता। उसके लिए तो विद्या, बुद्धि, योग्यता, शक्ति और अवसर आदि बहुत से साधनों की आवश्यकता पड़ती है। यदि एक बार यह सब साधन भी हों और पुरुषार्थ, प्रयत्न तथा कर्मठता की कमी रह गई, तब भी वह वांछित पद नहीं मिल सकता, जिसके लिए कामना की जा रही है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

ऐसी दुर्लभ कामनाओं का जन्म भ्रम अथवा भावुकता के कारण हो जाता है और कभी-कभी ईर्ष्या-द्वेष तथा स्पर्द्धा के कारण भी। कहने-सुनने और कभी-कभी स्वयं भी मनुष्य को अपनी क्षमताओं के प्रति भ्रम हो जाता है, जिसके कारण वह अपनी क्षमताओं को कुछ बढ़ा-चढ़ाकर आँक बैठता है और उसी के आधार पर ऊँची-ऊँची कामनाएँ भी पाल लेने की भूल कर बैठता है।

भावुकता का प्रवाह भी मनुष्य को अपनी सही शक्तियों को समझने नहीं देता। कल्पना प्रधान होने से उसे बड़ी-बड़ी योजनाएँ और बड़े-बड़े महल बनाते देर नहीं लगती। किंतु यथार्थ और कल्पना में तो जमीन-आसमान का अंतर होता है। जो महल कल्पना में बनते विलंब नहीं लगता, उनकी मूर्तिमत्ता में पूरा जीवन तक लग जाता है और कभी-कभी वे पूरे नहीं हो पाते। इस प्रकार की कल्पनाजन्य आकांक्षाएँ अशांति और असंतोष के सिवाय मनुष्य को कुछ भी नहीं दे सकती हैं।

बहुत बार अनेक लोग, यद्यपि उनमें मौलिक महत्त्वाकांक्षा नहीं होती तथापि दूसरों के प्रति ईर्ष्या और स्पर्द्धा के वशीभूत होकर महत्त्वाकांक्षी बन बैठने की भूल कर जाते हैं। अमुक व्यक्ति ने ऐसा काम कर लिया है, इतनी उन्नति पर पहुँच गया है, मुझे भी ऐसा बनना चाहिए। यदि मैं ऐसा नहीं बनता तो उससे हेठा रह जाऊँगा- इस प्रकार के निरर्थक विचार-विकार के आधार पर आकांक्षाएँ पाल लेने का अर्थ होता है, अपने लिए अशांति और असंतोष का प्रबंध कर लेना।

ईर्ष्या-द्वेष का आधार तो निकृष्ट होता ही है, स्पर्द्धावश और देखा-देखी भी आकांक्षाओं का ताना-बाना बुन लेना ठीक नहीं। कोई व्यक्ति जो कुछ बना है, अपनी मौलिक प्रवृत्तियों और शक्ति क्षमताओं के आधार पर बना है। अब यह जरूरी नहीं कि किसी दूसरे की प्रवृत्तियाँ, शक्तियाँ और परिस्थितियाँ भी वैसी ही हों। यदि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

ऐसा है, तो निश्चय ही उसकी स्पर्द्धा परास्त होगी। आकांक्षा, आकांक्षा ही रहकर उसके हृदय में शांत ही रहेगी।

जीवन में यदि अशांति और असंतोष से बचना है और सुख-शांति में सरल-स्निग्ध जीवन चलाना है, तो कामनाओं, आकांक्षाओं के संबंध में बड़ा सतर्क और सावधान रहना होगा। वह सावधानी यह है कि हृदय में जन्मने और पलने वाली कामनाओं का संपादन करते रहिए। जो कामनाएँ केवल स्वार्थमयी और समाज-विरोधी हैं, उन्हें काटकर वैसे ही फेंक दीजिए जैसे चतुर माली क्यारी में से बेकार की वनस्पति काटकर फेंक देता है। केवल वे ही कामनाएँ रखिए, जो अपनी उन्नति के साथ-साथ सामाजिक गति से भी सामंजस्य रखती हों।

कामनाओं के विषय में कल्पना और भावुकता की प्रेरणा से बचे रहिए। मनुष्य के ये दोनों विकार उसे यथार्थ से हटाकर स्वप्न-लोक में भटका देते हैं, जहाँ जाकर वह अपनी यथार्थ शक्ति, क्षमता और परिस्थिति के विषय में बहुमूल्यन करने की भूल कर बैठता है। प्रश्रय केवल उन्हीं कामनाओं को दीजिए, जो अपनी स्थिति, क्षमता और संबंधित स्रोतों से मेल खाती हों। अपनी सीमा से बाहर की महत्त्वाकांक्षाओं से शत्रु की तरह बचते रहना चाहिए। अपनी मौलिक प्रवृत्तियों के आधार पर ही अपनी कामनाओं का सृजन करना ठीक होगा, देखा-देखी अथवा स्पर्द्धा से प्रेरित होकर दूसरों की तरह आकांक्षाएँ पाल लेना गलत नीति है।

कामनाएँ उन्नति और प्रगति की प्रेरक हैं अवश्य, किंतु वे ही जो हमारे अनुरूप हों और हम स्वयं जिनके अनुरूप हों। असंगत और अयुक्त कामनाएँ अशांति और असंतोष की जननी होती हैं। ऐसी ही कामनाओं को शास्त्रों में निषेध करते हुए क्रोध अर्थात क्षोभ का हेतु और उसी क्रम में अशांति एवं असंतोष का कारण बतलाया गया है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अनावश्यक आकांक्षाएँ और उनकी दूषित प्रतिक्रिया

आकांक्षाएँ मनुष्य जीवन की प्रेरणा-स्रोत हैं। आकांक्षाओं के अभाव में जीवन की गतिशीलता समाप्त हो जाती है। तथापि यही आकांक्षाएँ जब विकृत हो जाती हैं, तो संपूर्ण जीवन को अशांति तथा असंतोष की आग में जलने के लिए फेंक देती हैं। आज-कल प्रायः हम सभी लोगों का जीवन संतोष तथा शांति की सुख-शीतलता से वंचित हो गया है। जीवन संघर्ष इतना बढ़ गया है कि इस पर बैठकर दो मिनट सोच-विचार करने का समय भी नहीं मिलता। दिन-रात एक टाँग से भागते, दौड़ते, सुख-संतोष की संभावनाएँ लाने के लिए कोई प्रयत्न अछूता नहीं छोड़ते, फिर भी विकल तथा क्षुब्ध ही रहना पड़ रहा है। जीवन की प्रेरणा, उसके सत्य तथा यथार्थ रूप के दर्शन ही नहीं होते। जहाँ और जिधर सुख-शांति के लिए जाते हैं, उधर प्रतिकूल परिणाम ही हाथ आते हैं। ऐसे कितने लोग हो सकते हैं जो जीवन में अपेक्षित सुख-संतोष का साक्षात्कार कर पाते हों। आजीवन श्रम करते रहने, जीवन-रस सुखाते रहने और दौड़-धूप करते रहने पर भी रिक्तता, खिन्नता तथा संताप की प्राप्ति निस्संदेह बड़े खेद तथा चिंता का विषय है। इसके आधारभूत कारण को खोज निकालना नितांत आवश्यक हो गया है।

इस असफलता पर गंभीरतापूर्वक विचार करने में तो इसी परिणाम पर आना होता है कि हमें लक्ष्य-पथ से भटका देने में हमारी स्वयं की विकृत आकांक्षाओं का गहरा हाथ है। आकांक्षाएँ जीवन की प्रेरणा-स्रोत हैं, वही विकृत हो जाने पर प्रवंचक बनकर जीवन के सहज तथा अभीष्ट पथ से हमें इधर-उधर ले जाकर अशांति तथा असंतोष के कंटकाकीर्ण मार्गों पर घसीट रही हैं। निश्चय ही जीवन में अभीष्ट सुख-शांति पाने के लिए विकृत

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आकांक्षाओं को संस्कृत तथा परिष्कृत करना होगा अथवा उन्हें अकल्याणकारी साथियों की तरह छोड़ ही देना होगा। जो प्रेरणा ताप बनकर अपने लिए भयानक हो उठे, उसका परित्याग कर देना ही उचित है।

विकृत आकांक्षाएँ बड़ी भयावनी होती हैं। उनका अभिचार शीघ्र ही मनुष्य को सत्पथ से भटकाकर विपथ पर खींच ले जाता है। उसकी तृष्णा इतनी बढ़ा देता है कि असत्य, सत्य और मरीचिका, जल दिखलाई देती है और मनुष्य उस बाज पक्षी की तरह मूढ़मति हो जाता है जो जमीन पर पड़े काँच के टुकड़े में अपना प्रतिविंब देखकर झपटता और उससे टकराकर आहत हो जाता है। वास्तविकता की पृष्ठभूमि बहुत ही कठोर और कर्कश होती है। इस पर चलकर लक्ष्य तक पहुँचने के लिए बड़ी ही दृढ़ता तथा सतर्कता एवं धैर्य की आवश्यकता होती है। किंतु स्वार्थपूर्ण विकृत आकांक्षाओं की माया मनुष्य को इतना कल्पनाशील तथा लोलुप बना देती है कि वह हर ध्येय को नितांत सरल तथा अपने योग्य मान लेता है।

इसका फल यह होता है कि वह अपनी महत्त्वाकांक्षाओं के साथ शीघ्र ही आकाश में उड़ जाता है और शीघ्र ही वेग कम होने से नीचे पृथ्वी पर गिरकर आहत होता और कराह उठता है। जिस सुख-शांति के लिए उसने उड़ान की थी—वह तो मिली नहीं, उलटा अशांति, पीड़ा तथा असंतोष का भागी बनना पड़ा। विकृत आकांक्षाओं का विष बड़ा तीव्र होता है। इसका अभ्यस्त मनुष्य एक अजीब नशे से प्रमत्त रहकर जीवन के ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर ही भागता-फिरता रहकर अंत में अशांति तथा पश्चात्ताप के साथ विदा हो जाता है।

इसी प्रकार की विकृत आकांक्षाओं के नशेबाज एक सज्जन का उदाहरण है कि उनको राजनीति में आगे बढ़ने की धुन सवार हुई। अपनी इस धुन को पूरा करने के लिए वे वर्षों लगे रहे, किंतु हर बार असफलता की पीड़ा पाने पर भी उससे बाज नहीं आए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

यद्यपि न तो कोई लक्ष्य था और न कोई उपयोग, फिर भी उन्हें एम० एल० ए० बनने की धुन लगी रही। इसके लिए वे दो-बार चुनाव के मैदान में हार भी गए। घर की काफी पूँजी बरबाद हो गई, किंतु फिर भी उनकी वह धुन नहीं गई।

जब मिलते तो अपनी असफलता का ही रोना रोते, एक अशांति तथा असंतोष उन्हें घेरे रहता था। आर्थिक नुकसान तथा पराजय की ग्लानि काँटे की तरह उनके हृदय में कसकती रहती थी। अपनी इस सनक में अपना स्वास्थ्य भी खराब कर बैठे, फिर भी न जाने क्यों एम० एल० ए० पद के लिए पीछे पड़े रहे।

जब-जब इन सज्जन से कहा गया कि आपकी यह इच्छा जब आपको किसी प्रकार सुख-चैन से रहने नहीं देती, हर बार प्रयत्न में असफलता और हानि उठानी पड़ी है, फिर क्यों उसके पीछे पड़े हैं? जबकि न तो उसका आपके लिए कोई उपयोग है और न वह जीवन के लिए कोई आवश्यक ही है। इस पर उनका जो उत्तर रहा है। वह विचारणीय है। बोले—"क्या करें, राजनीति का यह नशा ही कुछ ऐसा है, जो कोई दशा क्यों न हो जाए, छुड़ाए नहीं छूटता। सोच रहा हूँ कि किसी प्रकार चुनाव जीत जाता, एम० एल० ए० बनकर एक बार विधान सभा पहुँच पाता तो बात बन जाती, पराजय का कलंक धुल जाता और अब तक जो हानि हुई है, यह मिनटों में पूरी हो जाती। इसलिए बार-बार असफल होने पर भी इसके पीछे पड़ा हुआ हूँ। कभी तो समय आएगा ही और हमारे लिए भी समाज में सम्मान और समृद्धि का द्वार खुल जाएगा।"

कहना न होगा कि इस प्रकार की विकृत आकांक्षा रखने वाले व्यक्ति दया के पात्र हुआ करते हैं। ऐसे ही विकृत आकांक्षा वाले अपने जीवन के सहज सुंदर मार्ग से भटककर उन रास्तों पर पड़ जाते हैं, जहाँ उनकी सारी सुख-शांति छीन ली जाती है। जिन आकांक्षाओं का कोई उद्देश्य नहीं, कोई उपयोग नहीं

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अथवा जिनके पीछे कोई हितकर प्रेरणा मौजूद न हो, वे मृग-मरीचिका के सिवाय और क्या कहीं जाएँगी? निश्चित ही है कि जब-जब मनुष्य की आकांक्षाएँ नशे का रूप धारण कर लेती हैं, तब वे उसे उस नशेबाज की तरह बना देती हैं, जो मदांध होकर नाली में गिरता रहता है किंतु अपना सुधार नहीं करता। यह बात दूसरी है कि शराब का नशेबाज गंदी नाली में गिरता है और आकांक्षाओं का नशेबाज अशांति एवं असंतोष के दलदल में।

वास्तविक आकांक्षाएँ तो वही कही जाएँगी जिनके पीछे कुछ उद्देश्य, हित, आदर्श, आवश्यकता अथवा उपयोगिता की प्रेरणा मौजूद है। यों ही किसी लोभ-लालच अथवा स्वार्थ से प्रेरित होकर ऊट-पटाँग आकांक्षाओं को पाल लेना कोई बुद्धिमानी है? यह तो उस कबाड़ी जैसा काम है, जो अपने घर में जगह-जगह से उठाकर तमाम निरर्थक और निरुपयोगी वस्तुओं का ढेर लगा लिया करता है।

आकांक्षाएँ जीवन की प्रेरणा-स्रोत अवश्य है किंतु उनको समझने, परखने के लिए विवेक की भी अपेक्षा है। अपने हृदय में पालने से पहले अपनी आकांक्षाओं की परीक्षा कर लेना, यह समझ लेना परम आवश्यक है कि इनमें कोई यथार्थ तथा उपयोगी तत्त्व भी है अथवा यह केवल वह मायाजाल है, जो मनुष्य के सहज-सुंदर जीवन को भुलाने की राहों पर भटका देता है और मनुष्य अपनी सहज शांति, मानसिक व्यवस्था और बौद्धिक संतुलन खो बैठता है।

किन्हीं स्वार्थ और प्रलोभनपरक आकांक्षाओं के पीछे भागते फिरना बुद्धिमानी नहीं है। मनुष्य की जिन आकांक्षाओं के पीछे एकमात्र स्वार्थ बुद्धि की प्रेरणा होती है, वे आकांक्षाएँ निकृष्ट स्तर की ही होती हैं और निकृष्टता, किसी श्रेयता का संपादन कर सकेगी—यह सर्वथा असंभव ही है। श्रेय और श्रेष्ठता की संवाहिका उच्च, निर्लोभ तथा निःस्वार्थ आकांक्षाएँ

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

ही होती हैं। थोड़ी-बहुत आकांक्षाएँ सभी में होती हैं। इस संसार में सर्वथा इच्छा शून्य हो सकना संभव नहीं है। आकांक्षाएँ जीवन का चिह्न हैं, अग्रसर होने की प्रेरणा हैं। मनुष्य में इनका होना स्वाभाविक ही है। फिर भी अकल्याणकारी इच्छाओं को मनुष्य की स्वाभाविक आकांक्षाओं में स्थान नहीं दिया जा सकता है। मानिए, यदि कोई चोरी, मक्कारी, लूट-पाट और दूसरों का शोषण करके धन प्राप्त करने की आकांक्षा करता है, किसी भी अनीति और अन्यायपूर्ण प्रयत्नों से धनाढ्य बनना चाहता है, तो क्या उसकी यह आकांक्षा उचित और स्वाभाविक मानी जाएगी? नहीं, कदापि नहीं। यह तो आकांक्षा नहीं है। इसको तो उसकी आसुरी और आततायी वृत्ति ही कहा जाएगा।

इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति समाज में स्थान पाने, अपना प्रभाव जमाने की आकांक्षा रखता है और उसे मूर्तिमान करने के लिए निर्बल एवं असहाय व्यक्तियों को सताता, उनको ताड़ना देता है और इस प्रकार अपना आतंक फैलाता है तो क्या उसकी आकांक्षा उचित कही जाएगी? यह तो एकमात्र उसका पागलपन ही माना जाएगा। समाज में स्थान पाने, लोगों को प्रभावित करने के लिए तो सेवा, परोपकार और सहयोग, सहायता एवं सद्व्यवहार तथा सदाचरण का ही मार्ग निर्धारित किया गया है। इससे विपरीत मार्ग पर चलकर उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील होने वाला व्यक्ति तो समाज का शत्रु ही माना जाएगा। तब भला वह उसके सम्मान और श्रद्धा का पात्र किस प्रकार बन सकता है? समाज में गुंडों, लफंगों और धूर्तों का भी जिक्र होता है। किंतु यह उनकी नामवरी नहीं, बदनामी ही होती है। जिसके प्रभाव में आतंक अथवा भय का पुट हो, जिसका नाम घृणा, तिरस्कार और अपमान के साथ लिया जाए, वह समाज में प्रभाव पाने का आकांक्षी कैसा? वह तो बुद्धिहीन मूर्ख ही है, जो अपने लिए अपनी विकृत आकांक्षा की प्रेरणाओं से विनाशकारी परिस्थितियाँ सृजन कर रहा है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

मनुष्य की वे आकांक्षाएँ ही वास्तविक आकांक्षाएँ हैं, जिनके पीछे स्वयं उसका तथा समाज का हित सन्निहित हो। जो आकांक्षाएँ समाज अथवा अपनी आत्मा की साधक न होकर बाधक होती हैं, वे वास्तव में दुष्प्रवृत्तियाँ ही हुआ करती हैं, जो लोभ और मोहवश आकांक्षा जैसी जान पड़ती हैं। विनाशात्मक आकांक्षाएँ रखने वाले व्यक्ति में रावण, कंस, दुर्योधन जैसे दुष्ट महत्त्वाकांक्षियों के ही संक्षिप्त संस्कार होते हैं, जो जीवन में एक बूँद भी सुख, शांति और संतोष नहीं पा सकते और मरणोपरांत युग-युग तक धिक्कारे जाते रहते हैं।

आज की हमारी अशांति, असंतोष और संताप से भरी हुई जिंदगी का मुख्य कारण हमारी विकृत आकांक्षाएँ ही हैं, जो लोभ की मरु-मरीचिका और मोह की मृगतृष्णा में भटकती हुई उस पथ पर नहीं आने देती, जिस पर स्वर्गीय शांति, निसर्ग संतोष और अप्रतिहत शीतलता के दर्शन हो सकते हैं। अपनी आकांक्षाओं की परीक्षा कीजिए, उन्हें सत्य एवं यथार्थ की कसौटी पर परखिए, हित-अहित की तुला पर उनका मानांकन करिए और जो भी बाधक आकांक्षाएँ हों उन्हें तुरंत अपनी मनोभूमि से निकाल बाहर करिए। उचित, उपयोगी और सभ्य, रंजक आकांक्षाओं को पालिए, उनकी पूर्ति के लिए अबाध प्रयत्न एवं अखंड पुरुषार्थ करिए, सुंदर, शिष्ट और सुशील मार्ग का अवलंबन कीजिए और तब देखिए कि आपके जीवन में स्थायी और अक्षय सुख-शांति का समावेश होता है या नहीं?

कामनाओं को नियंत्रित और मर्यादित रखें

इच्छा का अस्तित्व अनादि है और शायद यह सदा-सर्वदा अपना अस्तित्व बनाए भी रहेगी। इच्छा का अभाव विकास और उन्नति का स्थगन है। संसार की सारी सक्रियता, मनुष्य की समग्र प्रेरणा इच्छाशक्ति में ही निहित है, उसी पर निर्भर है। जहाँ इच्छा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

नहीं, वहाँ जड़ता, शून्यता और निष्क्रियता के अतिरिक्त कुछ हो सकता है—ऐसी आशा नहीं की जा सकती।

इच्छाएँ मनुष्य में जीवन का चिह्न हैं। जीवित मनुष्य ही तो नित्य नवीन इच्छाएँ किया करता है। कभी वह स्वास्थ्य की, कभी धन-संपत्ति की, कभी यश-प्रतिष्ठा की, तो कभी पुत्र-कलत्र आदि की। अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष—चारों पदार्थ भी तो मनुष्य की उदात्त एवं परिष्कृत इच्छाओं की ही तो अभिव्यक्ति करते हैं। इन्हें अथवा इनमें से किन्हीं को पाने के लिए मनुष्य इच्छा के द्वारा ही तो परिचालित होता है। जैसे ही कोई इच्छा मनुष्य के मानस में उदय हुई और उसने स्थिरता की स्थिति प्राप्त की, वैसे ही मनुष्य उसकी पूर्ति के लिए क्रियाशील हो उठता है। इच्छाएँ मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है, इस सत्य से इनकार नहीं किया जा सकता।

यह सारा संसार इच्छाओं का ही प्रतिफलन है। परमपिता-परमात्मा के हृदय में इस माँगलिक इच्छा का स्फुरण हुआ—"**एकोऽहं बहुस्याम**" और यह विशाल, विस्तृत तथा जड़-चेतनमय त्रिविध संसार शून्य से बदलकर साकार रूप में तत्काल मूर्तिमान हो उठा। संसार परमात्मा की इच्छा से उत्पन्न हुआ। जीवों का जन्म आदि इच्छा के आधार पर ही हुआ है। इसलिए उसका भी इच्छाओं का कर्ता होना स्वाभाविक ही है।

मनुष्य की इच्छाएँ मात्र स्वाभाविक प्रतिक्रिया ही नहीं, सांसारिक व्यापार के लिए आवश्यक उपादान के रूप में भी आवश्यक हैं। मनुष्य यदि इच्छा न करे और उसके हृदय से इनके स्फुरण का सर्वथा तिरोधान हो जाए तो निरंतर गति से आगे की ओर बढ़ता हुआ सृष्टि का यान जहाँ-का-तहाँ रुक कर ठहर जाए। सारे सृष्टि-क्रम में एक निश्चेष्टता, निष्क्रियता एवं जड़ता आ जाए। जिसका परिणाम जिस तरह रुक जाने से पानी सड़ने लगता है, हवा विषाक्त हो जाती है और यंत्र बेकार होकर क्षय होने लगते हैं, उसी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रकार विनाश एवं व्यर्थता के रूप में सामने आने लगता है। गति एवं प्रवाह के आधार पर ही संसार में सक्रियता एवं प्रखरता, उन्नति और विकास बने हुए हैं। ग्रह–नक्षत्रों की गति रुक जाए तो प्रलय की संभावना उठ खड़ी हो। प्रकृति की गति रुक जाए तो वनस्पति सूखकर काष्ठ हो जाए, जीवों की गति रुक जाए तो शरीर मृत्तिका के रूप में बदल जाए। गति ही संसार का जीवन है और गति का आधार इच्छा है। इस प्रकार इस न्याय के आधार पर इच्छाओं की आवश्यकता से किसी प्रकार भी इनकार नहीं किया जा सकता।

किंतु हर आवश्यकता, हर स्वाभाविकता और हर गतिविधि की एक समुचित सीमा एवं दिशा भी निर्धारित है। उसका व्यतिक्रम करने से लाभ के स्थान पर हानि की ही संभावना रहती है। भोजन मनुष्य की आवश्यकता है। जिसकी पूर्ति स्वास्थ्य एवं जीवन के लिए हितकर है। किंतु इसी आवश्यकता को सीमा के बाहर निकाल दिया जाए, तो वही भोजन स्वास्थ्य एवं जीवन के लिए संकट उत्पन्न कर देता है। संसार, मनुष्य और ग्रह–नक्षत्रों में गति अपेक्षित है। किंतु यदि उनकी गति अपनी दिशा और सीमा का अतिक्रमण कर अनियंत्रित हो जाए, तो क्या कुछ ही समय में सुंदर और चहल–पहल से मुखरित संसार नष्ट–भ्रष्ट होकर श्मशान के रूप में न बदल जाए? मर्यादा का उल्लंघन विनाश एवं विध्वंस को खुला निमंत्रण है।

इसी प्रकार आवश्यकता एवं गति की दिशा की उपयुक्तता और अनुपयुक्तता भी लाभ–हानि का अनिवार्य कारण है। अनुपयुक्त भोजन और जीवन की गति की दिशा मनुष्य का संयोग उन्हीं परिणामों से करते हैं, जिनकी गणना विनाशक फलों में की जाती है।

इच्छाएँ स्वाभाविक भी हैं और आवश्यक भी। किंतु इनमें औचित्य का होना उससे भी अधिक आवश्यक है। मनुष्य को जहाँ उचित इच्छाएँ, सुख–शांति, संतोष, उन्नति, प्रगति और

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सफलता की ओर ले जाती हैं, वहाँ अनुचित इच्छाएँ उसे क्लेशपूर्ण परिस्थितियों में डाल देती हैं। इच्छाओं का अनौचित्य अथवा उनकी अति मनुष्य जीवन को जिस अशांति एवं शोक-संतापों के हवाले कर देती है, उतना उनका अभाव दुर्दशादायक नहीं होता। यदि इच्छा रहित मनुष्य जड़ की भाँति यथास्थान पड़ा रहता है, तो अनुचित एवं अनियंत्रित इच्छाएँ उसे असंतोष की आग में ढकेल देती हैं।

आज ही नहीं, मनुष्य आदि काल से ही सुख की कामना करता आ रहा है और उसके लिए प्रयत्न भी। वह जो भी शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक काम करता है, जो भी प्रबंध, व्यवस्था और उपार्जन करता है, खेती-बारी, व्यापार, व्यवसाय, घर-गृहस्थी, पुत्र-कलत्र आदिक जो भी काम और संग्रह करता है, एकमात्र सुख की कामना से प्रेरित होकर। इस एक कामना के अतिरिक्त इन सब क्रिया-कलाप के पीछे और कोई भी विशेष उद्‌देश्य नहीं रहता। तथापि वह अपने इस उद्‌देश्य-सुख की कामना पूर्ण करने में कभी सफल न हो सका है। आदिम युग की अवस्था से लेकर आज वैज्ञानिक युग तक वह अपनी इस कामना की पूर्ति के लिए आकाश-पाताल एक करता आया है। उन्नति, विकास एवं अन्वेषण के क्रम को उसने एक क्षण के लिए भी अवरुद्ध न होने दिया, किंतु वह अपनी वांछित सुख-शांति को अब तक भी न पा सका है। उसकी सारी उपलब्धियाँ दिन-दिन विपरीत दिशा और विपरीत परिणामों में फलीभूत होती दिखाई दे रही हैं।

इस सब असफलता एवं अशांति का और कुछ भी नहीं—केवल एक ही प्रमुख कारण है और वह है—द्रौपदी के चीर की तरह दिन-दिन बढ़ता हुआ कामनाओं का अनियंत्रण एवं उच्छृंखलन। उसकी सुंदर सुख-कामना, सुख-लिप्सा में बदल गई है। जब मनुष्य की लिप्सा और स्पृहा अपनी सीमा लांघकर अनियंत्रित हो जाती है, तभी आज जैसे असंतोष के

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

समान अशुभ परिणामों की वृद्धि हो जाती है। मनुष्य एक उपलब्धि के बाद दूसरी और दूसरी के बाद तीसरी पाने की कामना को इतना बढ़ा लेता है कि वे शीघ्र ही असंतोष को जन्म दे देती हैं। कामनाओं की अति अथवा उनमें असंतोष का दोष दुःख का बहुत बड़ा कारण है।

समुचित सुख-सौख्य पाने के लिए मनुष्य को अपने मनोरथों की एक सीमा रखनी ही चाहिए। अन्यथा अनियंत्रित मनोकामनाओं का रथ दौड़ता किसी खड्ड अथवा खाई में ही शरण लेगा और जीवन के अशांत अंत में ही विश्राम पाएगा। अनियंत्रित और असंतुष्ट कामनाएँ अपनी अशिव प्रेरणा से अच्छे-खासे मनुष्य को गलत कामों की ओर लगा देती हैं। भ्रष्टाचार, मिलावट, कालाबाजार, रिश्वतखोरी, घूँस, चोरी, डकैती, ठगी और शोषण का पाप धन की अनियंत्रित कामना का ही तो परिणाम है। अथवा ईश्वर के अंश आत्मावान, लोक-परलोक के अधिकारी मनुष्य को इन सब कुकृत्यों से क्या प्रयोजन अथवा लगाव हो सकता है?

भोग-सुख की अतिरिक्तता ही तो मनुष्य को बहु-विवाह, व्यभिचार, अमर्यादा और उच्छृंखला के पाप के लिए प्रेरित करता है जिसका फल रोग, शोक, अशांति, निंदा, कलंक और अपयश के रूप में सामने आता है। स्वामी रामतीर्थ ने ठीक ही कहा है कि "मनुष्य के भय और चिंताओं का कारण उसकी अनुचित एवं अनियंत्रित इच्छाएँ ही तो हैं। अन्यथा इस उज्ज्वल जीवन के पास इन दुःखों का क्या कारण?" जहाँ मनुष्य का यह अधिकार है कि वह इच्छा करे और उसे पूरा करने का प्रयत्न करे, वहाँ उसका यह कर्तव्य भी है कि उसे एक सीमा तक पाकर संतोष करे और फिर उसकी कामना न करे, जो उसके पास नहीं हैं। केवल एक ही कामना, धन और भोग-सुख के लिए जीवन समर्पित कर देना, इनको अति एवं अनौचित्य पर पहुँचा देना किसी प्रकार भी न्यायसंगत नहीं है। धन, भोजन, वस्त्र, निवास, वाहन और जीवन के अन्य

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

साधन-संसार में सभी को समान रूप से आवश्यक हैं। यदि कोई मनुष्य अपने प्रयत्नों से वे सब-के-सब, दिन-पर-दिन अपने पास ही संग्रह करता जाए, तब तो वह पुरुषार्थ का दुरुपयोग ही माना जाएगा। समुचित इच्छा का प्रयत्न नहीं, यह लिप्सा, तस्करता और शोषण है, जो मनुष्य को किसी प्रकार भी शोभा नहीं देता। इससे समाज में अशांति, असंतोष और अव्यवस्था के साथ विषमता तो फैलती ही है, अपने लिए भी, असंतोष का बंधन और वेदना की परिस्थितियाँ उत्पन्न होती रहती हैं।

मनुष्य के लिए धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चार पुरुषार्थ बतलाए गए हैं। इनमें यदि केवल अर्थ और काम में ही संलग्न रहकर जीवन की इतिश्री कर दी गई, तो वह जीवन सर्वथा असफल ही माना जाएगा। जहाँ अर्थ और काम की इच्छा को प्रश्रय दिया गया है, वहाँ धर्म और मोक्ष की कामना को भी प्रबुद्ध करना बहुत आवश्यक है। वास्तविकता तो यह है कि ये चारों पुरुषार्थ कोई अलग-अलग उपलब्धियाँ नहीं हैं। सच्चा पुरुषार्थ तो इसमें केवल एक मोक्ष ही है। बाकी के तीनों पुरुषार्थ तो उसके सहायक पुरुषार्थ ही हैं। पूर्व के तीनों पुरुषार्थ की गति उस दिशा में दी जाए जिस दिशा में अंतिम पुरुषार्थ मोक्ष की संभावना सरल और उपलब्ध हो सके। क्रम से चलते हुए अंतिम पुरुषार्थ पर पहुँचने पर उसके लिए मनुष्य जितना भी परिश्रम, प्रयत्न और साधना कर सके करे। जितना भी आत्म-लाभ हो सके प्राप्त करे, मोक्ष के लिए जितनी भी कामना कर सके करे। केवल यही एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ पर मनुष्य अपनी कामना की बाग ढीली कर जितनी दूर तक दौड़ सके दौड़े, क्योंकि उस दिशा में प्रकाश और सुख-शांति के अतिरिक्त अन्य कोई भी प्रतिकूल संभावना नहीं होती।

अनियंत्रित कामनाओं की तरह ही मनुष्य के लिए निष्क्रिय कामनाएँ भी एक अभिशाप ही हैं। कामना करने को तो कोई विद्यार्थी यह कामना कर लेता है कि वह एम० ए० पास हो जाए,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

किंतु उसके लिए प्रयत्न नहीं करता, केवल मनोमंदिर में कामना के साथ खेल-खेलकर मनोरंजन करता रहता है, तो उसकी वह कामना कदापि पूरी नहीं होगी।

कामना के साथ प्रयत्न का किया जाना बहुत आवश्यक है। केवल कामना करने से न तो कोई विशेषता पा सकता है और न धन-दौलत। बिना प्रयत्न के साधारण भोजन की इच्छा तक पूरी नहीं हो सकती, तब अन्य उपलब्धियों की पूर्ति की बात ही क्या हो सकती है? निष्क्रिय कामनाओं का दोषी व्यक्ति कामनाओं का जड़ पुतला बनकर न केवल इस जीवन में ही अतृप्त और अशांत रहता है, वरन अपने अगले जन्म में भी दीन और दरिद्र बनने की तैयारी कर लेता है। शिथिल एवं अधूरी भावनाएँ भी अशांति का एक कारण होती हैं। कामनाओं में जब तक दृढ़ता, सामयिकता और सक्रियता का समावेश नहीं होता, वे एक रोग की तरह मनुष्य के पीछे अकारण ही लगी रहती हैं। शिथिल कामना वाला व्यक्ति थोड़ा-सा प्रयत्न करके बड़ी उपलब्धि चाहने लगता है और जब उसको नहीं पा सकता तो समाज अथवा परिस्थितियों को दोष देकर जीवनभर असफलता के साथ बँधा रहता है।

अपनी स्थिति के परे की कामनाएँ करना अपने को एक बड़ा दंड देने के बराबर है। मोटा-सा सिद्धांत है—"अपनी शक्ति के बाहर की गई कामनाएँ कभी पूर्ण नहीं हो सकतीं और अपूर्ण कामनाएँ हृदय में काँटे की तरह चुभा करती हैं।" मनुष्य को अपने अनुरूप, अपने साधनों और शक्तियों के अनुसार ही कामना करते हुए अपने पूरे पुरुषार्थ को उस पर लगा देना चाहिए। इस प्रकार एक सिद्धि के बाद दूसरी सिद्धि के लिए पूर्व सिद्धि और उपलब्धियों का समावेश कर आगे प्रयत्न करते रहना चाहिए। इस प्रकार एक दिन वह कोई बड़ी कामना की पूर्ति भी कर लेगा।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

निस्संदेह कामनाएँ मनुष्य का स्वभाव ही नहीं, आवश्यकता भी हैं। किंतु इनका औचित्य, नियंत्रण, दृढ़ और प्रयत्नपूर्ण होना भी वांछनीय है, तभी यह जीवन में अपनी पूर्ति के साथ सुख-शांति का अनुभव दे सकती हैं अन्यथा अनियंत्रित एवं अनुपयुक्त कामनाओं से बड़ा शत्रु मानवजीवन की सुख-शांति के लिए दूसरा कोई नहीं है।

आवश्यकताएँ बढ़ाकर दुःख दारिद्र्य में न फसें

आज हर ओर से 'अभाव! अभाव!!' की ध्वनि आ रही है। मनुष्य दिन-रात मशीन की तरह काम में जुटा रहता है तब भी उसके खरचे पूरे नहीं होते। हर समय कोई-न-कोई कमी उसे सताती ही रहती है। अभाव को पूरा करने के लिए लोगों ने आय के अनुचित साधन भी अपना लिए हैं, किंतु अभाव से फिर भी पीछा नहीं छूटता है। गरीब, तो गरीब है! उसे कोई भी अभाव रह सकता है, किंतु जब आज बड़े-बड़े धनवानों को अभाव की शिकायत करते सुना जाता है, तो यह सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि अभाव का कारण धन की कमी नहीं है, बल्कि इसका कोई दूसरा ही कारण है, जो अमीर तथा गरीब दोनों को समान रूप से जकड़े हुए है। अभावों का मुख्य कारण है—आवश्यकता की बढ़ोत्तरी। आवश्यकताएँ जिस तेजी तथा अनुपात से बढ़ती हैं, आय का उस अनुपात से बढ़ सकना असंभव है। फलतः मनुष्य के सम्मुख कोई-न-कोई अभाव बना ही रहता है।

यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए और विचारपूर्वक सोचा जाए तो पता चलेगा कि जीवन में वास्तविक अभाव बहुत कम होते हैं। वास्तविक अभाव की अवस्था में मनुष्य का जीना कठिन है। अधिकतर कृत्रिम अभावों की वेदना से व्यग्र रहते तथा मरते हैं। अन्न, वस्त्र आदि जीवन की नितांत आवश्यकता की अपूर्ति को ही वास्तविक अभाव कहा जा सकता है। समाज में मनुष्य की इन

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अनिवार्य आवश्यकताओं की किसी-न-किसी प्रकार पूर्ति होती ही रहती है। यह बात भिन्न है कि किसी की ये आवश्यकताएँ सघन रूप में अतिपूर्ति पाती हों और किसी को केवल सीमाबद्ध।

आज संसार में जो कुछ भी दु:ख, क्षोभ, अशांति, असंतोष अथवा व्यग्रता दृष्टिगोचर हो रही है, उसका मूल कारण मनुष्य की बढ़ी हुई कृत्रिम आवश्यकताएँ ही हैं। मूल आवश्यकताओं को कोशिश करके भी नहीं बढ़ाया जा सकता। किंतु आवश्यक कृत्रिम आवश्यकताओं की वृद्धि का कोई अंत नहीं। मनुष्य प्रयत्न करके भी पेट से अधिक भोजन नहीं कर सकता और तन से अधिक कपड़ा नहीं पहन सकता। यदि वह ऐसा करेगा तो रोगी तथा असभ्य बनेगा। जब इन्हीं मूल आवश्यकताओं के साथ कृत्रिमता अथवा अनावश्यकता जोड़ दी जाती है, तब यह सीमित जरूरतें भी ईरान से तूरान तक बढ़ जाती हैं। पेट के लिए भोजन चाहिए, ठीक है। किंतु भोजन के लिए मिर्च-मसाले, मक्खन-मलाई, कचौड़ी-पकौड़ी, अंडा, मुरगी, मांस-मज्जा और थाली भरे जंजाल आदि विभिन्न व्यंजन हों, ठीक नहीं है। भोजन की आवश्यकता मौलिक है, किंतु उसमें स्वाद अथवा प्रकारों का आरोप कृत्रिमता है। कृत्रिमता से कलुषित भोजन की जरूरत सामान्यरूप से पूरी नहीं की जा सकती है। सामान्य, सरल तथा साधारण भोजन, जो कि मनुष्य के स्वास्थ्य एवं जीवन के लिए जरूरी है; आठ-दस रुपये में पूरा हो सकता है। वही कृत्रिमता और स्वादों से सजाया हुआ भोजन सौ-दो सौ रुपयों में भी पूरा नहीं हो सकता है। अस्तु, अभाव का कारण मूल आवश्यकता की पूर्ति नहीं, भोजन के साथ जुड़ी हुई कृत्रिमता ही है।

वस्त्र एवं निवास के साथ भी यही बात है। शरीर ढकने के लिए कपड़ा चाहिए जिससे कि शरीर की भी रक्षा हो सके और सभ्यता की भी। यह काम साधारण मोटे कपड़ों की दो-तीन जोड़ी से आसानी से हो सकता है। इसके लिए मनुष्य को अधिक व्यग्रता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अथवा व्यय की जरूरत नहीं पड़ती। बुद्धिमानी तथा सावधानी से थोड़े पैसों में ही काम चलाया जा सकता है। किंतु जब कपड़े की यही सामान्य जरूरत मूल्यवान वस्त्रों, प्रकारों, फैशनों तथा अनेकताओं की कृत्रिमताओं से बोझिल कर दी जाती है तब उसका खरच उठाना मुश्किल हो जाता है। पाँच सौ रुपये साल का खरच बढ़कर पाँच हजार रुपये साल का हो जाता है। ऐसी कृत्रिम जरूरत से मनुष्य का पैसा बरबाद होगा ही, फलस्वरूप वह अभाव की अग्नि में जलेगा भी। प्रकाश तथा वायु की सुविधा वाला एक स्वच्छ व साधारण-सा मकान साधारण रूप से थोड़े पैसों में बनवाया अथवा किराये पर पाया जा सकता है। किंतु जब निवास की इस जरूरत के साथ आलीशान सजी हुई कोठी की कल्पना अथवा कृत्रिमता जोड़ दी जाती है, तब यह साधारण जरूरत असाधारण बन जाती है। अपनी पूर्ति में या तो मनुष्य का पैसा व्यय करा देगी अथवा अभाव की पीड़ा से परेशान करा देगी।

सामान्यत: मनुष्य की जरूरतों की तीन कड़ियाँ हैं। मूल जरूरतें, कृत्रिम अथवा विलासजन्य जरूरतें और व्यसनरूप जरूरतें। जीवन-रक्षा से संबंधित भोजन, वस्त्र और निवास की साधारण जरूरतें मूल जरूरतें हैं। इन्हीं जरूरतों का अनावश्यक स्तर बढ़ा देने से यही मूल जरूरतें कृत्रिम तथा विषयक हो जाती हैं। नशीली, प्रदर्शन पूरक तथा वासनाबोधित जरूरतें हैं। ये तीसरे स्तर की आवश्यकताएँ मनुष्य जीवन के लिए जरूरी तो हैं ही नहीं, वरन हानिकारक भी हैं। यह न केवल कमाई को ही नष्ट कर देती हैं, वरन स्वास्थ्य एवं शक्ति को भी स्वाहा कर देती हैं। व्यसन-विषयक जरूरत तो मानव जीवन की भयानक शत्रु हैं। इन्हें जरूरतों की कोटि में न रखकर दुर्भाग्य की कोटि में रखना ही उचित होगा।

जरूरतों के न्यूनाधिक्य के अनुपात से ही दु:ख-सुख की वृद्धि होती है। जिसकी जरूरतें जितनी कम हैं वह उतना ही अधिक संतुष्ट एवं सुखी रहेगा। उसे अभाव की पीड़ा नहीं

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

भोगनी होगी। जिसकी जरूरतें जितनी ही अधिक होंगी, वह उतना ही असंतुष्ट एवं दुखी होगा और उसके सम्मुख हर समय अभाव का भूत खड़ा रहेगा। मनुष्य जरूरतों को तो बिना किसी कठिनाई के आसानी से बढ़ाता जा सकता है, किंतु उनकी पूर्ति के लिए अपनी आय को आसानी से नहीं बढ़ा सकता। जरूरतों की पूर्ति न होने की पीड़ा, आय बढ़ने की प्रतीक्षा तो करती नहीं, वह तो तत्काल सताने लगती है और तब तक सताती रहती है, जब तक कि उसकी पूर्ति नहीं हो जाती। किंतु इसके साथ एक मुसीबत यह है कि एक जरूरत की पूर्ति हुई नहीं कि दूसरी तैयार। जरूरतों की वृद्धि रक्तबीज की तरह होती रहती है। यदि कोई किसी प्रकार दस जरूरतों की पूर्ति कर पाता है तो उसके साथ उतनी ही और खड़ी हो जाती हैं। जरूरतों की वृत्ति का यह तारतम्य किसी भी प्रकार रुकता नहीं। फिर एक जरूरत एक बार पूरी होने के बाद दूसरी बार के लिए फिर तकाजा करने लगती है। जरूरतों की पूर्ति से उनकी वृद्धि नहीं रोकी जा सकती।

मूल जरूरतें, आवश्यकतानुसार आगे भी बढ़ सकती हैं। मनुष्य के सामाजिक अथवा स्थानीय स्तर के साथ इनका स्तर भी बढ़ाया जा सकता है, किंतु केवल तब ही जब उसका बढ़ाया जाना अनिवार्य न हो जाए, बल्कि उपयोगी हो जाए। समाज में प्रतिष्ठा बढ़ जाने अथवा स्तर के ऊँचा हो जाने पर किसी को अपने रहन-सहन का स्तर ऊँचा करना पड़ सकता है। कार्यकुशलता अथवा बौद्धिकता के कारण भोजन का सामान्य तथा साधारण खरचा बढ़ाया जा सकता है। किंतु यह बढ़ाया जा सकता है तब ही, जब उसकी नितांत आवश्यकता हो जाए और उसके अनुरूप या तो उनकी आय में बढ़ोत्तरी हो गई हो अथवा बढ़ने की संभावना हो। प्रदर्शन अथवा अहं-प्रसन्नता के लिए ही साधारण स्तर को असाधारण रूप में बढ़ाना विलास एवं

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अपव्ययता होगी। इसके साथ यह जरूरी ही नहीं है कि स्तर तथा स्थान बढ़ जाने पर भी जरूरतों का स्तर बढ़ाया ही जाए। रहन-सहन अथवा आहार-विहार का स्तर तो वास्तव में उसकी स्वच्छता, सादगी तथा व्यवस्था ही मानी जानी चाहिए, न कि बहुमूल्यता अथवा बाहुल्यता। भारत में तो ऐसे महापुरुषों की परंपरा ही चलती रही है कि समाज में सर्वोपरि प्रतिष्ठा पा लेने पर भी उनके रहन-सहन तथा आहार-विहार का स्तर पूर्ववत् ही साधारण बना रहा, उसे उन्हें उठाने की न कोई आवश्यकता अनुभव हुई और न उनकी बढ़ी हुई सामाजिक प्रतिष्ठा ने ही इसके लिए दबाव डाला। फिर भी स्तर, स्थान तथा आय के अनुसार रहन-सहन को उठाने की छूट मानी जा सकती है, किंतु यह हो जरूरत और उपयोगिता के अनुसार ही, प्रदर्शन या प्रसन्नता के लिए नहीं।

कृत्रिम एवं व्यसनमूलक जरूरतों की अनियंत्रित वृद्धि ने समाज में शोषण का चक्र चला रखा है। यह सही है कि मनुष्य अपनी आवश्यक तथा अनुचित जरूरतों की पूर्ति के लिए दूसरों का शोषण करने लगा है, किंतु यह भी किसी प्रकार झूठ नहीं है कि मनुष्य दूसरे की अपेक्षा स्वयं अपना शोषक अधिक है। कोई दूसरा तो उसका शोषण चार-छह अथवा दस-बीस प्रतिशत कर पाता होगा, किंतु आदमी अपनी पाली हुई निरर्थक जरूरतों के लिए अपनी पूरी अथवा अधिकांश कमाई चुका देता है। अपनी अनावश्यक जरूरतों को बढ़ाकर फिर उनकी मजबूरन पूर्ति करने के लिए कमाई का अपव्यय करना अपनी आय का शोषण करना ही तो है। फिर व्यसन पालकर तो वह अपना आर्थिक शोषण ही नहीं करता, जीवनीशक्ति एवं स्वास्थ्य का भी शोषण किया करता है। शोषण की शिकायत दूसरे से करने से पहले मनुष्य को जरूरतें घटाकर स्वयं अपना शोषण बंद करना चाहिए। दूसरों के शोषण से त्रस्त मनुष्य यदि एक बार स्वयं अपना शोषण बंद कर दे तो भी बहुत राहत पा सकता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

यदि आप अभावों से दुखी रहते हैं, दिन-रात परिश्रम करते हैं फिर भी पूर्ति का संतोष नहीं पाते तो अपने जीवन पर नजर डालिए। अपनी आय की कमी की शिकायत करने के बजाय व्यय की विवेचना कीजिए। अवश्य आप पाएँगे कि आपकी आय उतनी कम नहीं है जितनी कि आपकी जरूरतें बढ़ी हुई हैं। यदि आप बिना किसी विशेष उद्योग अथवा आय-वृद्धि के सुखी एवं संतुष्ट होना चाहते हैं और अभावों के चंगुल से छूटना चाहते हैं तो आज ही अपनी जरूरतें कम करना आरंभ कर दीजिए। सर्वप्रथम व्यसनमूलक जरूरतें तो ऐसे छोड़ दीजिए जैसे धोखे से हाथ में आ जाने पर आग को छोड़ देते हैं। इसके बाद देखिए कि ऐसी भी कोई जरूरत तो नहीं जो अनावश्यक सुख-सुविधा की द्योतक हो। इन स्तरीय जरूरतों को केवल वहीं तक रखिए जो आपके स्थान अथवा स्तर के अनुरूप हों और जीवनोपयोगी भी हों। प्रदर्शन या अहंप्रसन्नता के लिए जीवन-स्तर पर व्यय करना अपने परिश्रम के साथ अन्याय करना है। यह संचय कुछ समय में ही पुराने होकर आकर्षणहीन और निरर्थक हो जाते हैं। आज अपनी केवल उन्हीं जरूरतों को रखिए और उन्हीं पर खरच करिए जो मूल और जीवन के लिए नितांत आवश्यक हों। जरूरतों को वश में कर लेने पर आपके जीवन में सुख-संतोष और संपन्नता निश्चित हो जाएगी। सुखी होने का यह उपाय सदा ही आपकी शक्ति में है। इसे कीजिए और संतोषपूर्ण अभावहीन जीवन-यापन करते हुए अपना आत्मिक विकास कीजिए।

योग का वास्तविक स्वरूप और वर्तमान आस्था

गीता में योग को कर्म की कुशलता कहा गया है। जिस उपाय से कर्म (इष्ट) सहज सुंदर स्वाभाविक रूप से सिद्ध हो सके और साथ ही वह बंधन का कारण न हो, उसी का नाम योग है—"**योगः कर्मसु कौशलम्**"। प्राचीन काल में ऋषिकुमार यज्ञ के लिए कुश

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बटोरकर लाने को जाया करते थे। उसमें तीन श्रेणी के बालक होते थे। एक श्रेणी के बालक इस सावधानी के साथ कुश उखाड़ते थे कि कुश उखड़ भी आता और उनका हाथ भी न कटता। दूसरी श्रेणी के कुश उखाड़ते समय अपना हाथ काट लेते थे और तीसरी श्रेणी के बालक हाथ कटने के भय से अपने अन्य साथियों से माँगकर काम चला लेते। "**कुशलाति इति कुशलः**"—कुश ले भी आते हैं और अपना हाथ भी नहीं काटते अर्थात् जो संसार के सब काम भी करते हैं, पर उसकी माया में बद्ध नहीं होते, वे ही कुशल हैं। उनके इस भाव को ही कौशल या योग कहते हैं। इस कुश एकत्र करने की प्रणाली को संसार के कर्मकांड के प्रतीक के रूप में लिया जा सकता है। जो लोग संसार में अनासक्त, निर्लिप्त रहकर, फलाकांक्षा रहित हो, संसार के सब कर्म संपादित कर सकते हैं, वे ही योगी हैं। जो लोग संसार में कर्म करते हुए, संसार की चोटों से घायल हो जाते हैं, वे संसारी हैं और जो संसार को दुःख, कष्ट, बंधन का कारण समझकर संसार से दूर रहते हैं और दूसरों के कर्मफल के ऊपर निर्भर करते हैं, वे भिक्षुक या संन्यासी श्रेणी के अंतर्गत आते हैं। कहना न होगा कि यहाँ गीतोक्त संन्यासी की बात न कहकर साधारण वेशधारी संन्यासियों का ही जिक्र किया गया है।

"कर्म की निपुणता योग है" इस भाव से 'योग' शब्द कितने प्रकार से देश और भाव राज्य के पतन के साथ नीचे गिर गया है और कितने विकृत अर्थ में इसका प्रयोग होने लगा है, यह भी यहाँ पर विचारणीय है। वर्तमान समय में ऐंद्रजालिक कौशल (जादू आदि) भी योग का अंग समझा जाने लगा है। मारण, उच्चाटन, वशीकरण आदि की ओर ही आजकल के योगियों का विशेष ध्यान रहता है। किसी प्रकार की कोई अस्वाभाविक क्रिया दिखाने वालों को ही आजकल सब लोग योगी समझ लेते हैं, उनकी भक्ति करते हैं और ठगते हैं। ताबीज, कवच आदि के द्वारा जो लोगों के कर्म-

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

फल को खंडन करने का ढोंग करते हैं, जो वंध्या को पुत्रप्राप्ति की दवा देते हैं और रोगियों का रोग बिना चिकित्सा के ही दूर करने की बात करते हैं, वे भी आजकल योगी कहे जाते हैं और पूजित होते हैं। प्राचीनकाल में जिनके हाथ ऊँचे रहकर भगवत्-कार्य करने में ही लगे रहते थे, वे ही ऊर्ध्वबाहु होते थे। आजकल जो लोग भगवदुद्देश्य की अवहेलना करके, प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन करके दोनों हाथों को निरंतर ऊपर उठाकर सुखा डालते हैं, वे ही ऊर्ध्वबाहु योगी माने जाते हैं। प्राचीन समय में योगी धारणा, ध्यान, समाधि में इतने तन्मय हो जाया करते थे कि शरीर की ओर उनका ध्यान ही नहीं जाता था, उनके बालों की जटाएँ बँध जातीं, शरीर पर धूल, मिट्टी आदि आकर जम जाती थी। आजकल उसकी जगह वट के दूध इत्यादि से ताबड़तोड़ जटा बना ली जाती हैं और शरीर में मिट्टी, राख आदि मलकर योगी का स्वाँग बना लिया जाता है और भोले लोग भी यह देखकर वशीभूत हो जाते हैं। बड़े-बड़े शहरों में जब घर के मालिक ऑफिस या बाजार चले जाते हैं, तब जाने कितने पाखंडी, धूर्त योगी की पोशाक गेरुआ वस्त्र आदि धारण कर, गृहस्थों के घर में जाकर, भोली स्त्रियों पर अपना प्रभाव जमाकर, छल, बल, कौशल से, कितने प्रकार से धन ठगते हैं, उस बात का ख्याल आने से मर्माहत होना पड़ता है। आजकल ऐसे धूर्त योगियों की संख्या और प्रतिष्ठा इतनी बढ़ गई है कि इनके कारण वास्तविक योगियों ने लोकालय और प्रसिद्ध तीर्थों आदि से दूर जाकर रहना आरंभ कर दिया है और गृहस्थ नकली योगियों द्वारा ठगे जा रहे हैं। भीतर से भगवत्प्राप्ति जनित ब्रह्मानंद के नशे में विभोर न होकर आज के बने हुए योगी मदिरा, गाँजा, भाँग आदि नशीली चीजों को साधना का अंग कहकर उनका प्रचार करते हैं। यहाँ तक कि देवाधिदेव महादेव के हाथों में भी उन्होंने संकोच छोड़कर अब सिद्धियों के बदले भाँग का लोटा और गाँजे की चिलम दे दी है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

देश और लोगों के मनोभाव के पतन के साथ ही साथ सभी बातों में कुछ विकृति आ जाती हैं। वर्तमान समय में उचित संशोधन की आवश्यकता है। योगादि साधन-प्रणाली के अंदर जब बहुत से उत्तम तत्त्व निहित हैं, उसकी सहायता से जब स्वास्थ्य प्राप्ति, एकाग्रता, शांति, आनंद प्राप्ति, उन्नति प्राप्ति, भगवद्दर्शन, भगवत्प्राप्ति, जीव का कल्याण-साधन आदि कार्य सहज, सुंदर और स्वाभाविक रूप से साधित होने की संभावना है, तब इस योग साधन-प्रणाली का संशोधन करने, इसकी उन्नति का उपाय करने, इसकी शिक्षा देने तथा सर्वसाधारण के सामने योग के उदार मत और भाव उच्च आदर्श रखने की विशेष आवश्यकता है। यह सर्वसाधारण को समझा देना होगा कि वास्तविक योग क्या है? वह कितने रूपों में विभक्त है? उसकी साधन-प्रणाली क्या है? किस तरह संसार के जीवों के हित-साधन में उन्हें आनंद प्रदान करने में इसका प्रयोग किया जा सकता है। कर्मयोगी किस प्रकार कर्म के रहस्य को समझकर अनासक्त, निष्काम, फलाकांक्षा से रहित होकर केवल भगवत्प्रीति के लिए कर्म किया करते हैं, यह सुंदर रूप से समझा देना होगा। ज्ञानयोगी इंद्रियों को संयत करके, चित्त को शुद्ध और शांत करके स्वरूप प्रतिष्ठ, आत्मभाव में स्थित होकर किस प्रकार समाधि-योग द्वारा परमात्मा में तन्मय हुए रहते हैं, यह भी समझ लेना होगा।

साधन-राज्य के योगतत्त्व का अर्थ यही है कि हमारे भीतर भगवान की अनंत शक्ति, अनंत ज्ञान, अनंत प्रेम और आनंद निहित है। हमारी कामना, वासना, आसक्ति, हमारी अज्ञानता, हमारे कुसंस्कार, हमारा स्वार्थ, आत्मसुख की स्पृहा, अहंकार और प्रतिष्ठा का मोह आदि उस भगवत् शक्ति के विकास में बाधा पहुँचाते हैं। अतएव हम जितना ही इन सब बाधाओं से मुक्त, शुद्ध, शांत, पवित्र होंगे उतने ही भगवत्-भाव हमारे अंदर प्रकाशित होंगे और हम साधन राज्य में सफलता प्राप्त करेंगे।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कर्मयोग की अनिवार्य आवश्यकता

जीवन में पूर्णता प्राप्ति के लिए हमारे पूर्वज मनीषियों ने तीन मार्ग बताए हैं। ज्ञानयोग, भक्तियोग और कर्मयोग। ज्ञानयोग, उच्च बौद्धिक चेतना संपन्न, सूक्ष्मदर्शी, चिंतन प्रधान भाव अर्जन करने की प्रेरणा देता है और भक्तियोग में हृदय की शुद्धि, आत्मसमर्पण की उत्कट भावना, अनन्य प्रेम को आवश्यक बताया गया है। किंतु कर्मयोग का समावेश भी इन दोनों के साथ अनिवार्य माना गया है।

आज के संघर्षमय युग में तो कर्मयोग 'युगधर्म' कहा जाए तो कोई अत्युक्ति न होगी, क्योंकि इसकी साधना, आचरण, सरलता से किए जा सकते हैं। महाभारत का युद्ध शुरू होने को था, दोनों सेनाएँ आमने-सामने खड़ी थी। बीच में खड़े मोहग्रस्त विक्षिप्त मन अर्जुन को श्रीकृष्ण ने कहीं कंदराओं में एकांत में बैठकर तत्त्वज्ञान की साधना के लिए नहीं कहा था और न भावभक्ति में विह्वल हो निज सुधि बिसारकर परमात्मा को पुकारने के लिए ही कहा।

समस्त गीता का एकमात्र निष्कर्ष अर्जुन को निष्काम कर्मयोग की शिक्षा देकर महाभारत के युद्ध में प्रवृत्त करना था, जिसमें स्वयं अर्जुन की भी प्रतिष्ठा, कर्तव्यपरायणता, मुक्ति एवं पूर्णता सन्निहित थी। मनुष्यमात्र जीवन के महाभारत संग्राम में खड़ा है। द्विविधा, संघर्ष, जीवन के कटु अनुभव, अवरोध, कठिनाइयों में मनुष्य जहाँ विपन्न-सा खड़ा है, वहाँ गीता का कर्मयोग ही उसे आगे बढ़ाने का मार्ग खोलता है। कर्मयोग से मनुष्य के आंतरिक एवं बाह्य जीवन का परिष्कार होता है। अनेक जन्मों की ग्रंथियों का निराकरण हो जाता है। मन शक्तिशाली और शुद्ध बनता है। आंतरिक जीवन के साथ ही बाह्य जीवन भी सफल और सुंदर बनता है।

कर्मयोग में प्रवृत्त होने से मनुष्य और समाज के निकट संपर्क स्थापित होते हैं। जिससे मनुष्य में एकाकीपन की भावना, घबराहट, डर-संकोच आदि की वृत्तियाँ दूर होकर मनुष्य की गति एवं क्षमताओं

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

में वृद्धि होती है। बहुधा कई लोगों को दूसरों से मिलने-जुलने, बात-चीत करने में एक प्रकार की घबराहट, बेचैनी-सी होती है। जिसके लिए लोग दूसरों के संपर्क से बचने का प्रयत्न करते हैं। किंतु इससे मनुष्य का व्यक्तित्व अविकसित ही रह जाता है। लेकिन कार्यक्षेत्र में उतरने पर, कर्मयोग का अवलंबन लेने पर तो मनुष्य को दूसरों से संपर्क स्थापित करना ही पड़ता है। दूसरों के साथ मिल-जुलकर हम किस प्रकार काम करें, कैसे सोचें और चाहना करें? इसी विज्ञान को कर्मयोग कहा गया है। अकर्मण्य न बैठकर अच्छे, रचनात्मक कार्यों में लगे रहना अपने मन को शक्तिशाली बनाने का एक सरल उपाय है। व्यर्थ बैठने पर ही मनुष्य के मन में निकम्मी बातें उठनी शुरू होती हैं। जिनसे मानसिक कमजोरियाँ बढ़ती हैं। कुविचारों की बढ़ोत्तरी कुमार्ग की प्रेरणा देती है। इससे चरित्र बिगड़ता है, स्वभाव गंदा होता है और मनोबल क्षीण होने लगता है। मनुष्य तरह-तरह के शारीरिक और मानसिक रोगों से घिर जाता है। निरंतर किसी काम में लगे रहने से खाली दिमाग शैतान की दुकान नहीं बन पाता, बुरे विचारों के आने-जाने के लिए कोई समय ही नहीं रहता। इसके अतिरिक्त काम की सफलता से आत्मविश्वास बढ़ता है और इससे मनुष्य में आत्मनियंत्रण की शक्ति बढ़ती है। इस तरह काम में लगे रहने से मनुष्य की शारीरिक और मानसिक शक्तियों का विकास होता है और इनके फलस्वरूप ही बाह्य जीवन में सफलता मिलती है।

श्रद्धा, निष्ठा एवं लगन के साथ किया गया कोई भी काम मनुष्य को सद्भाव, उच्च विचार, उत्साह, संतोष, शांति प्रदान करता है। किसी भी भले काम में लगकर मनुष्य बाह्य संसार में कुछ भी सफलता प्राप्त करे, किंतु आंतरिक लाभ शांति, आत्म प्रसाद, उच्च विचार सद्गुणावलोकन की दृष्टि तो प्राप्त होती ही है। मानसिक विकारों पर नियंत्रण प्राप्त होकर नैतिक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

तथा बौद्धिक उन्नति होती है। कुल मिलाकर कर्मयोगी को अंतर्बाह्य जीवन में सफलता ही मिलती है।

कुविचारों और दुष्प्रवृत्तियों से बचने के लिए अपनी समस्त शक्ति को रचनात्मक कार्यों में लगा देना श्रेयस्कर होता है। इससे एक तो दुष्कर्मों के लिए समय ही नहीं मिलेगा, साथ ही कुविचारों को फलित होने का मौका भी प्राप्त नहीं होगा। अकर्मण्यता की स्थिति में अनेक दूषित मनोभाव उत्पन्न होते रहते हैं, बढ़ते हैं और भयंकर रूप धारण कर लेते हैं। काम में लगे रहने पर दूषित भावों की शक्ति रचनात्मक कार्यों में परिवर्तित हो जाती है। सक्रिय रहने पर मनुष्य के अच्छे-बुरे दोनों तरह के भावों का समन्वय हो जाता है। सब मिलकर कार्य की पूर्णता में लग जाते हैं। अतः अंतर्द्वंद्व की नौबत ही नहीं आती।

चिंता से मुक्ति के लिए सक्रिय रहना आवश्यक है। इससे इच्छाशक्ति भी बढ़ेगी और दूषित भावों का भी शोधन होगा। कोई भी काम जो सरल एवं अपनी रुचि के अनुकूल हो, उसमें लग जाना चाहिए। चिंता, क्रोध, शोक आदि हीन भावों से ग्रस्त व्यक्ति के लिए तो अकर्मण्य रहना बड़ा भारी कुपथ्य है, इससे रोग दिन दूना और रात चौगुना बढ़ता ही जाता है। दूसरों की सेवा, घर का काम, अध्ययन, शिल्प, कला, साहित्य-साधना आदि छोटे-बड़े कार्यों में से अपनी रुचि के अनुसार निर्णय कर उसमें दत्तचित्त होकर लग जाना चिंता, मानसिक विकार, उद्विग्नता आदि से बचने का सरल उपाय है। जो लोग अपने कार्यों में दत्तचित्त होकर नहीं लगे रहते बहुधा चिंताएँ उन्हें ही सताती हैं। जो व्यक्ति दृढ़ता के साथ अपने आपको काम में लगा सकता है वही विकारों से छुटकारा पाने में समर्थ हो सकता है। कर्मशील व्यक्ति भूत, भविष्य की उधेड़-बुन में उलझा नहीं रहता, वरन वर्तमान को महत्त्व देता है और अपने काम में लगा रहता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कर्मयोग, जीवन में होने वाली क्षति, हानि आदि के लिए रोने, शोक करने, दु:ख मानने की इजाजत नहीं देता। वहाँ तो पद-पद पर नवसृजन, निर्माण के द्वारा क्षति, हानि के गढ्ढों को भर देने का विधान है और यह सच भी है कि किसी हानि, क्षति के लिए दु:ख मनाने, शोक करने से कोई लाभ नहीं होता, वरन उसकी पूर्ति करने में लग जाना ही उसका समाधान है, जो कर्मयोग, सक्रियता से ही संभव है। बिना क्रिया के तो सृजन और निर्माण के काम कैसे होंगे? और बिना सृजन के पूर्ति भी संभव न होगी। धन की क्षति पूर्ति के लिए धन कमाने के प्रयत्न करना, परीक्षा में असफल होने पर पढ़ाई की तैयारी में लग जाना, इसी तरह अन्य सभी क्षेत्रों में यही नियम लागू होता है। चिंता करते रहने या हानि का दु:ख मनाते रहने से वह क्षतिपूर्ति न हो सकेगी, वरन इससे तो शारीरिक और मानसिक बल ही घटना आरंभ हो जाएगा, जिससे उस क्षतिपूर्ति में और भी अधिक बाधा पड़ेगी। "**बीती ताहि बिसारदे आगे की सुधिलेय**" की नीति अपनाकर ही कोई व्यक्ति अपनी क्षतियों को पूर्ण कर सकता है। जो मनुष्य सतत अपने कर्तव्य कर्म में लगा रहता है उसे किसी दूसरे की निंदा-स्तुति करने का अवकाश नहीं रहता। कर्मरत के लिए एक क्षण भी इन बेकार बातों के निमित्त निकालना मुश्किल है। किसी भी व्यक्ति को अपने कार्य की सिद्धि के लिए दूसरों के गुणों को देखने, समझने और उनका अनुकरण करने की आवश्यकता होती है। कर्मयोगी को दूसरों के गुण-अच्छाइयों को देखने की आदत बन जाती है और दोष-दर्शन के लिए न उसे उत्साह रहता है और न अवकाश। छिद्रान्वेषण, परदोष दर्शन, असद्भाव विचार प्राय: उन्हीं लोगों में देखे जाते हैं जो अकर्मण्य होते हैं।

जल के बहते हुए प्रवाह में जिस प्रकार कूड़ा-करकट अपने आप बहता चला जाता है, उसी प्रकार कर्तव्यपरायण व्यक्ति के मन में कुविचार भी टिक नहीं पाते। शरीर और मन की अनेक विकृतियाँ उनमें पाई जाती हैं जिन्हें फालतू बैठे रहना पड़ता है। चिंता, शोक,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उद्वेग के लिए जिन्हें अवसर ही नहीं मिलेगा, वे कैसे इन झंझटों में पड़े रहेंगे? काम में थका हुआ मनुष्य गहरी नींद सो जाता है और फिर उसे रातभर जाग-जागकर कुकल्पनाएँ करते रहने का अवसर ही नहीं मिल पाता।

अच्छे, आदर्श, रचनात्मक, उपयोगी और आत्मसंतोष देने वाले कार्यों में संलग्न रहकर मनुष्य को जो प्रफुल्लता मिलती है, वह और किसी प्रकार उपलब्ध नहीं हो सकती। कामनाओं और लालसाओं को छोड़कर, खेल और अभिनय की तरह उदात्त बुद्धि से जो कार्य करते हैं, उनके लिए तो यह जीवन ही नहीं, सारा संसार और उसका कार्य भी आनंदमय बन जाता है। कर्म की महत्ता अनंत है। इसीलिए उसे योग कहा गया है। अन्य योग-साधनाओं की भाँति ही मनुष्य कर्मयोग की साधना से पूर्णता प्राप्त कर सकता है।

सामान्य जीवन में महानता का समावेश

यह बात सही है कि महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति ही जीवन में महान बनते हैं। जिनकी आकांक्षा रोटी-कपड़ा, वास-विलास और बाल-बच्चों तक ही सीमित हैं, वे 'जनसाधारण' के अतिरिक्त और क्या हो सकते हैं?

मनुष्य अपनी आकांक्षाओं के अनुरूप ही पुरुषार्थ एवं प्रयत्न करता है। सामान्य इच्छाओं वाले व्यक्ति का कर्तृत्व केवल रोटी के लिए और बीबी-बच्चों की परवरिश भर को कुछ पैसे कमा लाने तक ही सीमित रहता है। किसी उन्मुक्त क्षेत्र में निकल, किसी उच्च कर्तृत्व के लिए संघर्ष करना उसकी कल्पना के परे की बात होती है। वह इतने को ही बहुत बड़ी बात समझता है कि किसी प्रकार रोटी खा ली जाए, कपड़े पहन लिए जाएँ और जो हैं, उन बच्चों को पाल-पोसकर किसी छोटे-मोटे काम में लगा दिया जाए और उनके शादी-ब्याह कर दिए जाएँ। अपनी आकांक्षा के अनुसार उनके बहुमूल्य मानव जीवन की इतने में ही इतिश्री हो जाती है। ऐसे अकल्पनाशील और अमहत्त्वाकांक्षी व्यक्तियों की परिधि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बहुत ही संकुचित होती है। वे कोई ऐसा काम नहीं कर सकते, जिससे कि उनके पीछे संसार कभी-कभी उन्हें याद कर लिया करे। संसार तो दूर ऐसे संकुचित आकांक्षी को उसके बच्चे भी शीघ्र भूल जाते हैं। यों जीवन-यापन तो सभी को ही करना पड़ता है तथापि उस जीवनगति में यदि एक भी छोटा-मोटा चिह्न न छोड़ा गया, तो मानो उसका जन्म लेना, न लेना बराबर ही हुआ। वह आया और संसार को कुछ दिए बिना ही उसका खा-पीकर चला गया और पीछे अपनी ही तरह के बिना कुछ दिए, खा-पीकर चले जाने वाले बच्चों के रूप में अपने दो-चार प्रतिनिधि छोड़ गया। इस प्रकार के मानवजीवन और पशुजीवन में कोई अंतर नहीं माना जा सकता। पशु भी तो यही सब कुछ करते हैं। आहार, निद्रा और मैथुन इन तीन प्रवृत्तियों के साथ जीते और चले जाते हैं। उनके पास भी न कोई महत्त्वाकांक्षा होती है और न कल्पना।

यह बात गलत नहीं कि मनुष्य का यह सामान्य जीवन ही संसार की स्वाभाविक एवं सामान्य गति है। सभी को ऊँची कल्पनाएँ, महान आकांक्षाएँ और असाधारण कर्तृत्व प्राप्त नहीं होता। यद्यपि परमात्मा की ओर से ऐसा कोई पक्षपात अथवा प्रतिबंध नहीं होता तथापि अपनी प्रवृत्तियों और अपने जीवन के प्रति निजी दृष्टिकोण के कारण ही कोई सर्वसाधारण की परिधि तक ही रह जाते हैं और संसार में कोई महनीय अथवा स्मरणीय कार्य नहीं कर पाते हैं।

मनुष्य कोई यशस्वी काम न कर पाए, यह खेद का विषय नहीं है। खेद का विषय यह है कि अपनी सामान्य जीवनगति में भी जिन महनीयताओं को समाविष्ट किया जा सकता है, उनको भी नहीं करता। रोटी-रोजी एक सामान्य काम है, किंतु जब इसमें इस जीवित अभिलाषा को जोड़ दिया जाता है कि मुझे रोटी-रोजी कमानी है और शान, सम्मान के साथ कमानी है और यथासंभव अच्छी कमानी है, तब यही सामान्य वृत्ति सामान्यता से कुछ ऊपर उठ जाती है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बच्चे होना एक सामान्य प्रक्रिया है। लोगों को होते ही हैं। किंतु इनके विषय में यह भाव—"जिस भगवान ने पैदा किए हैं, वही पालेगा अथवा सब अपना-अपना भाग्य लेकर आते हैं, जीना है तो नंगे-भूखे रहकर भी जी जाएँगे। ज्यादा क्या करना, नमक-रोटी मिलती रहे, किसी तरह पल-पुष जाएँ, सब अपना काम धंधा करके पेट पाल लेंगे।" इस प्रकार के मृत भाव मानवता के प्रतिकूल हैं। यह सामान्य मनोवृत्ति नहीं, हीन वृत्ति है। यदि इसी सामान्यता में यह उत्साह जोड़ दिया जाए कि बच्चे भगवान ने दिए हैं, तो उन्हें अपनी शक्ति भर अच्छी प्रकार पालने, पढ़ाने, लिखाने और अपने से आगे बढ़ाने में कोई कसर न रखेंगे। इस बात का पूरा प्रयत्न करेंगे कि यह जीवन में उन्नति कर सकें और समाज के भद्र नागरिक बन सकें, तो बच्चों संबंधी साधारण सामान्यता, असामान्यता में बदल जाए। इसमें न तो किसी महान आकांक्षा का बोझ ही है और न जीवन में किसी बड़े संघर्ष की संभावना।

किंतु दुःख की बात तो यह है कि लोग सामान्य जीवन ग्रहण करके भी तो उसे उत्साहपूर्वक बिताना नहीं चाहते। अपनी सामान्य परिधि में किसी असामान्य भाव का प्रवेश निषेध रखना चाहते हैं। अपने सीमित जीवन को मन, वचन, कर्म से और अधिक सीमित बना लेने में न जाने कौन-सा त्याग, वैराग्य अथवा साधुता समझते हैं। यदि किन्हीं कारणों से अपनी सीमित परिधि से बाहर नहीं निकला जा सकता, तो उसी में रहकर ऊपर तो उठा ही जा सकता है।

यदि अपनी सीमित परिधि में रहकर ही कुछ ऊपर उठने की आकांक्षा ही जगा ली जाए, तब भी तो संतोष लायक बहुत कुछ किया जा सकता है। लोकरंजन न सही, आत्मरंजन तो हो ही सकता है। आकांक्षा के अनुसार ही मनुष्य का कर्तृत्व प्रस्फुट होता है। उसकी प्रेरणा से मनुष्य के भीतर सोई पड़ी कल्पनाएँ और शक्तियाँ प्रबुद्ध होने लगती हैं। उसके मानस का महापुरुष समय के गर्भ में

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आ जाता है और तब उसी के अनुसार विचार और परिस्थितियाँ बनना आरंभ हो जाती हैं और शीघ्र न सही, जीवन की पूरी अवधि में अथवा जन्म-जन्मांतर में कहीं-न-कहीं समय के गर्भ में आया मनुष्य का यह मानस महापुरुष अवतरित होकर भूतकाल के सारे सामान्य जीवनों और संसार के समग्र ऋणों को सूद-दर-सूद के साथ चुका देता है। किंतु कहाँ, कितने मनुष्य होते हैं, जो अपनी नितांत सामान्यता में किंचित उच्चता की आकांक्षा मिलाकर इन संभावनाओं को भवितव्य बना लें। छोड़िए, रोटी-रोजी और बाल-बच्चों की सामान्य परिधि में भी, यदि महानताओं की कल्पनाओं से भय लगता हो, वे आपको अपने अनुरूप न लगती हों, उनसे संबंधित आवश्यक पुरुषार्थ एवं संघर्ष का उत्साह अपने में न पाते हों, महत्त्व का समावेश छोड़िए और इस ओर आ जाइए, जहाँ पर बिना किसी प्रकार का संघर्ष अथवा कष्ट किए, शांति एवं निरापद रूप में महानता की उपलब्धि हो सकती है। वह है जनसेवा का क्षेत्र। समाज में अग्रस्थ हो रहने की आकांक्षा तो कुछ संघर्ष एवं कष्टकर हो सकती है, किंतु किसी की सेवा करने, सहायता एवं सहयोग करने में तो ऐसा कोई भय नहीं है। दूर न जाइए, अपने पड़ोस में देखिए कि कोई बीमार तो नहीं है, यदि है तो दवा लाने से उसकी सुश्रूषा करने तक जो भी आप कर सकते हों करिए। यदि आपकी सहायता की उसे आवश्यकता नहीं है, तो उसे देखने तथा शीघ्र स्वास्थ्य लाभ की मंगल कामना देने में न तो आपका कुछ व्यय होगा और उसको भी इस सहानुभूति में सुख अनुभव होगा।

यदि आप पढ़े-लिखे हैं तो पास-पड़ोस में शिक्षा का वातावरण बना सकते हैं। किसी नियत स्थान पर नित्य-नियम से किसी सद्ग्रंथ का पाठ करके लोगों को सुना और समझा सकते हैं। निरक्षर स्त्री-पुरुषों के पत्र लिख-पढ़ सकते हैं। पितृहीन बच्चों का माँ की तरफ से पाठशालाओं में प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। गरीब बच्चों की फीस माफी के लिए प्रयत्न करने में तो किसी प्रकार का व्यय

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अथवा भय नहीं है। अपने सदाचरण, सद्व्यवहार तथा शालीनता से दूसरों के हृदय में अपना स्थान बना सकते हैं। बड़े-बूढ़ों के प्रति आदर तथा आत्मीयता की अभिव्यक्ति से उनकी सद्भावना तथा सुचरित्र के अधिकारी बन सकते हैं।

घरों और मुहल्ले की गलियों में यदि गंदगी रहती है तो उनकी सफाई की प्रेरणा तथा पहल-कदमी द्वारा अपने को दूसरों की दृष्टि में उठा सकते हो। भूले को राह और परदेशी को स्थान बतला आने, जैसे न जाने संसार में कितने साधारण एवं सामान्य कहे जाने वाले काम हो सकते हैं, जिन्हें यदि पूर्णरूप से प्रेम और सेवा भाव से किया जाए, तो वे काम भले ही अपने में महान न हों, किंतु उनके करने वाला अवश्य महान बन जाता है। आवश्यकता पड़ने पर लोग उसे याद करते हैं। अवसर आने पर चर्चा करते हैं और न रहने पर उसके लिए रोते भी हैं। सेवा एक ऐसा वशीकरण मंत्र है, जो अपना प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहता।

यदि इसमें भी कोई भार अथवा स्वाभिमान का अवरोध आता हो तो आइए अपने तक केंद्रित हो जाइए। देखिए आप में लोभ, मोह, क्रोध अथवा अहंकार आदि दोषों में से कौन-सा दोष मौजूद है। जिस दोष को अपने अंदर पाएँ, उसे तत्काल दूर करने में जुट जाएँ, यदि लोभ है तो तुरंत त्याग-वृत्ति को जगाकर उसे सामुख्य में खड़ाकर दीजिए। क्रोध है तो क्षमाशीलता का अभ्यास कीजिए। यदि मोह का अंधकार दिखलाई देता है, तो ज्ञान का प्रकाश करने के लिए स्वाध्याय अथवा सत्संग में लग जाइए और यदि अहंकार के चिह्न दिखाई देते हों, तो बच्चों तक से आदर और विनम्रतापूर्वक व्यवहार करना प्रारंभ कर दीजिए।

इस प्रकार अपने मनोमंदिर को, आत्मा के प्रकाश के प्रवेश के योग्य बना डालिए। जिस दिन आप अपने को दोष मुक्तकर आत्मप्रकाश की संभावना निश्चित कर लेंगे, उस दिन आप इतने महान हो जाएँगे, जितना कोई यशस्वी ऐतिहासिक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पुरुष भी नहीं होता। हो सकता है कि इतना कर लेने पर भी आपको कोई जान न पाए और आप संसार से गुमनाम विदा हो जाएँ अथवा कोई स्मारक या चिह्न न छोड़ पाएँ तथापि आपकी महानता में जरा भी संदेह नहीं हो सकता। आत्मोन्नति संसार की किसी भी बड़ी-से-बड़ी उन्नति से उच्च एवं महनीय होती है।

किंतु यह सब हो तभी सकता है, जब आप अपने में उसके लिए आकांक्षा को जन्म दें और यह विश्वास कर लें कि जीवन में सर्वमान्य से बढ़कर असामान्यता की ओर बढ़ना ही मनुष्यता की शोभा और ध्येय है। अधो-योनियों की चौबीस लाख सीढ़ियों को चढ़कर मानवजीवन की उच्चता प्राप्त करने वाले हम मनुष्य यदि आलस्य, प्रमाद अथवा दीनता के कारण हीन जीवनपद्धति अपनाकर अपना पतन कर लें—यह तो किसी प्रकार भी शोभनीय नहीं है।

सादे एवं सामान्य जीवन में भी यदि विचारों को उच्च रखा जाए जो कुछ सोचा, समझा और किया जाए, वह उदात्त एवं आदर्श भावनाओं के अंतर्गत सोचा तथा किया जाए, तो कोई कारण नहीं कि हम सामान्य जीवन-परिधि में रहते हुए भी महान न बन जाएँ, आत्मा की महानता ही तो वास्तविक तथा सर्वोपरि महानता है, जिसे ऊँचे-ऊँचे अथवा आश्चर्यजनक काम करके ही नहीं, केवल सेवाभाव तथा आत्मपरिष्कार के द्वारा भी पाया जा सकता है और यह किसी भी स्थिति अथवा वर्ग के व्यक्ति के लिए असंभव नहीं, बशर्ते उसके लिए हृदय में जिज्ञासा तथा आकांक्षा का जागरण भर हो जाए।

कर्मदेव का अपमान न करें

प्रत्येक कार्य जीवन में महान संभावनाएँ लेकर आता है। छोटे-से-छोटा काम भी जीवन-विकास के लिए उसी तरह महत्त्वपूर्ण है जिस तरह एक छोटा बीज, जो कालांतर में विशाल वृक्ष बन जाता है। किसी मनुष्य का मापदंड उसकी आयु नहीं, वरन उसके काम ही हैं, जो उसने जीवन में किए हैं। इसलिए कर्मवीरों ने काम को

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

ही जीवन का आधार बनाया। एक मनीषी ने तो यहाँ तक कह दिया है— "हे कार्य! तुम्हीं मेरी कामना हो, तुम्हीं मेरी प्रसन्नता हो, तुम्हीं मेरा आनंद हो।" इसमें कोई संदेह नहीं कि तुच्छ से महान, असहाय से समर्थ, शक्तिशाली, रंक से राजा, मूर्ख से विद्वान, सामान्य से असामान्य बनाने वाले वे छोटे से लेकर बड़े सभी कार्य हैं, जो समय-समय पर हमारे सामने आकर उपस्थित होते हैं। किंतु एक हम हैं जो अनेक शिकायतें करके अपने कर्मदेव का अपमान करते हैं और वह लौट जाता है हमारे द्वार से। तब पश्चात्ताप करने और हाथ मलने के लिए ही विवश होना पड़ता है हमको।

कभी-कभी हम शिकायत करते हैं, "यह काम तो बहुत छोटा है, यह मेरे व्यक्तित्व के अनुकूल नहीं है, मैं इन तुच्छ कामों के लिए नहीं हूँ।" आदि-आदि। लेकिन हमने कभी यह भी सोचा है, उद्‌गम से आरंभ होने वाली नदी प्रारंभ में इतनी छोटी होती है कि उसे एक बालक भी पार कर सकता है। एक विशाल वृक्ष जो बहुतों को छाया दे सकता है, मीठे फलों से तृप्त कर सकता है, अनेक पक्षियों का बसेरा होता है, आरंभ में एक छोटा-सा बीज ही था, जो तनिक-सी हवा के झोंके से उड़ सकता था, एक छोटी-सी चिड़िया भी उसे निगल सकती थी, एक चींटी उसे उठाकर ले जा सकती थी। बहुमूल्य मोती प्रारंभ में एक साधारण-सा बालू का कण ही होता है।

यही स्थिति हमारे सामने आने वाले कार्यों की भी है। प्रत्येक महान और असाधारण बनाने वाला काम भी प्रारंभ में छोटा, सामान्य लगता है। किंतु कर्मवीर जब उसमें एकाग्र होकर लगते हैं, वे ही महान असाधारण महत्त्व के कार्य बन जाते हैं।

क्या आपको याद है कि उस वैज्ञानिक बनने की आकांक्षा रखने वाले बालक एडीसन को उसके शिक्षक ने पहले घर में झाड़ू लगाने का काम सौंपा था और जब शिक्षक ने देखा कि इस कार्य में भी बालक की वैज्ञानिक प्रतिभा और गहरी दिलचस्पी काम कर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रही है, तो उसे विज्ञान की शिक्षा देनी प्रारंभ की और वह अपने इस सद्‌गुण को विकसित करता हुआ महान वैज्ञानिक बना। प्रत्येक महान बनने वाले व्यक्ति के जीवन का प्रारंभ उन छोटे-छोटे कार्यक्रमों से ही होता है जिन्हें हम छोटे, तुच्छ समझकर मुँह फेर लेते हैं। उन छोटे-छोटे कार्यों का जिन्हें हम छोटे, महत्त्वहीन, सामान्य कहकर टाल देते हैं, हमारे जीवन में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। उन पर ही हमारे जीवन की महानताओं का भवन खड़ा होता है। एक-एक कण मिलकर ही वस्तु का आकार-प्रकार बनाते हैं। विशालकाय इंजन में एक कील का भी अपना महत्त्व होता है। उसे निकाल दीजिए तो सारा इंजन बेकार हो जाएगा। बड़े भवन में एक छोटे-से पत्थर को भी अस्थिर और ढीला-ढाला छोड़ दिया जाए तो उसके गिर जाने का खतरा रहेगा। हमारे जीवन में आने वाले छोटे-छोटे कार्य मिलकर ही महान जीवन का सूत्रपात करते हैं लेकिन जब हम अपने कामों को छोटे और महत्त्वहीन समझकर उन्हें भली प्रकार नहीं करते, तो वे हमें बहुत बड़ा शाप देते हैं, जिससे हमारे जीवन की सफलता अधूरी और अपंग रह जाती है।

काम जो सामने खड़ा है उसमें रुचि-अरुचि का प्रश्न उठाना उसी तरह अयुक्त है जिस तरह गरमी के दिनों में सरदी की कामना करना। गरमी है तो इसी में रहने का अभ्यास डालना पड़ेगा, जो काम हमारे सामने है उसे पूरा करने में जुट जाना ही हमारा वर्तमान धर्म है। महत्त्वाकांक्षा या रुचि के अनुसार सब कुछ तुरत-फुरत नहीं हो जाता है। धीरे-धीरे ऐसी भी परिस्थितियाँ पैदा हो जाती हैं, जब मनुष्य को अपनी रुचि के अनुसार काम करने को मिले। किंतु यह तभी संभव है जब हम वर्तमान में जो काम सामने हैं, उसे पूरा करने में लगे रहें। रुचि के अनुकूल काम कब मिलेगा, यह भविष्य पर निर्भर है किंतु जो आवश्यक और अनिवार्य है, वह है अपने प्रत्येक काम से प्यार करना, उसमें रस लेना और बड़ी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

तन्मयता लगन के साथ उसे पूर्ण करना। इसी से हमारा उद्धार हो सकेगा।

इच्छानुसार काम की प्रतीक्षा में मनुष्य को संपूर्ण जीवन ही बिता देना पड़े, तो कोई संदेह नहीं कि ऐसे व्यक्ति के लिए जीवन में कभी भी ऐसा काम नहीं आएगा। बिना रुचि के किए गए काम न पूर्ण होते हैं और न उनका कोई ठोस परिणाम ही मिलता है।

अपने काम में रुचि-अरुचि का प्रश्न उठाना अनुपयुक्त है। यह एक तरह से अपनी अकर्मण्यता और आलस्य को प्रोत्साहन देना है। मानव मन की यह विशेषता है कि वह जिस प्रकार के भावों से प्रभावित होता है वैसा ही बनता जाता है। काम में रुचि-अरुचि का अभ्यस्त मन आगे चलकर ऐसा बन जाता है कि उसे किसी भी काम में रुचि नहीं रहती और वे उसे अधूरा छोड़ देते हैं। ऐसे व्यक्ति एक काम को हाथ में लेते हैं, नए-नए काम आरंभ करते रहते हैं और थोड़े समय के बाद उससे भी अरुचि हो जाती है तो दूसरे में लगते हैं। तात्पर्य यह है कि वे किसी भी काम में दृढ़ स्थिर नहीं रह पाते। दूसरी ओर जब उपस्थित काम में हम प्रयत्नपूर्वक लग जाते हैं, तो थोड़े समय में ही रुचि भी वैसी ही बन जाती है। इसलिए रुचि-अरुचि का प्रश्न उठाना असंतुलित मनोभूमि का कारण है। आलस्य-प्रमाद की प्रेरणा से ही मनुष्य इस तरह की मीन-मेख निकालता रहता है।

कई बार अपने काम में धैर्य और निष्ठा का अभाव हमें सफलता के द्वार से वापस लौटा देता है। तब हमारी शिकायत होती है "कब तक करते रहेंगे।" मनुष्य की यह एक स्वाभाविक कमजोरी होती है कि वह तुरत-फुरत अपने काम का परिणाम देख लेना चाहता है। जिस तरह बच्चे खेल-खेलने में आम की गुठली मिट्टी में गाड़ते हैं और उसे जल्दी-जल्दी बार-बार उखाड़कर देखते हैं कि कहीं आम का पेड़ उग तो नहीं आया? वे भोले बालक यह नहीं जानते कि कहीं कुछ मिनट में ही आम का पौधा कभी उगता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है ? अपने काम के परिणाम के बारे में जल्दी-जल्दी सोचना इसी तरह की बचकाना प्रवृत्ति है। यह निश्चित है कि अच्छे उद्‌देश्य से भली प्रकार किया गया काम समय पर अपने परिणाम अवश्य प्रदान करता है। लेकिन किसी काम का फल कब मिलेगा, इसका ठीक-ठीक समाधान सामान्य व्यक्ति नहीं कर सकता। इसलिए अपने काम के परिणाम के बारे में अधिक सोच-विचार न करके कर्मवीर के सामने एक ही मार्ग है कि वह जब तक सफलता न मिले अपने काम में डूबा रहे। हम तन्मय होकर काम में लगे रहें। उसमें हमको गहरी निष्ठा हो, अपने काम के सिवाय दूसरी बात हम न सोचें तो कोई संदेह नहीं कि एक दिन सफलता स्वयं हमारा दरवाजा खटखटाएगी।

वस्तुतः काम को व्यापार न माना जाय, काम तो काम है। जिस तरह कलाकार अपनी कला से प्यार करता है, उसमें तन्मय होकर निष्ठा के साथ साधना करता है, उसी तरह काम भी कला समझ कर किया जाए। हम अनुभव करेंगे कि जिस तरह कलाकार को अपनी कला-साधना से मिलने वाला आनंद, स्फूर्ति प्रसन्नता, कृति के भौतिक मूल्य से मूल्यवान होती है, उसी तरह कर्म-साधना हमें वह आनंद, प्रसन्नता, चेतना प्रदान करेगी जो उसके भौतिक परिणाम से कहीं अधिक कीमती होंगे।

आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने काम से प्यार करें, उसकी इज्जत करें। कर्म-साधना में पूर्ण तन्मय हो जाएँ। काम के प्रति छोटे-बड़े, रुचि-अरुचि, 'कब तक करेंगे' आदि शिकायतें न करें। तभी हम देखेंगे कि हमारा काम ही हमें जीवन के महान वरदानों से परिपूर्ण कर देगा। वस्तुतः काम करना हमारे स्वभाव का आवश्यक अंग होना चाहिए। जो काम हमारे सामने है, यदि हम भली प्रकार उसे करने को तत्पर हो जाते हैं तो कोई संदेह नहीं कि एक दिन वह भी आएगा जब हमें अपनी रुचि के अनुसार बड़े-बड़े काम मिलेंगे और उनसे हमारी महानता का पथ प्रशस्त हो सकेगा।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

साहसिकता—कर्मयोग की कसौटी

मनुष्य में शक्ति का अभाव नहीं। ईश्वर का पुत्र होने के नाते वह अपने पिता के समस्त संपदाओं का सहज अधिकारी है। जो उस शक्ति पर विश्वास करते हैं, जगाते और उपयोग करते हैं, वे इस संसार में शक्तिवान महापुरुषों के रूप में अपना अस्तित्व व्यक्त करते हैं।

कितने ही मनुष्य ऐसे हैं, जो अपना स्वरूप नहीं जानते, अपनी शक्ति को नहीं पहचानते और उन उज्ज्वल संभावनाओं पर विश्वास नहीं करते, जो थोड़े-से प्रयत्न से ही जगाई जा सकती हैं। यह अज्ञान ही मनुष्य के प्रगति-पथ को अवरुद्ध करता है। अभाव सामर्थ्य का नहीं, कमी उसकी जानकारी की है। अपने बारे में अनजान बना हुआ मनुष्य वस्तुतः अपने उज्ज्वल भविष्य की संभावनाओं से ही अनजान है।

साहस के आधार पर लोग आगे बढ़ते हैं। उन्नति के अवसर हर घड़ी सामने उपस्थित रहते हैं, पर उनका लाभ हर कोई नहीं उठा पाता। कायर और आत्महीनता से ग्रसित व्यक्ति सदा शंकाशील रहते हैं, उन्हें इस पर विश्वास ही नहीं होता है कि वे भी महत्त्वपूर्ण हैं और महत्त्वपूर्ण कार्यों को उसी तरह कर सकते हैं जैसे कि भूतकाल में कभी किन्हीं ने किए हैं। साहसी आगे बढ़ते हैं तो परिस्थितियाँ भी साथ देती हैं और कितने ही सहयोगी भी मिल जाते हैं, किंतु जिन्हें अपने ऊपर भरोसा ही नहीं, जिन्होंने अपनी सामर्थ्य को समझा ही नहीं, वे डरते-काँपते यही सोचते रहेंगे कि उनसे कुछ बनने वाला नहीं, वे किसी बड़े काम में सफलता नहीं पा सकते। ऐसे लोग सचमुच असफल ही रहते हैं। आत्महीनता अनुभव करने वालों को असफलता ही उपलब्ध होती है।

धन, स्वास्थ्य, पद, सत्ता, शस्त्र, सहयोग आदि की सुविधाओं का कहने लायक लाभ वही उठा पाते हैं, जो भीतर से बलवान हैं। दुर्बल लोगों के लिए तो यह सभी उपलब्धियाँ विपत्ति बनकर आ

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

खड़ी होती हैं। विभूतियाँ जहाँ भी होंगी, वहाँ दूसरों का लालच एवं आकर्षण बढ़ेगा। वे उनका शोषण और अपहरण करना चाहेंगे। ऐसे लुटेरों से यह दुनिया भरी पड़ी है, जो जहाँ भी कुछ देख पाते हैं, वहाँ अपनी घात लगाने से नहीं चूकते। इन दुरात्माओं से सही ढंग से निपटना पड़ता है और इसके लिए शौर्य तथा साहस की आवश्यकता पड़ती है। जो भीतर से खोखले तथा दुर्बल हैं, वे संघर्षों से बचने की, भागने की बात सोचते हैं। इस भगदड़ में वे गँवाते-ही-गँवाते चले जाते हैं। आत्मरक्षा की समस्या को कायर या भीरु सुलझा नहीं पाते। विभूतियाँ उनके लिए अभिशाप सिद्ध होती रहती हैं।

अग्नि के समीप जाकर हर वस्तु गरम हो जाती है। सूर्य के प्रकाश में हर चीज चमकती है। इसी प्रकार साहसी के पास पहुँचे हुए स्वल्प साधन भी अपनी पूरी उपयोगिता दिखाते हैं। एक बहादुर व्यक्ति लाठी लेकर इतनी विजय प्राप्त कर लेता है, जितनी कि डरपोक व्यक्ति तोप-तलवार लेकर भी नहीं पा सकता। यह वसुंधरा 'वीरभोग्या' है। यहाँ की सनातन रीति बलवान को वरण करने की है। वर्षा का जल ढलान की तरफ बहता है और जो गड्ढा जितना गहरा है, उसमें उतना ही अधिक जल जमा होता है। संसार, शक्ति के सामने झुकता चला आया है। यहाँ वीर ही पूजे जाते रहे हैं। विभूतियाँ उनके इर्द-गिर्द जमा होती हैं जिनकी भुजाओं में सशक्तता और समर्थता भरी रहती है।

कमजोर वह नहीं, जिसका शरीर दुबला है। गरीब वह नहीं, जिसके पास पैसा कम है। मूर्ख वह नहीं, जिनके पास शिक्षा कम है। ये सब वस्तुएँ आसानी से जुटाई जा सकती हैं, या इनके बिना काम चलाया जा सकता है। दरिद्र वह है, जिसमें आंतरिक बल नहीं। जिसे अपने ऊपर भरोसा नहीं, जो भविष्य की आशाजनक उज्ज्वल झाँकी अपने भावना क्षेत्र में अंकित नहीं कर सकता और उसे मूर्तिमान बनाने के लिए साहसपूर्ण

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कदम नहीं उठा सकता, वस्तुतः दुर्बल वह है। ऐसी आंतरिक अपंगता किसी महत्त्वपूर्ण सफलता का अधिकारी नहीं होने देती। सफलता के अवसर द्वार तक आकर लौट जाते हैं। वे ऐसे दरिद्रों के घर जाना नहीं चाहते, जो साहस के साथ उनका स्वागत न कर सकें।

जिस प्रकार मधुरभाषी, रूपवान और चंचल बालक अभिभावाकों को अपेक्षाकृत अधिक सुहाते हैं, उसी प्रकार परमेश्वर उन व्यक्तियों को अधिक प्यार करता है, जो साहस, धैर्य और पराक्रम जैसे सद्‌गुणों के रूप में अपनी विशेषता प्रदर्शित करते हैं। छात्रवृत्तियाँ उन्हें मिलती हैं, जो कक्षा में अपनी अधिक प्रगति का परिचय देते हैं। ईश्वरीय अनुग्रह उनके लिए सुरक्षित है, जो उसके लिए अपनी पौरुष भरी पात्रता का परिचय देते हैं। दीनता और भीरुता के छिद्र जिस जीवन–नौका के पेंदे में हो रहे हैं, वह पानी के भार से भरेगी और एक दिन डूबकर रहेगी। जो कठिनाइयों से डरते हैं, बचने के लिए भागते हैं, वे बचते कहीं भी नहीं। डर उनके पीछे–पीछे दौड़ता है और जहाँ भी छिपना चाहते हैं, वहीं अधिक भयानक बनकर जा पहुँचता है।

अपनी दीनता और दुर्बलता दिखाकर जो दूसरों की सहानुभूति पाना चाहते हैं और सहायता की आशा करते हैं, वे भ्रम में हैं। दरिद्रों का यहाँ उपहास भर किया जाता है और वे उपहास के उपकरण बने रहें, इसलिए अहंकारी लोग उन्हें जीवित रहने भर की सुविधा किसी प्रकार दे देते हैं। अधिक पाने का न उन्हें अधिकार है और न मिलता ही है। यहाँ शक्ति पूजी जाती है, यहाँ चमत्कार को नमस्कार किए जाने की परंपरा है। वह चमत्कारी शक्ति जो दुनिया को अपने आगे झुकने के लिए विवश करती है—साहसिकता ही है। दुस्साहसियों के आगे पहाड़ झुकते और समुद्र रास्ता देते रहे हैं।

हम साहसी बनें, पराक्रम का अभ्यास करें, कठिनाइयों से लड़ने और उन्हें परास्त करने का चाव रखें, अपने ऊपर विश्वास

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रखें, तो सर्वत्र हमें विश्वस्त समझा जाएगा। एक तत्त्वदर्शी के मतानुसार ईश्वर उनकी सहायता करते हैं, जो अपनी सहायता आप करने के लिए कटिबद्ध हैं। यही कर्मयोग की कसौटी है।

योगः कर्मसु कौशलम्

गीता ने 'कर्म की कुशलता' को योग बताया है। वास्तव में कर्म एक ऐसा तत्त्व है जिसका उपयोग हर एक को अनिवार्यतः करना पड़ता है। शरीर और मन की रचना ही इस प्रकार हुई है कि उन्हें हर घड़ी काम में जुटा रहना पड़ता है। जब नींद में पड़कर हम सो जाते हैं, तो भी शरीर एवं मन की भीतरी क्रियाएँ बराबर जारी रहती हैं, यदि एक क्षण के लिए भी यह रुक जाए, तो बस मृत्यु ही समझिए। निद्रावस्था के अतिरिक्त शेष समय में शरीर की बाह्य क्रियाएँ भी जारी रखनी पड़ती हैं, शारीरिक और मानसिक भूखें ऐसी प्रबल हैं कि वे बलात् मनुष्य को कार्य करने के लिए खींच ले जाती हैं, उनसे बचने का न तो कोई उपाय है और न कुछ लाभ।

कर्म का कुछ-न-कुछ परिणाम अवश्य होता है। ऐसा कोई कर्म नहीं, जो निष्फल जाता हो, निश्चयपूर्वक उसका परिणाम उपस्थित होता ही है। मनुष्य को प्रकृति के नियमों की अभी बहुत ही कम जानकारी हुई है, उस अधूरी जानकारी के आधार पर यह पता लगाना कठिन है कि इस कार्य का निश्चयपूर्वक यही फल होगा। नदी में तैरने के लिए एक तैराक कूदता है और सोचता है कि मैं तैरता हुआ दूसरे किनारे पर पहुँच जाऊँगा, पर कभी-कभी ऐसा भी होता है कि वह अपने प्रयत्नों में सफल न होकर बीच में ही डूब जाए और दूसरा किनारा प्राप्त न हो सके। एक व्यापारी लाभ कमाने के लिए व्यापार करता है, पर यह भी संभव है कि कोई ऐसे कारण उपस्थित हो जाएँ कि लगाई हुई पूँजी भी हाथ से चली जाए। एक डॉक्टर रोगी को रोगमुक्त करने के लिए बहुत मनोयोग के साथ चिकित्सा करता है, पर यह संभव है कि रोग उलटा बढ़ जाए या रोगी की मृत्यु हो जाए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

करोड़ों वर्ष से मनुष्य जाति जो अनुभव एकत्रित करती चली आ रही है, उसके आधार पर यद्यपि बहुत अंशों में यह मालूम हो गया है कि अमुक प्रकार के कामों का परिणाम अमुक प्रकार का होता है। जैसे पाप का फल दुःख तथा पुण्य का फल सुख होना जान लिया गया है, तो भी ऐसे प्रसंग आते देखे गए हैं कि पाप से सुख और पुण्य से दुःख मिलता है। ऐसे अवसरों पर बुद्धि को विचलित करने की जरूरत नहीं है, कारण यही है कि अभी हर एक कर्मविषयक एक मोटी रूपरेखा ही मालूम हो सकी है, उसमें जो छोटी-छोटी बारीकियाँ और पेचीदगियाँ हैं, उनका ठीक-ठीक ज्ञान अभी भी प्राप्त नहीं हुआ है। आगे चलकर शायद मानव-बुद्धि कर्मफलविषयक उन सूक्ष्म रहस्यों का भी पता लगा ले, जो अभी तक बहुत ही उलझे हुए और रहस्यमय बने पड़े हैं।

दो-चार दिन के अभ्यास से कोई व्यक्ति मोटर चलाने की क्रिया जान लेता है और उन मोटे नियमों तथा चलाने-बंद करने के पुरजों का परिचय प्राप्त करके मोटर को चला ले जा सकता है और निश्चित स्थान पर लेकर पहुँच सकता है, परंतु यदि मशीन के किसी भीतरी भाग में कोई ऐसी बारीक खराबी उत्पन्न हो जाए जिसके कारण मोटर बीच में ही रुक जाए, तो नौसिखिए ड्राइवर के लिए एक बड़ी उलझन भरी बात होगी। वह सोचेगा कि मैंने चलाने का जो ज्ञान प्राप्त किया है, वह कहीं झूठ तो नहीं है। वास्तव में उसका ज्ञान झूठा नहीं है, वरन अपूर्ण है, जितना कुछ उसने सीखा है वह तो ठीक है, पर जो सीखना बाकी है वही कमी है। यदि वह ड्राइवर इंजन के बारीक कल-पुरजों के बारे में सारे नियमोपनियम जानता और खराबी को ठीक कर लेने के साधन उसके पास होते तो वह रास्ते में रुक गई मोटर को सँभाल लेता और नियत स्थान तक जा पहुँचता।

उस नौसिखिए ड्राइवर की अवस्था में ही आज मनुष्य जाति है। उसे मोटे-मोटे नियम तो मालूम हैं कि ब्रह्मचर्य से आरोग्य वृद्धि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

होती है और वीर्यपात से स्वास्थ्य गिरता है, अधिकांश में यह नियम ठीक भी उतरता है। पर ऐसे उदाहरण भी कम नहीं हैं कि ब्रह्मचारी दुर्बल एवं अस्वस्थ रहे और व्यभिचारी लोहे के लट्ठे की तरह मजबूत, स्वस्थ और बलवान रहे। रजवाड़ों में हमने अनेक राजपूत ऐसे देखे हैं जिनके दर्जनों विवाहित और पच्चीसियों रखेलियाँ रहती हैं, परले सिरे के व्यभिचारी हैं। एक-एक दिन में चार-चार बार वीर्यपात करते हैं, मद्य, मांस आदि स्वास्थ्य विरोधी वस्तुएँ खाते हैं फिर भी लोह के लट्ठे की तरह स्वस्थ और मजबूत हैं। ऐसे उदाहरणों को देखकर ब्रह्मचर्य का खंडन या व्यभिचार का मंडन नहीं कर सकते, केवल इतना ही कह सकते हैं कि स्वास्थ्य संबंधी कुछ अन्य ज्ञात-अज्ञात नियम भी हैं जिनके कारण ब्रह्मचर्य की उपयोगिता को पूर्णत: फलितार्थ होने में कभी-कभी बाधा उपस्थित हो जाती है। फिर भी उपर्युक्त विपरीत उदाहरणों के होते हुए भी ब्रह्मचर्य का ही समर्थन करना पड़ेगा, क्योंकि अधिकांश में ब्रह्मचर्य की उपयोगिता साबित करने वाले ही उदाहरण पाए जाते हैं।

कर्म करना जीवन का अनिवार्य नियम है। कर्म का फल अवश्य ही मिलता है, पर निश्चयात्मक रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक कर्म का अमुक समय तक, अमुक प्रकार का फल हो ही जाएगा, उसमें अपवाद उपस्थित हैं और बहुत बड़े परिमाण में होते हैं। पुराने कर्म आगे फल देते हैं या अब के कर्म आगे फल देते हैं या ईश्वर की मरजी ऐसी ही है या भाग्य का ऐसा ही लेखा है। इस प्रकार के अनेक उत्तरों से इन अप्रत्याशित घटनाओं का समाधान किया जाता है और किया जा सकता है। हम उनकी गहराइयों में नहीं उतरना चाहते। हमें तो यही कहना है कि कारण कुछ भी क्यों न हो, पर प्रत्यक्ष बात यह है कि सदैव मन चाहे अवसर प्राप्त नहीं होते। ठीक तरह से निर्धारित नियमों का पालन करते हुए भी उसका फल कई बार ऐसा होता है कि भारी संदेह,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उलझन, गड़बड़ और बेचैनी उत्पन्न कर देता है। मानव जाति चाहती है कि ऐसा न हो, कोई ऐसे नियम मालूम हो जाएँ जो बिलकुल खरे और अपवाद रहित निकलें, इस इच्छा की पूर्ति के लिए जी-तोड़ परिश्रम हो रहे हैं, दिन-दिन प्रगति हो रही है, प्रकृति के गूढ़ रहस्यों का धीरे-धीरे उद्घाटन हो रहा है, पर अभी तक जो कुछ प्राप्त हो सका है वह बहुत ही कम है, बहुत ही अपूर्ण है, बहुत ही अपर्याप्त है। प्रकृति नियम रहित है, ऐसी बात नहीं; ईश्वरीय शासन में अव्यवस्था नहीं है, पर उस व्यवस्था का रहस्य बहुत ही दुरूह होने के कारण 'नेति', कहकर ही संतोष करना पड़ता है।

जब कर्मफल इतना संदिग्ध और अनिश्चित है तो उस पर अवलंबित रहकर कार्य करना अपने को दुःख और निराशा के समुद्र में धकेल देने के बराबर है। भगवान कृष्ण ने गीता में निष्काम कर्मयोग का उपदेश किया है। वे कहते हैं कि फल की आशा छोड़कर कर्म करना चाहिए। इस कथन का तात्पर्य यह है कि काम तो मन लगाकर करो, पूरे उत्साह से करो, पर फल की लालसा में उतावले मत बनो। कई व्यक्ति निष्काम कर्म का गलत अर्थ करते हैं, उनका ख्याल होता है कि बिना विचारे, बिना आगा-पीछा सोचे, बिना हानि-लाभ का विवेक किए यों ही अंधाधुंध काम करते जाना चाहिए और जो कुछ उलटा-सीधा नतीजा निकले उसी से संतुष्ट रहना चाहिए। यह अर्थ बिलकुल गलत, असंभव और मानव स्वभाव के सर्वथा विपरीत है। कार्य की उत्पत्ति कारण से होती है, बिना किसी लाभ की आशा से कोई मनुष्य कार्य को कैसे कर सकता है? बिना किसी स्वार्थ के एक कदम भी किसी दिशा में नहीं उठ सकता, फिर यह सोचना मूर्खता है कि फल का विचार किए बिना कर्म किया जाएगा। यदि बेसमझे कोई काम शुरू भी किया जाए, तो उसे उत्साह, दृढ़ता के साथ विघ्न-बाधाओं का मुकाबिला करते हुए बराबर जारी रखना तो सर्वथा असंभव ही समझना चाहिए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

किसी भी कार्य को करने से पूर्व उसके परिणाम के संबंध में भली प्रकार विचार करना चाहिए, खूब बारीकी के साथ हानि-लाभ निरूपण करना चाहिए। यदि सब प्रकार उस कार्य का करना उचित और हितकारी मान पड़े, तो ही उसे करने के लिए कदम उठाना चाहिए, किंतु जब उसे आरंभ कर दिया जाए तो फल की लालसा में हर घड़ी लार टपकाए रहने की अपेक्षा उस कार्य प्रणाली में इतना व्यस्त हो जाना चाहिए कि फल की ओर ध्यान ही न जाए। छोटे बालक आम की गुठली मिट्टी में गाड़ देते हैं, उस पर जरा-सा पानी छिड़कते हैं, फिर दो-चार मिनट बाद ही उस गुठली को उखाड़ कर देखते हैं कि अभी उसमें से अंकुर निकला या नहीं? वे चाहते हैं कि हमारी बोई हुई गुठली बहुत जल्द बड़ा भारी विशाल वृक्ष बन जाए, जिस पर मनों मीठे-मीठे फल लगें और हम उन्हें भर पेट खाएँ। फल की लालसा इतनी तीव्र होती है कि उन्हें एक-एक क्षण भारी पड़ता है। गुठली स्वाभाविक रीति से उपजकर विशाल वृक्ष का रूप धारण करे, इतने समय तक प्रतीक्षा करने का धैर्य उनमें नहीं होता, इसलिए घंटे-दो घंटे या एक-दो दिन तो वे गुठली को उलट-उलटकर देखते हैं, किंतु निराश होकर उस मधुर फल खाने के स्वप्न को दुःखपूर्वक छोड़ देते हैं, कभी गुठली में दोष लगाते हैं या कभी पानी को कोसते हैं, कभी-कभी भाग्य पर टीका-टिप्पणी करते हैं, कभी अपने को अयोग्य ठहराते हैं। इसी प्रकार वे बालक दूसरा काम शुरू करते हैं और इसी क्रम से उतावली में उसे भी छोड़ देते हैं, यही क्रम चलता है। उनके हाथ केवल असफलता और उससे उत्पन्न होने वाली निराशा तथा बेचैनी ही लगती है। अंत में वे बहुत ही बेजार और किंकर्तव्य-विमूढ़ हो जाते हैं।

फल की आशा पर निर्भर रहने वालों को ठीक इन बालकों का ही उदाहरण बनना पड़ता है। फल प्राप्त होने के लिए जो सुनहली सुखद कल्पनाएँ बना रखी हैं, यदि उनके चरितार्थ होने में

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

विलंब लगता है, तो इस उतावली में मनुष्य धैर्य को छोड़ देता है, अधीर होकर दूसरों पर दोषारोपण करता है, सिर धुनता है, हाथ मलता है, पछताता है, दुखी होता है और न जाने क्या-क्या न करने योग्य करता है या करने की इच्छा करता है।

कहते हैं कि लालच मनुष्य को अंधा बना देता है। अंधे को मार्ग नहीं सूझ पड़ता, जो आदमी प्रशंसा या यश उपार्जित करने के लिए छटपटा रहा है, वह लालच के मारे न करने योग्य कार्यों को कर बैठता है और फिर उसका दु:खदायी परिणाम भोगता है। एकदम धनी बन जाने की इच्छा से लोग चोरी, डकैती आदि भयानक कार्यों में प्रवृत्त हो जाते हैं और फिर लोक-परलोक में दु:ख भोगते हैं। लालच की लगन इतनी प्रबल होती है कि उसी में बुद्धि का अधिकांश भाग खप जाता है, सुखद कल्पनाओं के ख्याली महल बनाने में, इतनी अधिक रुचि हो जाती है कि कार्य करने के तरीके में त्रुटि रहने लगती हैं, उसमें पूरा ध्यान और पूरी शक्ति का संयोग नहीं हो पाता। जितनी सावधानी रखी जानी चाहिए, उतनी नहीं रह पाती, कार्य प्रणाली में जो दोष आ गए हैं और काम में जो बिगाड़ होने आरंभ हो गए हैं, उन तक दृष्टि नहीं पहुँच पाती, फलतः छोटा छिद्र बड़ा होकर एक दिन सारा गुड़-गोबर कर देता है।

शेखचिल्ली की कहानी सबको मालूम है। वह चार पैसे की मजूरी करने चला था, इन पैसों से अंडा लूँगा, अंडे से मुरगी होगी, उसके बच्चे बढ़ेंगे, उनसे बकरी, फिर गाय, फिर भैंस लूँगा। उसे बेचकर शादी करूँगा, बच्चे होंगे, उन्हें खिलाते हुए 'उहुँक' कहकर दुत्कार दिया करूँगा, दुत्कारने की चेष्टा करते हुए शेखचिल्ली के शिर पर रखी हुई हाँडी गिर पड़ी, मजूरी मिलना तो दूर बेचारे पर बुरी तरह मार पड़ने लगी। हम लोग शेखचिल्ली पर हँसते हैं कि मूर्ख फल के लालच में इतना व्यस्त हो गया कि अपने काम की सावधानी भूल गया, जिससे बच्चे खिलाने का स्वप्न तो दूर रहा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उलटे मार खानी पड़ी, परंतु हमारा इस तरह का हँसना बेकार है क्योंकि प्रकारांतर से करीब ऐसा ही हमारा आचरण होता है कि कार्य प्रणाली में अनेक दोष और त्रुटियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। परिणाम की जो इच्छा की जाती है, उससे उलटा नतीजा सामने आ जाता है।

कर्मयोग का पूरा नाम निष्काम कर्मयोग है, जिसका अर्थ होता है, फल की आसक्ति छोड़कर कर्म करना। यहाँ इस भेद को भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि इच्छा का नहीं, आसक्ति का निषेध किया गया है। परिणाम की इच्छा के बिना तो कोई कार्य किया ही नहीं जा सकता, स्वाभाविक इच्छा तो अवश्यंभावी है और आवश्यक भी है। निषेध उस आसक्ति का है, जिसके लोभ से कार्य प्रणाली के गुण–दोषों की ओर से आँखें बंद हो जाती हैं। दूसरे शब्दों में इस तथ्य को यों कहा जा सकता है कि भविष्य के मनसूबे बाँधते रहने की अपेक्षा वर्तमान काल को तत्परतापूर्वक उपयोग करो। कर्मयोग का संदेश है कि आज के कार्य में पूरी तरह तन्मय हो जाओ, आज जो काम सामने पड़ा हुआ है, उसे समस्त बुद्धिमत्ता, दिलचस्पी, सावधानी और मेहनत के साथ करो, उसमें अधिक तत्पर हो जाओ कि कल की चिंता उसके सामने गौण हो जाए, उसका ध्यान ही न आने पाए। इस प्रकार जब संपूर्ण इच्छाशक्ति के साथ आज का काम किया जाएगा, तो निस्संदेह उसका फल आशातीत सफलता युक्त होगा।

ऐसी बात नहीं कि निष्काम कर्म करने वाले को फल ही न मिलता हो। यह तो मिलना ही है, मिलकर रहेगा ही। कर्म निष्फल नहीं किया जा सकता, सच तो यह है कि निष्काम कर्म करने से कई गुना अधिक और अच्छा फल मिलता है। अधिक और उत्तम फल प्राप्त करने का एक वैज्ञानिक तरीका अनासक्ति है, गणित के त्रैराशिक सिद्धांत की तरह यह स्पष्ट है कि जब कल के मनसूबे छोड़कर आज के कार्य पर जुट जाया जाएगा, तो सारी शक्ति का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

एक ही ओर उपयोग होगा और जो कार्य अधिक शक्ति के साथ किया जाएगा वह अधिक फलदायक होगा। अनासक्त कर्म निस्संदेह अधिक प्राप्त करने का एक उत्तम तरीका है।

दिलचस्पी को फल की उलझन में से निकाल कर कार्य प्रणाली में लगा देना, अपनी हर घड़ी को आनंदमय बना लेना है। एक नौकर अपने काम पर जाते ही छुट्टी का समय गिनने लगता है, थोड़ी-थोड़ी देर बाद घड़ी देखता है कि कब यहाँ से छुटकारा मिलेगा, उसका मन काम में नहीं लगता, बार-बार जी ऊबता है, क्या इस तरीके से वह अपना अच्छा काम और पूरा कर सकेगा? कदापि नहीं, इस नौकर के कामों का जरा निरीक्षण कीजिए, वे बहुत ही अधूरे, भद्दे और खराब होंगे, कारण यह है कि उसने अपनी आधी शक्ति तो छुट्टी की प्रतीक्षा में गँवा दी, शेष आधी से तो आधा-अधूरा काम ही हो सकता है। दिलचस्पी एक समय में दो स्थानों पर नहीं रह सकती, यदि छुट्टी में मन अटका है, तो सामने का काम बेगार की तरह लगेगा, उसमें चित्त ऊबा रहेगा, भार की तरह जो कार्य किया जा रहा है, उसमें रस भला किस प्रकार आ सकता है? ऐसा व्यक्ति छुट्टी के समय में प्रसन्न जरूर होगा, किंतु शेष समय को कुड़कुड़ाते हुए आनंद रहित व्यतीत करेगा।

दूसरा नौकर इसके विपरीत स्वभाव का है, उसे अपना काम खेल की तरह मनोरंजक प्रतीत होता है, पूरी दिलचस्पी के साथ अपनी कला का प्रदर्शन करता है, उस काम में ही पूरा आनंद लेता है और इतना तन्मय हो जाता है कि छुट्टी के समय की ओर ध्यान भी नहीं देता। ठीक समय पर छुट्टी इस नौकर को भी मिलेगी, साथ-साथ चौगुना आनंद भी प्राप्त होगा। (१) काम के घंटे आनंद और मनोरंजन के साथ बीत जाएँगे, (२) काम इतना बढ़िया होगा कि देखने वाले प्रशंसा करेंगे और आदर देंगे, (३) अपनी योग्यता, बुद्धि और शक्ति सतेज होगी, (४) मालिक खुश रहेगा, पुरस्कार और तरक्की देगा। बस, ठीक यही अनासक्त कर्म का रहस्य है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

छुट्टी की प्रतीक्षा में उलझा रहने वाला नौकर आसक्ति के कारण अपने को उद्विग्न रखता है, काम खराब करता है, अयोग्य बनता है, असफल रहता है। निंदा का पात्र बनता है और हानि उठाता है, किंतु काम में दिलचस्पी लेने वाला अनासक्त नौकर चौगुना फायदा कर लेता है। यही कर्म कौशल है, इसी क्रिया-कुशलता को गीता ने कर्मयोग का सुंदर नाम दिया है।

यह पहले बताया जा चुका है कि सदा ही इच्छित फल प्राप्त नहीं होता, किसी अज्ञात कारण से ऐसे अवसर आ सकते हैं कि प्रयत्न करते हुए भी इच्छित फल न मिलें, वरन उसका उलटा परिणाम उत्पन्न हो जाए, ऐसी दशा में जो व्यक्ति मुद्दतों से आशाओं के महल बनाए बैठा है, उसका दिल टूट जाएगा, निराशा का एक भारी झटका लगेगा और उस शोक में संभव है अपनी बुद्धि या तंदुरुस्ती या जिंदगी गँवा बैठे। अपने प्रियजन की मृत्यु पर, धन या प्रतिष्ठा नष्ट होने पर, अनेक व्यक्ति आत्महत्या करते, पागल होते, बीमार पड़ते देखे गए हैं। शोक का इतना गहरा घाव उन्हें लगता है, जो इन वस्तुओं में अतिशय आसक्त होते हैं। जिन्हें इतना ज्यादा मोह नहीं होता, उन्हें गहरी व्यथा भी नहीं होती, वे बड़े-बड़े झटकों को आसानी से सह लेते हैं, राजा हरिश्चंद्र का ऐसा ही उदाहरण है, राज्य के चले जाने, स्त्री के बिक जाने, पुत्र के मर जाने पर भी वह मरघट में अपने कर्तव्य पर ठीक तरह डटे रहे। हजारों वर्ष बीत जाने पर भी उनका आदर्श ज्यों-का-त्यों जीवित है।

अनासक्त कर्मयोग की उपासना करने वाला व्यक्ति सांसारिक पंच भौतिक वस्तुओं की नश्वरता को गंभीर दृष्टि से देखता है और अनुभव करता है कि यह सारे दृश्य पदार्थ गतिवान हैं, यह उत्पन्न होते हैं, बढ़ते हैं, एक स्थान से दूसरे स्थान को चलते हैं और नष्ट हो जाते हैं। किसी को आज किसी को कल नष्ट होना है, इस नाशवान गतिशीलता को भले प्रकार ध्यान में रखते हुए वह किसी को न तो अपनी समझता है और न किसी पर मालिकी गाँठता है, जो वस्तुएँ

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उपयोग के लिए मिली हुई हैं, उनको ठीक तरह काम में लाता है, अपनी जिम्मेदारी उनके प्रति निभाता है, फिर भी मोह, ममता में नहीं फँसता। यदि कोई प्यारी-से-प्यारी वस्तु नष्ट हो जाए, तो वह अपने को शोकार्त नहीं होने देता, वरन अपने को सँभाल लेता है, मन को समझा लेता है। जो क्रम संसार की समस्त वस्तुओं के ऊपर लागू हो रहा है, वही यदि अपने निकट वाली वस्तु के ऊपर भी लागू हो जाए तो इसमें आश्चर्य, क्षोभ या व्यथा की कौन-सी बात है? अतीत काल से नित्य असंख्य मनुष्य मरते आ रहे हैं, फिर यदि अपना कोई प्रिय जन आज मर जाता है तो इसमें छटपटाने की क्या बात है? इसी प्रकार धन, यश, स्वास्थ्य जैसी अस्थिर वस्तुएँ डाँवाडोल हो जाती हैं तो 'हाय' हाय करने का क्या कारण है?

कर्मयोगी इन सब तथ्यों को समझता है, इसलिए हानि-लाभ की उलट-पलट को देखकर वह विचलित नहीं होता, वह दोनों की परवाह नहीं करता। परवाह करने योग्य एक ही बात उसे प्रतीत होती है, वह है—अपना कर्तव्य, कर्म। अपनी ड्यूटी ठीक तरह अदा करता हूँ, यही एक बात उसके संतोष के लिए पर्याप्त है। अपने आनंद को वह दूसरों के हाथ बेच नहीं देता, वरन अपनी मुट्ठी में रखता है। अमुक फल मिलना अपने हाथ की बात नहीं, वरन दूसरों के हाथ की बात है, फिर ऐसा आधार क्यों पकड़ा जाए कि जब दूसरे की कृपा प्राप्त हो, तब सुख मिले और जब दूसरा पक्ष चुप हो रहे या विपरीत उत्तर दे, तो दुःख में बिलखें। यह तो पराधीनता का बंधन हुआ, भाग्य के, प्रारब्ध के, ईश्वर के, धनी के, समर्थ के किसी के भी आश्रित आप क्यों बनें, अच्छा यह है कि आप स्वाधीन रहें, अपनी स्वतंत्रता किसी के हाथ न बेचें, फल न सही, कर्म करना तो अपने हाथ में है या कर्म में ही संतुष्ट रहिए, उसी में आनंद ढूँढ़ निकालिए। फल की प्रतीक्षा में मुद्दतों तक बैठना पड़ता है, पर कर्म तो आप आज भी कर रहे हैं, अभी भी कर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रहे हैं, फिर क्यों अपने को आज से ही अभी से ही आनंदित रखना आरंभ न कर दिया जाए?

सबसे बड़ा आध्यात्मिक लाभ इसमें है कि अंतःचेतना सांसारिक विषयों में लिप्त नहीं होती और जीव भव-बंधन में नहीं पड़ता। फलाशा में मोह—आकर्षण होता है, इसलिए उसका ध्यान बहुत काल तक उत्सुकतापूर्वक बना रहता है। यह उत्सुकता एक प्रकार के गहरे संस्कार के रूप में जम जाती है और जीव को मृत्यु के उपरांत फिर भी अपनी ओर खींच लाती है। जड़ भरत की कथा ऐसा ही उदाहरण है, उन्हें एक मृग में मोह हो जाने के कारण स्वयं मृग बनना पड़ा था। गड़े हुए धन के मोह में जिनका प्राणांत होता है, वे दूसरे जन्म में सर्प बनकर उस धन की चौकीदारी करते हैं। इसी प्रकार जो जिस प्रसंग में अत्यधिक मोहित एवं तल्लीन है, उसे अगले जन्मों में उसी क्षेत्र में जन्म के लिए विवश होना पड़ सकता है, उस आसक्ति का आकर्षण निकृष्ट मार्ग पर घसीट ले जा सकता है। मुक्ति में, ईश्वर की प्राप्ति में, आत्मोन्नति में यह भारी बाधक हो सकती है, इसलिए कर्मयोग की साधना में अलिप्त रहने की व्यवस्था की गई है। कमल की बेल पानी में रहती है, पर उसके पत्ते जल की सतह से सदा ऊँचे रहते हैं उसमें डूबते नहीं, कर्मयोगी का यही आदर्श होना चाहिए, संसार में रहकर अपने सामने आए कर्मों को पूर्ण मनोयोग के साथ करना चाहिए, पर उनमें मोहित नहीं होना चाहिए। यह तभी संभव है जब फल की आशा में तल्लीन न होकर कर्तव्य में ही संतुष्ट रहा जाए।

कर्म में दिलचस्पी रखना एक सात्त्विक और स्वाभाविक वृत्ति है, इसमें मोह का अंश नहीं है। हल जोतने, घास खोदने, लिखने, तौलने आदि क्रियाएँ दिलचस्पी से करने पर वे मनोरंजन, मन बहलाव या आत्मतुष्टि का कारण होंगी। यदि खेती की आमदनी की लंबी-चौड़ी प्रतीक्षा नहीं है, तो हल जोतना खेल की तरह एक रुचिकर मनोरंजन होगा, इसमें बंधन में पड़ने का अवसर न आएगा।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जो व्यक्ति फल को छोड़कर कर्म में ही निर्लोभ आनंद लेते हैं, वे माया के बंधन में नहीं पड़ते, उनके चित्त पर बंधनकारी का जमाव नहीं होता, फलस्वरूप आवागमन की फाँसी से सहज ही उन्हें छुटकारा मिल जाता है।

जिसको नित्य हल चलाने का काम करना है उसे उसको ठीक तरह सीख लेना चाहिए, वरना संभव है कि हल की फाल टेढ़ी होकर बैल का पैर फाड़ दे या अपने को कुछ नुकसान हो जाए, जिसको नित्यकर्म करना है, उसे कर्म की कुशलता प्राप्त कर लेनी चाहिए, अन्यथा संभव है कि सुख की कामना करते दुःख खड़ा हो जाए। कर्मयोग इसी कुशलता का नाम है, जो इस प्रकार कलापूर्ण ढंग से काम करना जानता है कि किए हुए काम का फल उलटा न निकले, वही कर्मयोगी है। हमें सबको कर्मयोग का अभ्यास करना ही चाहिए, यह हमारे लिए इतना ही जरूरी है जितना देन-लेन करने वाले को हिसाब-किताब जानना।

अपने पर आप भरोसा रखकर आगे बढ़िए

जीवन को उन्मुक्त होकर संसार की लहरों में बहने दीजिए। कभी लहर आप पर होकर गुजरेगी, कभी आप लहरों पर उतराएँगे, लेकिन समुद्र की गोद में उसकी तरंगों से खेलने का साहस-आत्मविश्वास आप में जाग्रत होगा। जो अकेलेपन अथवा डूब जाने के भय से पानी में उतरता ही नहीं, जो इस सोच-विचार में पड़े रहते हैं कि क्या करूँ? कैसे करूँ? मैं कैसे मंजिल तक पहुँचूँगा? वे कुछ भी नहीं कर पाते, उनका विश्वास मर जाता है। उनका जीवन निष्प्राण हो जाता है। कोई तेज, चेतना नहीं रहती, उनमें व्यापार में, अध्ययन में, किसी कार्य विशेष में लगने से पूर्व जिनके संकल्प अधूरे रहते हैं, जो संशय में पड़े रहते हैं, वे कोई बड़ा काम नहीं कर पाते और कुछ करते हैं, तो उनमें असफल ही होते हैं, जिसके कारण उनका रहा-सहा विश्वास भी नष्ट हो जाता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आत्मविश्वास की ज्योति प्रज्वलित करने के लिए इस कार्य में प्राणपण से जुट जाएँ, जो आपको हितकर लगता है। जिसे आप अच्छा समझते हैं उस काम को अपने जीवन का, स्वभाव का एक अंग बना लें, इससे आपके विश्वास को बल मिलेगा। लेकिन इस मार्ग में एक खतरा है, वह है—सफलता-असफलता में अपना संतुलन खो बैठना। इसके लिए आवश्यक है कि आप सफलता-असफलता को गौण मानकर उस कार्य को प्रधान मानें। आप उसे किस तरह करते हैं, इसको महत्त्व दें। सफलता में हर्षातिरेक और असफलता में निराशा, दोनों से बचने के लिए आप उन्हें महत्त्व ही न दें। हाँ सफलता मिलती है तो उससे उत्साहित होकर और असफलता से सीख लेकर अपने पथ पर निरंतर आगे बढ़ते रहें। कर्म की यह निरंतर साधना ही आप में विश्वास का अखिल स्रोत खोज निकालेगी।

व्यर्थ की शंका, विघ्नकारी विचारों को मन से निकाल फेंकिए। इनसे आपका आत्मबल गिरेगा। मस्तिष्क की आविष्कारक शक्ति नष्ट होगी और फिर विश्वास का कोई आधार ही न रहेगा। अतः अपने को अभागा समझेंगे। आप अपने आप को जैसा समझेंगे, वैसी ही प्रतिक्रिया संसार में होगी और संसार उसी के अनुसार आपको मार्ग देगा। अपने आप को अभागा, दीन-हीन, मलिन समझने वालों के लिए संसार में कोई स्थान नहीं है, उन्हें एक ओर ढकेल दिया जाता है।

अपने आप को भाग्यशाली, महत्त्वपूर्ण समझने वाले को संसार भी रास्ता देता है। यह भावना हृदय में कूट-कूटकर भर लें कि आपको किसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए धरती पर भेजा गया है। आप अवश्य उस काम को करें। इसी महान श्रद्धा के बल पर आप क्या-से-क्या बन सकते हैं। इसी तरह के किसी महान आदर्श को, मिशन को अपनी श्रद्धा का आधार बनाएँ और इस तरह की बलवती श्रद्धा आपके विश्वास को परिपुष्ट करेगी। विश्वास

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उनका मर जाता है, जिनके जीवन में कोई आदर्श नहीं, श्रद्धा का कोई आधार नहीं।

समाज की, संसार की, घर-परिवार, पड़ोस की, राष्ट्र की, महान कार्य की जो कोई भी जिम्मेदारियाँ आप पर आएँ उन्हें सहर्ष स्वीकार कीजिए। जिम्मेदारियों को अपने कंधे पर उठाने का संकल्प ही विश्वास की साधना का आधा काम पूरा कर देता है। स्मरण रखिए, संसार में कोई भी ऐसा काम नहीं, जिसे मनुष्य न कर सकता हो। जिन कार्यों को स्वीकार करने में आप झिझकते हैं, डरते हैं, उन्हें दूसरे लोग हँसते-खेलते पूरा कर देते हैं, फिर जिम्मेदारियों से क्यों डरते हैं, क्यों झिझकते हैं? स्मरण रखिए—पानी में कूदे बिना तैरना नहीं सीखा जा सकता। इसलिए जो जिम्मेदारियाँ आपके सामने आएँ, उन्हें सहर्ष स्वीकार करें और फिर उन्हें पूरा करने में जुट जाएँ। इससे आपका आत्मविश्वास बढ़ेगा। स्मरण रखिए—काम करने से ही अपनी कर्मठता, अपनी शक्तियों पर विश्वास होने लगता है।

एक सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि लोग आपके विषय में क्या कहते हैं? इस पर ध्यान न दें। उसकी आलोचना, छींटाकशियों से तनिक भी विचलित न हों। यदि कोई विचार सच्चा है, तो उसे निर्भय होकर व्यक्त कीजिए। वह काम जिससे आपका और दूसरों का भला हो, अवश्य कीजिए। किसी आशंका, भय आदि के कारण इनमें रुकावट न डालें।

स्मरण रखिए, आत्मविश्वासी के लिए स्वाधीन और स्वावलंबी होना आवश्यक है। जो कुछ करने से पहले, कुछ कहने से पहले दूसरों की प्रतिक्रिया का अनुमान ही लगाता रहता है, जिसे दूसरों की खुशामद का ध्यान पड़ता है, दूसरों की नाराजगी या कोप से बचने या दया, वरदान, याचना का ध्यान रखना पड़ता है, वह कभी भी आत्म-विश्वासी नहीं बन सकता। आत्मविश्वास का एक ही आधार है। बोलने में, काम करने में, अपना मार्ग चुनने में, अपना

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जीवन ढालने में अपनी अंतरात्मा का आदेश प्राप्त करें, अपने दिल और दिमाग के निर्णय पर पहुँचें और फिर जो सही हो उसे करें, उसे कहें।

उत्कृष्ट आकांक्षाएँ रखिए, जीवन का आशा भरा रंगीन चित्र अपनी कल्पनाओं के पटल पर बनाइए। विश्वासयुक्त जीवन के लिए सुनहले भविष्य का चित्र बनाना आवश्यक है। जिनकी आशाएँ मर जाती हैं, जीवन में कोई आकांक्षा, रंगीन स्वप्न नहीं होता तो उनका विश्वास भी पंगु बन जाता है। उसे गति देने का साधन ही नष्ट हो जाता है।

हम आत्मविश्वासी बनें, अपना भरोसा करें

कर्मयोग के मार्ग में वही व्यक्ति स्थिर रह सकता है, जिसमें अदम्य आत्मविश्वास विद्यमान है। यह संसार नाना प्रकार की बाधाओं, विपत्तियों और विरोधों से उसी प्रकार भरा है, जिस प्रकार सागर मत्स्यों, मकरों तथा नक्रों से भरा होता है। इसीलिए तो संसार को भवसागर भी कहते हैं। आज आएदिन लोग बड़े-बड़े दुर्लंघ्य महासागरों को पार करते रहते हैं। समुद्र यात्रियों का साधन जहाज होता है। जिस प्रकार समुद्र की भीषण यात्रा का साधन जहाज है, उसी प्रकार भवसागर से संतरण का साधन आत्मविश्वास है। आत्मविश्वास निश्चय ही एक शक्तिशाली जहाज के समान है, जिसमें जीवन रूपी यात्री को बिठाकर इस विशाल भवसागर को आसानी से पार किया जा सकता है।

संसार के जिन महापुरुषों ने कर्मयोग को जीवन का मार्ग चुना वे सब आत्मविश्वास के धनी रहे हैं। जिसके पास अदम्य और अडिग आत्मविश्वास की संपत्ति होती है, उसके पास कोई साधन हों-न-हों, वह अपने जीवन को सार्थक तथा सफल बना ही जाता है। साधन तो दूसरी आवश्यकता है। जीवन की सफलता के लिए पहली आवश्यकता है—आत्मविश्वास। साधनों का प्रचुर भंडार होने पर भी यदि मनुष्य के पास आत्मविश्वास की कमी है तो वह

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सफलता के शिखर पर उसी प्रकार नहीं जा सकता, जिस प्रकार हाथ में शस्त्र होते हुए भी कायर व्यक्ति कोई जौहर नहीं दिखला सकता। किंतु आत्मविश्वास का धनी व्यक्ति साधनहीनता की अवस्था में भी अपना मार्ग प्रशस्त कर लेता है। संसार में चारों ओर साधन-ही-साधन बिखरे पड़े हैं। कहीं किसी दिशा में भी तो कमी नहीं है। अंतर केवल यह है कि आत्मविश्वासी व्यक्ति पुरुषार्थ और परिश्रम के बल पर उन्हें प्राप्त कर लेता है और विश्वासहीन व्यक्ति ताकता रहता है। सफलता का मूल आधार आत्मविश्वास ही है, साधन की प्रचुरता नहीं।

अमेरिका के इतिहास पुरुष अब्राहम लिंकन जितने महान हुए हैं, उससे कहीं अधिक वे साधनहीन थे। अन्न, वस्त्र, निवास, शिक्षा, सुरक्षा और सहयोग सभी साधनों का अभाव था उनके पास। यदि कोई पारसमणि थी उनके पास तो वह था, उनका अदम्य आत्मविश्वास। एक अकेले आत्मविश्वास के बल पर ही उन्होंने अपने इस असंभव जैसे संकल्प को पूरा कर दिखाया। "मैंने अपने भगवान को वचन दिया है कि दासों की मुक्ति के कार्य को मैं अवश्य पूरा करूँगा।"

साधनों के अभाव की शिकायत करते रहने वालों को यदि शिकायत ही करनी है, तो यह शिकायत करनी चाहिए कि उनके पास आत्मविश्वास की कमी है। यदि उनके पास आत्मविश्वास रहा तो वे व्यर्थ में बैठे-बैठे साधनहीनता की शिकायत न करते रहें, बल्कि कमी और अभाव को पूरा करने के लिए पुरुषार्थ करते नजर आएँ। फ्रांस के महान नायक नैपोलियन के पास प्रारंभ में कौन-से साधन थे, जिनके आधार पर वह फ्रांस का इतिहास पुरुष बना। साधनों के नाम पर उसके पास न पेट भर रोटी थी और न तन पर कपड़ा। तब भी उसने न केवल फ्रांस के ही बल्कि संसार के इतिहास में अपना नाम अंकित कराया। उसका वह आत्मविश्वास ही था, जिसके बल पर उसने साधन अर्जित किए और फ्रांस को

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

एक अदम्य राष्ट्र बनाने का श्रेय पाया। यह उसका अदम्य आत्मविश्वास ही था, उसके ही शब्दों में इस प्रकार व्यक्त होता रहता था—'यदि हमारा मार्ग रोकता है तो आल्पस पर्वत ही नहीं रहेगा।' यदि उसके स्थान पर आत्मविश्वासहीन कोई दूसरा व्यक्ति होता तो अपने सैनिकों की यह बात सुनकर कि "आगे आल्पस पर्वत है, बढ़ा नहीं जा सकता"—निराश तथा हतोत्साह हो जाता। किंतु उस अदम्य आत्मविश्वासी ने अपना विश्वास प्रकट किया, जिसका फल यह हुआ कि आल्पस को काटकर रास्ता निकाल लिया गया।

महान नाविक कोलंबस ने महासागर के दूसरी ओर एक विशाल देश का अनुमान किया और तत्कालीन अविकसित जहाज लेकर विशाल महासागर की छाती पर लहरों और तूफानों से टक्कर लेता हुआ तैर चला। महीनों के महीनों उसका जहाज उस अतल सागर में चलता रहा। लेकिन किसी देश अथवा द्वीप के दर्शन नहीं हुए। उसके साथी निराश होकर विरोध करने लगे, किंतु उस अदम्य विश्वासी ने साहस तथा आशा का साथ नहीं छोड़ा, वह यात्रा करता ही रहा और अंत में अमेरिका जैसे देश को खोज ही लिया। उसकी यह विशाल सफलता उसके अखंड आत्मविश्वास के परिपाक के सिवाय और कुछ भी तो नहीं थी। आत्मविश्वास एक बहुत बड़ा बल, संबल और साधन है।

आज भी लोग आएदिन पचासों मील लंबी-चौड़ी नदियाँ और उपसागरों को तैरकर पार करते रहते हैं। मनुष्य का स्वाभाविक बल इतना कहाँ कि वह उस कठिन संतरण को केवल तैरने की कला के आधार पर पूरा कर सकें। यह उनका अदम्य आत्मविश्वास ही होता है। जो उन्हें थककर भी थकने और हारकर भी हारने नहीं देता। एक महान नौका की तरह ले जाकर पार लगा देता है। आत्मविश्वास को मानव जीवन की नौका ही माना गया है। निश्चय ही वह एक सुदृढ़ नौका के समान ही है। यदि मनुष्यों के

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पास आत्मविश्वास न हो तो वे संसार की लाखों आपत्तियों-विपत्तियों, उलझनों और समस्याओं से कैसे पार पा पाए? यह उनका आत्मविश्वास ही होता है, जो संकटों में भी धीर पुरुषों को सक्रिय तथा साहसी बनाए रहता है। आत्मविश्वास के समाप्त होते ही मनुष्य का पुरुषार्थ मर जाता है। पराक्रम तिरोधान हो जाता है। आशा और उत्साह के दीप बुझ जाते हैं। जीवन में भय और आशंकाओं का घटाटोप अंधकार छा जाता है।

मनुष्य में एक नहीं अनेक प्रकार की शक्तियों का भंडार भरा पड़ा है। वह सब समर्थ ईश्वर का अंश जो है। उसमें उसी प्रकार की विश्वशक्तियों के न होने की कल्पना करना असंगत ही नहीं, अन्याय भी है। किंतु इन शक्तियों का लाभ वही पाता है, जो आत्म-विश्वासी होता है। संसार में ईश्वर की सत्ता विद्यमान है। किंतु उसका सान्निध्य उसी को नसीब हो सकता है, जो आस्तिक भाव का होता है। नास्तिक उस असीम और अनंत सत्ता से वंचित रहता है। जो परमात्मा को छोड़ देता है, परमात्मा उसे त्याग देता है। इसी प्रकार जो आत्मा में, अपने में विश्वास नहीं करेगा, वह अपनी उन शक्तियों से वंचित ही रह जाएगा। अविश्वास से अविश्वास का जन्म होता है। जो अपनी आत्मा, अपनी शक्तियाँ और अपनी क्षमताओं में अविश्वास करता है, उसकी शक्तियाँ भी उसमें अविश्वास करने लगती हैं। अंदर ही निरपेक्ष भाव में सोई पड़ी रहती हैं। जागकर न तो उसकी सहायता के लिए व्यक्त होती हैं और न संकट, आपत्तियों में उसकी रक्षा करती हैं। आत्मविश्वासी की सारी शक्तियाँ कुंठित होकर रूठ जाती हैं।

जीवन-समर जीतने, उपयोगी और महान कार्य करने के लिए अपने आत्मविश्वास को प्रज्ज्वलित रखना बहुत आवश्यक है। क्योंकि किसी भी महान ध्येय की पूर्ति तभी होती है, जब मनुष्य के सारे गुण और सारी शक्तियाँ नियंत्रित और नियोजित होकर कार्य में संलग्न होती हैं। शक्तियों का नियोजन तथा केंद्रीकरण का कार्य

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आत्मविश्वास के उठते ही सारी शक्तियाँ स्वतः उठ खड़ी होती हैं और स्वतः ही पंक्तिबद्ध होकर कार्य का संपादन करने के लिए तत्पर हो जाती हैं। ऐसे प्रबुद्ध पुरुषार्थी के लिए कौन-सा ध्येय, कौन-सा उद्देश्य और कौन-सा लक्ष्य दुःसाध्य हो सकता है। वह तो असंभव को संभव और असाध्य को साध्य बना सकने में समर्थ तथा सफल हो जाता है।

वेद भगवान के कथनानुसार—"मनुष्य अमृत की लड़ी है। उसका प्राण, उसका जीवन नित्य नई आभा लिए आता रहता है। मनुष्य प्रेरणा का केंद्र है, प्रकाश धारण करने वाला स्तंभ है, वह साक्षात प्रकाश रूप है, वह प्रकाश है, ज्योति है और अमर आलोक है।" मनुष्य में यह सब है तो, किंतु इसका अनुभव वह तब ही कर सकता है, जब ज्वलंत आत्मविश्वास से ओत-प्रोत हो। अन्यथा वह मांस का एक पिंड और मिट्टी की एक मूर्ति मात्र ही है। अदम्य आत्मविश्वास ही मनुष्य को साधारण जीव से असाधारण देव पुरुष बनाता है। स्वामी विवेकानंद ने ठीक ही कहा—"विश्वास! विश्वास!! अपने में विश्वास, ईश्वर में विश्वास, अपने आत्मदेव की अपार शक्तियों में विश्वास ही मानव जीवन की सफलता और महानता का रहस्य है।"

आत्मविश्वास का वास्तविक अर्थ है—अपनी आत्मसत्ता में विश्वास करना। अपने को मांस-पिंड रूप शरीर न मानकर आत्मा मानना और उसी के प्रकाश से प्रेरित होना आत्मविश्वास का ही रूप है। जो अपनी आत्मा की अजेय सत्ता में विश्वास करता है, अपने जीवन की सार्थकता, महत्ता और उपयोगिता को स्वीकार करता है, उसे अनुभव करता है, वही आत्मविश्वासी होता है। इसी प्रकार का सच्चा आत्मविश्वासी ही किसी बड़े लक्ष्य का लंबा रास्ता तय कर सकता है और वही उस पर आई आपत्तियों, संकटों तथा विपत्तियों से टक्कर ले सकता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

शिक्षा, साधन, संपन्नता आदि की कोई भी सुविधा मनुष्य को न तो महान बना सकती है और न उसके व्यक्तित्व में तेज का समावेश कर सकती है। संसार में ऐसे लाखों मनुष्य मौजूद हैं, जिन्हें साधन-सुविधाओं की जरा भी कमी नहीं है तथापि वे मलिन व्यक्तित्व के साथ तुच्छ तथा हेय स्थिति में पड़े जीवन काटा करते हैं। यदि साधन-सुविधाएँ ही मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास और उसकी महानता का आधार होतीं, तो अवश्य ही हर साधन संपन्न व्यक्ति को महान तथा तेजस्वी होना चाहिए। किंतु ऐसा होता कदापि नहीं। तेजस्विता और महानता का विकास साधनों में नहीं, अपने प्रति महानता, उदात्तता तथा आत्मसत्ता का विश्वास रखने में है। आलोकित पदार्थ के संपर्क में आने पर ही कोई दूसरी वस्तु प्रकाशित होती है। आग से संपर्क होने पर ही ऊष्मा उत्पन्न होती है। इसी प्रकार जब मनुष्य विश्वासपूर्वक अपने आत्मस्वरूप के निकट आता है, तभी वह प्रकाशित तथा ज्योतिमान बनता है। एकमात्र जड़ पदार्थों का संपर्क उसे आलोकित अथवा प्रकाशित नहीं कर सकता।

जिसे अपनी आत्मसत्ता में विश्वास नहीं होता, वह अपनी सारी विशेषताओं से रहित होकर परावलंबी बन जाता है। उनका अस्तित्व और आधारहीन जीवन समुद्र की लहरों पर पड़ी अनाथ नौका की भाँति इस उत्ताल भवसागर में आपत्तियों और विपत्तियों के थपेड़े खाया करता है। उसे साधारण समस्याओं तथा उलझनों से ही जब अवकाश नहीं मिल पाता तो कोई उपयोगी तथा महान कार्य करने के लिए किस प्रकार उत्साहित हो सकता है और किस प्रकार का साहस पा सकता है? आत्मविश्वासहीन मनुष्य निर्बल रहकर समय का क्रीड़ा-कंदुक बनकर रह जाता है। परिस्थितियाँ कभी उसे इस ओर फेंकती रहती हैं और कभी उस ओर धकेलती रहती हैं। आत्मविश्वास से हीन व्यक्ति को, चिदानंद की

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

संभावना से पूर्ण इस मानवजीवन में दुःख-कष्ट और शोक, संताप के सिवाय और कुछ नहीं मिल पाता। जो आत्मअविश्वासी है, वह नास्तिक है और जो नास्तिक है उसे आनंद का ऐश्वर्य भी नहीं मिल सकता।

आत्मविश्वास मनुष्य को सभी प्रकार के भयों, संदेहों, आशंकाओं तथा भीरुताओं से मुक्त बना देता है। उसमें साहस, उत्साह, आशा और पराक्रम का संचार करता है। उसे उन्नति के शोभनीय शिखर की ओर प्रेरित ही नहीं करता, बल्कि उसका महानतम संबल बनता है। आत्मविश्वास उन्नति, प्रगति, सफलता तथा सार्थकता का मूल मंत्र है। उसे जगाना ही चाहिए, उसकी वृद्धि तथा समृद्धि करते ही रहना चाहिए। कर्मयोग का सच्चा आनंद इसी में मिलता है।

कर्म और निरंतर कर्म

शायद आपने अपने अंदर यह पता लगाने का प्रयत्न कभी नहीं किया कि वहाँ कोई विचारक, कलाकार, नेता, समाजसेवक, कोई बड़ा व्यापारी अथवा कोई महान व्यक्ति तो छिपा नहीं बैठा है? हाँ, आपने अवश्य ही इस बात में प्रमाद बरता है। अन्यथा आप आज इस साधारण स्थिति में न पड़े होते। अवश्य ही अब तक आप समाज, सेवा, कला अथवा वाणिज्य के माध्यम से अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाकर मानव जीवन को काफी दूर तक सफलता की ओर बढ़ा चुके होते।

भला आप अपने भीतर छिपे महापुरुष अथवा विशिष्ट व्यक्ति को खोज भी कैसे सकते थे? यह कर्तव्य तो तभी पूरा हो सकता था जब आप उसके लिए कुछ समय देते। एकांत में जाकर और दुनिया की सामान्य बातों से दूर होकर थोड़ी देर अपने को महत्त्वपूर्ण व्यक्ति समझकर गंभीरतापूर्वक विचार करते और अपने से बार-बार यह प्रश्न करके उत्तर माँगते कि क्या मैं ऐसा ही साधारण एवं स्वार्थपूर्ण जीवन बिताने और महत्त्वहीन मौत मर कर दुनिया से

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

चले जाने के लिए ही संसार में आया हूँ? क्या केवल इस कमाने-खाने और मर जाने भर के लिए ही मैंने अपने जन्म एवं पालन-पोषण द्वारा माता का शारीरिक और पिता का आर्थिक संस्थान जर्जर कर डाला है।

आपके इन तीखे प्रश्नों को बार-बार सुनकर आपके अंदर का सोया हुआ विशिष्ट व्यक्ति अवश्य ही जागकर यह उत्तर देगा—"नहीं महाशय! ऐसा नहीं है। आप संसार में कुछ अच्छा, ऊँचा और कल्याणकारी काम करने के लिए ही आए हैं। आप मुझे अपने साथ लीजिए, मेरे महत्त्व का मूल्यांकन एवं उपयोग कीजिए और देखिए कि आप समाज के एक महान व्यक्ति बन सकते हैं।"

विश्वास रखिए, संसार के प्रत्येक मनुष्य के भीतर कोई-न-कोई महान पुरुष सोया पड़ा रहता है। आपके अंदर भी है। यदि ऐसा न होता तो एक साधारण ही नहीं, दीन-हीन मजदूर का एक अपढ़ पुत्र अब्राहम लिंकन संसार का महान व्यक्ति न हो पाता। एक साधारण जिल्दसाज की नौकरी करने वाला लड़का माइकल फैरिडे संसार का आश्चर्यजनक वैज्ञानिक न होता। साधारण वकील के स्तर से महात्मा गांधी विश्वबंधु बापू न हो पाते और दो पैसे की रोटी पर जीवन चलाने वाले स्वामी रामतीर्थ अध्यात्म-क्षेत्र के महारथी और एक कारखाने में छोटी-सी नौकरी करने वाला लड़का फोर्ड संसार का महानतम उद्योगपति एवं धनकुबेर न हो पाता।

मनुष्यों का यह आश्चर्यजनक विकास और चकित कर देने वाली उन्नति प्रमाणित करती है कि किसी भी मनुष्य के विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता है कि आगे चलकर वह जीवन के किस शिखर पर पदार्पण करेगा। संसार के सारे मनुष्यों में वे सारी क्षमताएँ तथा विशेषताएँ सन्निहित रहती हैं, जो किसी एक में भी हो सकती हैं और जो उन्नति-पथ पर किसी का संवहन करने वाली होती हैं। आवश्यकता केवल अपने अध्यवसाय द्वारा उन्हें जगाने और काम

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

में लाने की होती है। शक्तियों का उपयोग शक्तियों को बढ़ाता है और बढ़ी हुई शक्तियाँ मनुष्य को उत्तरोत्तर उन्नति की ओर अग्रसर करती रहती हैं।

मनुष्य जब अपने को कर्तव्य-कर्मों की शान पर चढ़ाता है, परिश्रम एवं पुरुषार्थ की आग में तपाता है तो उसके भीतर सोया पड़ा नेता, समाजसुधारक, लेखक, धर्मप्रचारक, वैज्ञानिक, कलाकार, संत अथवा उद्योगपति जागकर ऊपर उभर आता है।

अपने भीतर सोए महापुरुष अथवा विशिष्ट व्यक्ति के लिए उद्‌बोधक कर्म न करके जो व्यक्ति प्रमाद, आलस्य, अविद्या अथवा अकर्मों में लगे रहते हैं, वे साधारण से अधिक सामान्य स्थिति में तो उतर सकते हैं किंतु असाधारण स्थिति की ओर कदापि नहीं बढ़ सकते। विशिष्ट व्यक्तित्व के लिए जिन कठोर कर्मों तथा अखंड पुरुषार्थ की आवश्यकता है, उनकी पूर्ति भोग-विलास से भरी और ढीली-पोली जिंदगी में नहीं की जा सकती। जिन महत्त्वाकांक्षियों को अपनी विशिष्टता में विश्वास और समाज में सम्मानपूर्ण स्थान की लगन होती है, वे नियम, संयम से आबद्ध एवं व्यवस्थित जीवन को स्वीकार कर परिश्रम के लिए दिन को दिन और रात को रात नहीं समझते। उन्हें घाम का ताप, शीत का कंपन और वर्षा की बूँदें प्रभावित नहीं कर पातीं और नाहीं उनको पथ में कोई प्रलोभनपूर्ण अवरोध ही विरमा पाता है। एक बार चलकर यदि वे विश्राम करते हैं, तो अपने लक्ष्य की छाया में, अपने उद्‌देश्य की तलहटी और मंजिल की मीनार पर। बीच में उनके लिए विश्राम का कोई भी स्थल नहीं होता और न भटका देने वाले प्रवंचक विश्राम भवनों की मरु-मरीचिका में वे विश्वास ही करते हैं। उन्हें तो लगन, उमंग और उत्साह का ऐसा नशा चढ़ा रहता है, जो जीवन में पूर्णता प्राप्त किए बिना उतरता ही नहीं।

अपने प्रति हमारा अपना दृष्टिकोण भी हमारे अंदर सोए पड़े महान व्यक्ति को जगाने में सहायक होता है। जिस मनुष्य

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

की अपने प्रति जिस प्रकार की ऊँची-नीची भावना होती है, उसका भविष्य भी उसी प्रकार का बनता चला जाता है। हमारे अर्द्धचेतन में वैसी ही शक्तियाँ उठ खड़ी होती हैं और उसी प्रकार की प्रेरणा देकर उस ही दिशा में अग्रसर करती रहती हैं, जिसके अनुरूप हमारी भावना होती है। यदि हमारे अपने प्रति हमारा निज का दृष्टिकोण उत्साह एवं आशा भरा है तो निश्चय ही वैसी ही सृजनात्मक शक्तियाँ प्रबुद्ध होकर हमारी सहायता करने लगेंगी।

इसके विपरीत यदि हमारा दृष्टिकोण निराशा एवं निरुत्साहपूर्ण है तो निश्चय ही ऐसी आसुरी शक्तियों का जागरण होगा, जो आलस्य, अज्ञान, अवज्ञा तथा उपेक्षा का दोष जाग्रत कर हमारी गति को अवरुद्ध बनाए रखेंगी। अपने को दिन-दिन आगे बढ़ाने के लिए अपने प्रति आशा एवं विश्वास का दृष्टिकोण रखिए। कभी भूलकर भी ऐसा न सोचिए कि आपकी शक्ति न्यून है, आपके साधन नगण्य हैं, आपकी योग्यता अपर्याप्त है अथवा आप में साहस की कमी है। ऐसे हीन दृष्टिकोण और दीन भावना से भीतर का विशिष्ट व्यक्ति महत्त्वहीन होकर मर जाएगा और तब आपके विकास की कोई संभावना शेष न रहेगी।

संसार के सारे महापुरुष प्रारंभ में हमारे आप जैसे ही साधारण श्रेणी तथा साधारण योग्यता एवं क्षमताओं के व्यक्ति रहे हैं। इतना होने पर भी उन्होंने अपने प्रति अपना दृष्टिकोण नीचा नहीं बनाया, निराशा की भावना को पास नहीं आने दिया। आत्मविश्वास, उत्साह एवं अविरल अध्यवसाय के बल पर वे कदम-कदम आगे बढ़ते-और बढ़ते ही गए—यहाँ तक उन्होंने अपना महान-से-महान मनोनीत लक्ष्य प्राप्त ही कर लिया। आत्महीनता की भावना बहुत बड़ा अभिशाप है। यह जीवित को मृत तथा चेतन को जड़ बनाकर अपंग कर देती है। आत्महीनता की भावना आते ही जीवन में सर्वत्र निराशा का अंधकार घेर लेता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

निराश व्यक्ति की कई शक्तियाँ जगाना तो दूर उलटे उसकी जागरूक शक्तियाँ, कार्य क्षमताएँ, आगे देख सकने की दृष्टि तथा परिस्थितियों का अध्ययन कर सकने वाली सूझ-बूझ तक समाप्त हो जाती है। ऐसे निराश व्यक्ति में न तो साहस शेष रहता है और न समाज में कोई व्यक्ति उसकी सहायता करने के लिए उत्साहित होता है। निराशा एवं दुर्दैव का साथ माना गया है। निराशा का अंधकार आते ही मनुष्य को दुर्दैव का प्रकोप धर दबाता है।

यदि हम आशापूर्ण दृष्टिकोण से अपने अंदर बैठे महापुरुष पर विश्वास लेकर आगे बढ़ते हैं, तो हमारे सामने ऐसे मार्ग आप खुलते चले जाएँगे, जिन पर चलकर अभीष्ट लक्ष्य तक आसानी से पहुँचा जा सकता है। लक्ष्य सिद्धि का विश्वास और उसकी दुरूहता अथवा दूरी की अकल्पना मनुष्य के मार्ग को बहुत कुछ सुखद एवं सरल बना देता है। विश्वास से जिस मनोबल का जन्म होता है, उसमें बड़ी प्रेरक एवं सृजनात्मक शक्ति होती है। वह मनुष्य को भय, शंकाओं एवं संदेहों से दूर रखकर उमंग एवं उत्साह से भरपूर बनाए रहता है। इतने संबलों का भंडार लेकर चलने वाला ऐसा कौन-सा अभागा यात्री होगा, जो अपने लक्ष्य तक पहुँचे बिना बीच में ही थककर बैठ जाए।

निश्चय जानिए आपके अंदर भी एक महापुरुष सोया पड़ा है। उसे वांछित साधन एवं साधना द्वारा प्रबुद्ध कीजिए और समाज में अपना वह महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कीजिए, जो कहीं-न-कहीं पहले से ही सुरक्षित रखा है। आज आप जिस विषय-वासना की कीचड़ में पड़े हैं, जिस भोग-विलास अथवा दिखावे का जीवन अपनाए हुए हैं, उसे त्यागिए और अपने अनुरूप उच्च विचारधारा-उदात्त कार्य-शैली और उन्नत जीवन-लक्ष्य चुनिए। केवल इंद्रिय-सुख में भूले हुए आप अपने बहुमूल्य जीवन को कौड़ी मोल लुटा रहे हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इस जीवन का कुछ अंश यदि आप समाजसेवा, अध्ययन एवं परोपकार में लगा दें, तो वह दिन दूर नहीं रहे जबकि समाज आपको सर आँखों चढ़ाकर आपको अपना मार्गदर्शक मान ले। उठिए और हृषीकेश की तरह आज ही शुभारंभ का पांचजन्य फूँक दो और कुप्रवृत्तियों की कौरवीय सेना को निरस्त कर डालिए। आप से ऐसी आशा कैसे की जा सकती है कि संसार के उन हजारों महापुरुषों के जीवन से प्रेरणा लेकर आगे नहीं बढ़ेंगे। जो प्रारंभ में आप जैसे ही साधारण एवं सामान्य स्थिति के रहे हैं।

अपने मस्तिष्क को स्वार्थपरक चिंतन से मुक्त कर उज्ज्वल एवं उदात्त विचारधारा को स्थान दीजिए। जो बुद्धिमान व्यक्ति समृद्धि एवं सिद्धि की दिशा में अपनी चिंतन धारा को उन्मुख कर लेते हैं, वे मानो एक ऐसा पुण्य प्रतिपादित करते हैं, जिसका सुफल उन्नति एवं यश के रूप में ही प्रतिफलित होता है।

यह संसार कर्मभूमि है। मनुष्य कर्म करने के लिए ही इस धराधाम पर अवतरित हुआ है। कर्म और निरंतर कर्म ही सिद्धि एवं समृद्धि की आधार शिला है। कर्मवीर, कर्मयोगी तथा कर्मठ व्यक्ति कितनी ही निम्न स्थिति, सामान्य श्रेणी और पिछड़ी हुई अवस्था में क्यों न पड़ा हो; आगे बढ़कर, परिस्थितियों को परास्त कर अपना निर्दिष्ट स्थान प्राप्त ही कर लेता है। कर्म की गति काल भी रोक सकने में असमर्थ है। उठिए अपना लक्ष्य प्राप्त करके दिशा देखिए कि वह किधर आपकी प्रतीक्षा कर रही है। अपने उद्योग को उद्यत और कर्मशक्ति को चैतन्य कीजिए और यह मानकर जीवन-पथ पर अभियान कीजिए कि आप एक महापुरुष हैं, आपको अपने अनुरूप अपने चरित्रबल पर समाज में अपना स्थान बना ही लेना है।

ईश्वर की सबसे बड़ी देन, सबसे महत्त्वपूर्ण प्रसाद—अपने मस्तिष्क को विकृतियों से निरामय बनाइए। उसमें विवेक एवं सद्बुद्धि का दीप प्रज्ज्वलित कीजिए, उसको निर्माण की दिशा में

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लगाइए और देखिए कि आपका निरामय एवं निर्विकार मस्तिष्क आपको कैसी-कैसी सृजनात्मक योजनाएँ प्रदान करता है। पतन के गर्तों, प्रवृत्ति के कुंडों, निराशा की अँधेरी घाटियों से किस प्रकार जागरूक, पुण्य प्रदर्शक तथा प्रहरी की तरह बचाए रहता है। आप बुद्धि तथा विवेक के प्रकाश में निर्विघ्न अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते चले जाइए। असफलता के त्रास अथवा विरोधों के भय से अपना अग्रगामी पग पीछे न हटाइए। आपको अपने अनुरूप स्थान मिलेगा। ऊँचा तथा महत्त्वपूर्ण स्थान मिलेगा, क्योंकि आप महान पुरुष हैं और अपनी महानता, अपने विशिष्ट व्यक्तित्व को अपने आचरण द्वारा व्यक्त ही करेंगे।

जीवन को आनंदित रखने वाला कर्मयोग

उपनिषद् के ऋषि ने कहा है—

"आनन्दाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवन्ति। आनन्दं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति।"

"विश्व भुवन में जो कुछ है वह सब आनंदमय है। स्वयं ब्रह्म ही आनंदमय है। उस आनंद से ही समस्त भूतों की उत्पत्ति होती है। उसी से वे जीवित रहते हैं, सक्रिय रहते हैं। रूपांतरित और परिवर्तित होते रहते हैं।"

संसार का समस्त क्रिया, व्यापार, प्रकृति का प्रत्येक स्पंदन आनंद से युक्त है, आनंद के लिए है। आनंदस्वरूप ब्रह्म से प्रेरित और संचालित है। जो कुछ भी है उसका आदि, अंत, स्थिति सब आनंदमय है—ऐसा उपनिषद् के द्रष्टा ऋषियों ने कहा है। आनंद के सिवा कुछ भी नहीं है। संसार की तथाकथित, भीषणताओं, कठोरताओं, संघर्षों के गर्भ में भी आनंद का निवास है।

प्रश्न उठता है, जब समस्त संसार का आधार, मूल उद्देश्य आनंद ही है, तो मनुष्य इतना दुखी, परेशान, क्लेशयुक्त क्यों है? वह अपने आपको अभागा, पाप का मारा, जीवन का अभिशाप क्यों समझता है?

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

दुःख, क्लेश, रोग, शोक, अशांति, पाप, ताप विश्व का नियम नहीं है। विश्व तो आनंद के नियम से ही संचालित है। आनंद ही इसका उद्देश्य है। यह सब विकृतियाँ तो मनुष्य के अपने ही प्रयत्नों का परिणाम है। अपनी ही अनुभूति, चिंतन और क्रिया का फल है।

मनुष्य जो कुछ भी करता है उसके दो आधार हैं। एक तो स्वार्थ के लिए, अभाव की पूर्ति के लिए किसी प्रयोजन विशेष से वह क्रियाशील रहता है। दूसरे सहज भाव में आनंद से आनंद के लिए, आनंद में स्थिर होकर काम करता है। तीसरी तरह के व्यक्ति और भी होते हैं जो अकर्मण्यता, आलस्य, जड़ता का अवलंबन लेकर अपनी कल्पनाओं के संसार में सुख-शांति, आनंदस्वरूप की उपलब्धि चाहते हैं।

किसी भी प्रयोजन अथवा अभाव की पूर्ति, स्वार्थ की प्रेरणा से किए जाने वाले कार्य कभी आनंदयुक्त नहीं हो सकते। क्योंकि इस तरह के कर्म ही बंधन होते हैं और बंधन में कभी मुक्त आनंद नहीं मिल सकता। कर्म जब अपने मूल स्रोत आनंद से विलग होकर स्वार्थ की प्रेरणा से चलता है, तो वह बंधन बन जाता है। नारी पति के साथ आनंदमय आत्म संबंधों को भूलकर उन्हें न देकर केवल बाह्य प्रयोजन मात्र से ही व्यवहार, व्यापार करेगी, तो दांपत्य जीवन कलुषित बनेगा ही। पति की सेवा, सहयोग, घर का काम उसे बंधन और भार जान पड़ेंगे और बंधन के फलस्वरूप घुटन, परेशानी, असंतोष रहना स्वाभाविक ही है।

स्वार्थ, प्रयोजन, अभाव की पूर्ति के लिए किए जाने वाले कार्य मनुष्य को बंधन में तो डालते ही हैं, साथ ही उसको पुरोगामी न बनाकर प्रतिगामी बनाते हैं। ऐसे व्यक्ति के जीवन में प्रगति, उन्नति, विकास का मार्ग बंद हो जाता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

स्वार्थ, प्रयोजन, अभाव की पूर्ति के लिए काम करने वाले के लिए संसार एक 'सश्रम—कारावास' है। जहाँ उसे बंधन है—परावलंबन है। परिणाम में वृथा श्रम, परेशानी, कष्ट, मुसीबतें हैं, उसकी आत्मा का कुछ भी लाभ नहीं सधता, वह संसार के मूल मंत्र आनंद से विच्युत ही रहता है।

अकर्मण्यता, आलस्य, कर्म का त्याग भी मुक्ति के आनंद का आधार नहीं हो सकता, वहाँ तो अवरोध है, जड़ता है, जिसका परिणाम शून्य के सिवाय कुछ भी नहीं होता। यह तो विश्व-नियम के ही सर्वथा विरुद्ध है। विश्व का मूलाधार क्रिया है। जड़-चेतन, समस्त विश्व-ब्रह्मांड क्रियाशील है, गतिशील है। उपनिषद्कार कहता है—

"यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति। यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति। तद्विजिज्ञासस्व। तद् ब्रह्मेति।"

जिसमें से सब की उत्पत्ति होती है, जिसके द्वारा सब जीवन धारण करते हैं, जिसमें सब प्रयाण और प्रवेश करते हैं, उसे जानने का प्रयत्न करो, वही ब्रह्म है।

"परास्य, शक्तिर्विविधैव श्रूयते, स्वाभाविकी ज्ञानबल, क्रियान्व।" अर्थात ऐसा सुना है कि उसकी (ईश्वर की) परमशक्ति उसकी विविध शक्ति ज्ञान-क्रिया, बल-क्रिया स्वाभाविक रूप से होती रहती है।

इस तरह क्रियाशील तत्त्व को अकर्मण्यता के द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। आनंद, मुक्ति और कर्म का अनन्य संयोग है। कर्म के अभाव में आनंद और आनंद के अभाव में कर्म का अस्तित्व ही नहीं, आनंद और संसार की क्रियाशीलता पर्याप्त है। कर्म का त्याग करके केवल कल्पना और विचारों से ही आनंद मुक्ति, अथवा आनंद स्वरूप को प्राप्त करने का प्रयत्न व्यर्थ है।

आनंदमय स्थिति में रहकर सहज स्वभाव से संसार का काम करते रहने से ही ज्ञान और कर्म का सुंदर समन्वय होता है और वही

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

मुक्ति का मार्ग है। आनंद ब्रह्म का स्वरूप है, आत्मा का धर्म है, विश्व का नियम है। स्त्री द्वारा पतिगृह में किया जाने वाला सेवा कर्म, माता-पिता द्वारा बच्चों का पालन-पोषण, बंधुजनों के लिए किए जाने वाला कठिन कार्य, श्रम आदि आत्मस्फूर्ति होते हैं, आनंद की प्रेरणा से ही होते हैं और परिणाम में भी इनसे आनंद की ही प्राप्ति होती है।

उपनिषदकार ने कहा है—"**आत्मक्रीडः आत्मरतिः क्रियावान् एष ब्रह्मविदां वरिष्ठः।**"

"वही श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी है जो अपनी आत्मा में ही क्रीड़ा करते हैं, आत्मा में ही सुख पाते हैं और वे कर्मनिष्ठ भी होते हैं। उनके जीवन में आनंद और कर्म का समन्वय होता है। ब्रह्ममय कर्म अर्थात आनंदयुक्त कर्म ही मुक्ति का आधार है।"

हमारे जीवन में दुःख, अशांति, क्लेश, परेशानी, कष्ट, भीषणताएँ, कठोरताएँ इसीलिए हैं कि हम स्वार्थ के लिए, अपने लाभ की प्रेरणा से, प्रयोजन से अपने अभाव की पूर्ति के लिए काम करते हैं। संसार के बाजार में अपनेपन की रट लगाते हुए अपने लाभ के दाव-पेचों में हम व्यस्त रहते हैं। जरा सफलता मिली, स्वार्थ सिद्ध हुए कि हम हँसने लगते हैं। तनिक हानि हुई कि रोने लगते हैं। तनिक-से श्रम, कठिनाइयों में हमारा दम फूल जाता है। दफ्तर के छह घंटे के काम में थककर चूर-चूर हो जाते हैं, घर, परिवार, समाज, बंधु-बांधवों में जहाँ भी हम जाते हैं चैन नहीं मिलता, संसार यातनाओं से भरा सश्रम कारावास जैसा लगता है। धीरे-धीरे उमर बीतने के साथ लगाता है मानों संसार ने हमें खरीदे हुए बैल की तरह उपयोग किया है और वृद्ध होने पर, अयोग्य तथा असमर्थ हो जाने पर, बूढ़े बैल की तरह निराश्रित छूँछ बनाकर छोड़ दिया है और हम संसार को, यहाँ के प्राणियों को, संबंधियों, भाई-बंधुओं को दोष देते हैं, गाली देते हैं। ईश्वर के विधान को कोसते हैं। एक बीच में ही ठगे हुए यात्री की तरह अवसाद, शोक, चिंता,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

क्लेश के साथ जीवन समाप्त करते हैं। किंतु इसका आधार हमारा स्वार्थपूर्ण दृष्टिकोण ही होता है।

समस्त विश्व-क्रिया स्वार्थ की प्रेरणा से नहीं, वरन परमार्थ, त्याग, उत्सर्ग, सार्वभौमिक हित के आधार पर चलती है। बीज मिट्टी में मिलकर असंख्यों रूप में संसार का उपकार करता है। नदी लंबे-चौड़े भूभाग को अपने शीतल स्पर्श से सींचती हुई यात्रा करती है। संसार का प्रत्येक पदार्थ यहाँ कुछ-न-कुछ देता है। एक मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो अपनी बौद्धिक विशेषता का दुरुपयोग कर स्वार्थपूर्ति में, संग्रह में ही अपनी चतुराई समझता है, फलतः वह सबसे दुखी-परेशान भी रहता है।

महापुरुषों के जीवन में इसी तथ्य के दर्शन सहज ही किए जा सकते हैं। वे मशीन की तरह काम करते हुए भी खिलखिलाते रहते हैं। निरंतर काम करते हुए भी आनंद से दूर नहीं रहते। भीषणता, बाधाओं, संघर्षों में भी उन्हें हँसते हुए काम पर देखा जा सकता है। उनके जीवन में हानि और लाभ नाम के कोई मापदंड नहीं होते। उनके जीवन का एक ही मूल मंत्र होता है निरंतर आत्मस्फूर्ति हो कर परमार्थिक, सार्वभौमिक हितों के काम में लगे रहना। आत्मानंद और बाह्य संसार का संयोग करके वे अपने कार्यों में लगे रहते हैं, गीता में इसे ही कर्मयोग कहा गया है।

कर्म करना चाहिए, फल की कामना नहीं

किसी कार्य की सिद्धि में विश्वास नहीं है, तो उसकी सफलता भी संभावित नहीं होगी। इसलिए कार्यारंभ से पूर्व ही उसके हिताहित पर विचार कर लेना चाहिए। यदि यह विश्वास हो जाए कि यह कार्य न्यायोचित हैं और किसी को हानि पहुँचाने वाला नहीं है, तो उसके पूर्ण होने तक प्रयत्न करना चाहिए।

कार्य को आरंभ कर देने पर अनेक विघ्न-बाधाएँ दिखाई पड़ती हैं। परंतु विघ्नों से डरकर कार्य को अधूरा छोड़ना भीरु

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रकृति का परिचायक है, जो लोग कार्यों को बीच में ही छोड़ देते हैं, उनके जीवन में निराशा बढ़ जाती है और फिर वे किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।

कार्य करते समय यदि यह विचार उत्पन्न हो कि उसका फल उतना उत्तम नहीं होगा, जितना कि पहले सोचा था और इसी भय से उसे मार्ग में छोड़ दिया जाए, तो वह भी कोई बुद्धिमानी की बात नहीं होगी। किसी भी कार्य का फल उत्तम, मध्यम या निम्न हो सकता है, परंतु उसकी चिंता नहीं करनी चाहिए। घोर परिश्रम के कारण कार्य का फल उत्तम भी हो सकता है और परिश्रम न करने की अवस्था में निम्नतर भी।

हमें कार्य करना चाहिए, उसके फल की कामना नहीं करनी चाहिए। ईश्वर ने हमें कर्म करने का ही अधिकार दिया है, फल तो स्वयं उसी के हाथ में है। यदि मनुष्य की इच्छानुसार ही फल मिलने लगता तो दु:ख, संताप, पश्चात्ताप और असफलता जैसे शब्द ही संसार में सुनाई नहीं पड़ते। तब न किसी को धन की चिंता रहती और न मान-सम्मान की। सभी कुछ मानवी इच्छा के बल पर प्राप्त हो जाता।

मनुष्य वह है जो बाधा रूपी चट्टानों को तोड़कर गिरा देता है। संकटों से डरकर हट जाने से कभी कोई काम नहीं बनता। जिस कार्य के पूर्ण होने में बाधाएँ नहीं आतीं, वह कार्य भी कुछ उल्लेखनीय हो सकता है? कार्य तो वह है, जिसमें बाधाएँ आएँ और कर्मवान वह है जो ऐसे ही कामों को करें जिनमें बाधाएँ आ-आकर उसे सफलता के द्वार की ओर दृढ़ता से ढकेल दें। इसलिए बाधाओं का स्वागत करिए, वे आपको सफलता का रहस्य समझाएँगी।

तुम जिस कार्य को कर रहे हो, वह यदि दूसरों की दृष्टि में तुच्छ भी हो, तो तुम उसे उच्च समझने की चेष्टा करो। अपने मन में विश्वास बैठा लो कि वह कार्य तुच्छ नहीं है। छोटा कार्य करना

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कोई लज्जा का विषय नहीं है, यदि वह सचाई से किया जाए। लज्जा तो चोरी और व्यभिचार आदि दुष्कर्मों में होनी चाहिए। कार्य में कोई छुटाई नहीं है। पाश्चात्य देशों में तो छोटा-छोटा कार्य करने वाले भी आज कोट्याधीश हो गए हैं।

विश्वास कीजिए कि अपने छोटे कार्य में भी सफल होने पर आपको अत्यंत हर्ष होगा। अपने मन में उत्साह की मात्रा को बढ़ाते रहिए, अपने आत्मविश्वास को मत तोड़िए, आप अवश्य ही सफल होंगे।

कार्य की सफलता के लिए योग्यता तो होनी ही चाहिए, उसके बिना आपका कार्य नहीं बन सकता। यदि आप योग्य नहीं हैं तो पहले योग्यता प्राप्त कीजिए फिर उस कार्य में हाथ डालिए। अयोग्य व्यक्ति की सफलता अवश्य ही संदेहास्पद होती है।

मनुष्यों का स्वभाव है कि वे प्रत्येक कार्य में अपनी टाँग अड़ाना चाहते हैं। वे सत्पुरुषों के उत्कर्ष को भी नहीं देख सकते और निम्न व्यक्तियों की छोटी वृत्ति पर भी टीका-टिप्पणी करना अपना कर्तव्य समझते हैं। परंतु आप अपने विषय में दूसरों की सम्मति की कोई चिंता मत कीजिए, उसे सुनिए ही मत। केवल अपने कार्य में लगे रहिए। कोई आपके कार्य को बुरा बताए, तो उससे द्वेष मत मानिए और कोई अच्छा बताए तो प्रशंसा से फूलिए मत, अन्यथा आपके मन में विकार उत्पन्न हो जाएगा और अहंकार वृद्धि के कारण चलते हुए कार्य में शिथिलता आ जाएगी।

मनुष्य के गुणों का अनुमान उसके कार्यों की सफलता से ही नहीं लगाया जाता, बल्कि उसके कार्य के अदम्य उत्साह से ही पता चलता है। जो व्यक्ति काँटों पर चढ़कर फल तोड़ता है, वह उससे अधिक साहसी है जो किसी वस्तु के सहारे से ही उसे तोड़ लेना चाहता है, अथवा कोई सहारा न मिले तो फल तोड़े बिना ही घर लौट जाता है। जो लोग निर्भय होकर काँटों पर चढ़े चले गए, उनकी प्रारंभ में चाहे कितनी ही टीका-टिप्पणी क्यों न हुई हो, सफल होने

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पर सभी ने प्रशंसा की। इस लोकोक्ति में कुछ असत्य नहीं है कि "धैर्य का फल मीठा होता है।"

इसका यह अर्थ नहीं है कि ईश्वर पर विश्वास रखने वाले भक्तों को सफलता शीघ्र मिल जाती है, बल्कि जो व्यक्ति ईश्वर को सहायक मानता हुआ अपने लक्ष्य की ओर सपरिश्रम बढ़ता चला जाता है, वही उसमें सफलता प्राप्त करता है।

जो व्यक्ति अपने आत्मबल पर भरोसा नहीं करते और साधनों को सर्वोपरि मानते हैं, वे संसार में कुछ कर सकेंगे, इस पर विश्वास नहीं होता। साधनों का आश्रय हमारे उत्थान में बाधक है। जो व्यक्ति आत्मविश्वासी होते हैं, वे जीवन-पथ में बढ़े चले जाते हैं, वे किसी का सहारा नहीं टटोलते।

सीताहरण के पश्चात् यदि भगवान राम चाहते तो अयोध्या और मिथिला की सेनाएँ बुलवा सकते थे और तब खोज में भी इतना समय नहीं लगता और राक्षसराज भी शीघ्र वश में आ जाता। परंतु राम को अपने बल पर भरोसा था, उनके हृदय में आत्मविश्वास भरा था और उन्हें अपनी शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों पर पूर्ण भरोसा था, क्योंकि वे अत्यंत वीर, चरित्रवान और धैर्यवान थे। सच्चरित्र व्यक्तियों को बाहरी सहायता की आवश्यकता नहीं होती और यदि आवश्यकता होती भी है, तो सहायता मिलने में कुछ कठिनाई नहीं होती।

जिन्हें अपने बल पर भरोसा है, उन्हें असफलता का सामना नहीं करना पड़ता। वे जब यह विश्वास कर लेते हैं कि अमुक कार्य होना ही है, तो वह होकर ही रहता है। परंतु यह विश्वास अपने पर निरंतर अंकुश रखने से प्रकट होता है।

मन पर नियंत्रण रखने से अपनी सोई हुई शक्तियों का ज्ञान होने लगता है और तब यह अनुभव होता है, कि अमुक कार्य हो सकेगा, अमुक नहीं हो सकेगा। यदि भाग्य के अधीन कार्यों को

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

छोड़ दिया जाए तो कोई कार्य नहीं बन पाता। बहुत से विद्वानों का तो विश्वास है कि भाग्य के निर्माता हम स्वयं है। इसलिए उचित है कि हम अपनी शक्तियों को पहचान कर उन्हें कार्य रूप में परिणत करें।

हम किसी कार्य को दूसरों के बल पर करना चाहें और यदि वह कार्य हो जाए, तो भी हमारे मन में आनंद और स्फूर्ति का अनुभव नहीं हो पाता। वैसे किसी से सहायता लेना बुरी बात नहीं है, फिर भी अनेक कार्य ऐसे हैं जो दूसरों के द्वारा अपने मन के अनुसार नहीं हो पाते और कुछ कार्यों में दूसरे व्यक्ति उपेक्षा दिखाकर उन्हें बिगाड़ देते हैं।

इस संबंध में एक उदाहरण लीजिए—एक व्यक्ति को दूसरा व्यक्ति पीड़ित करता है। जो पीड़ित होता है वह स्वयं उसका सामना करने में समर्थ नहीं है, तो वह किसी दूसरे की सहायता लेता है। दूसरा व्यक्ति सोचता है कि मैं क्यों व्यर्थ ही उससे शत्रुता लूँ। अत: वह उसे टालता रहता है, तो बाह्य सहायता का यह रूप कितना भ्रमपूर्ण रहा? यदि उसने आत्मबल से काम लिया होता तो पीड़क को अवश्य झुकना पड़ता और उसे किसी प्रकार निराश नहीं होना पड़ता।

आत्मशक्ति का उत्कर्ष होने पर मनुष्य में इतना बल आ जाता है कि वह संसार भर को हिला सकता है। दूसरे का मुख देखने वाले व्यक्तियों को पग-पग पर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ऐसे व्यक्ति अपने भाग्य को दोष देते हुए निराश बैठे रहते हैं और वे अपमान, दुर्व्यवहार आदि के शिकार होते रहते हैं।

मनुष्य जब अपनी कार्यक्षमता को जानने लगता है, तभी उसमें आत्मविश्वास की भावना जाग्रत होती है। जरा सोचिए कि तूँबे के सहारे तैरने वाला व्यक्ति कभी अच्छा तैराक हो सकता है? नकल करने वाला लेखक क्या सचमुच ही लेखक है? यदि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आत्मबल नहीं है, तो शक्ति होते हुए भी पर्वत की चोटी पर कोई कैसे चढ़ेगा?

कुछ ऐसे अवसर आते हैं, जबकि अपने निर्णीत कार्य को करते समय उस पर पुनर्विचार करना होता है। ऐसा करना कोई बुरी बात नहीं है, क्योंकि शीघ्रता करने से भी कार्य बिगड़ जाते हैं। परंतु बिना कारण किसी कार्य को लापरवाही में डाल देना और कार्यकाल को व्यर्थ बढ़ाना भी हानिकारक सिद्ध होता है। कार्य के आरंभ में दो बार, तीन बार भी सोचा जाए तो भी निर्णय शीघ्र करना चाहिए।

कभी-कभी किसी कार्य में सोचने-विचारने का अवसर ही नहीं मिलता और क्षणभर में ही जो कार्य प्रणाली निश्चित हो जाए, उसी के अनुसार तुरंत कार्य करना होता है। ऐसे कार्यों की बागडोर आत्मविश्वासी ही सँभाल सकते हैं। न जाने कब, किस मनुष्य के सामने कोई ऐसी गंभीर समस्या उत्पन्न हो जाए, इसलिए भलाई इसी में है कि हम अपने मन को नियंत्रित और गंभीर रखें।

आत्मविश्वासी पुरुष शारीरिक कष्टों से नहीं डरते और वे कठिन-से-कठिन कामों में जुट जाते हैं, यद्यपि यह आवश्यक नहीं कि उन्हें प्रत्येक कार्य में सफलता ही मिलती जाए, फिर भी विश्वासपूर्वक कार्यों में जुटे रहने से सफल हो ही जाते हैं।

कुछ व्यक्तियों में विचार शक्ति तो होती है। परंतु निर्णय करने के पश्चात् वे उसमें शंका करने लगते हैं, उस समय सही निर्णय न हो सकने से या तो कार्य का समय निकल जाता है अथवा बनता हुआ कार्य अपनी ही बहक के कारण नहीं बनता।

मनुष्य जीवन में प्रायः नवीन उलट-फेरों की संभावना रही आती है। जब कभी कोई कठिन विषय सामने आता है, तो निर्बल विचार शक्ति वाले मनुष्य उनसे घबराते हैं, परंतु जिन पुरुषों में आत्मबल होता है, वे ऐसे अवसरों पर अधिक उत्साहित होते हैं, क्योंकि वे किसी भी भीषण परिस्थिति से सामना करने को सदा कटिबद्ध रहते हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

संसार के सभी कार्यों में थोड़े-बहुत आत्मबल की आवश्यकता होती ही है। परंतु विवेकी पुरुष वही है जो छोटे कार्य को भी बड़े कार्य के समान सावधानी से करे। कभी-कभी असावधानी के फलस्वरूप छोटे काम भी बिगड़ जाते हैं। इस संबंध में किसी वकील को देखिए—उसे कानून की धाराएँ याद रह सकती हैं फिर भी कभी-कभी ऐसे प्रश्न उनके सामने आते हैं, जिनका उत्तर तत्काल देना होता है। उसमें उनकी स्मरण शक्ति जितना कार्य करती है, उससे अधिक कार्य आत्मबल को करना होता है।

इसलिए कुतर्क का त्याग कीजिए, संशयों को छोड़िए और भगवान श्रीकृष्ण के वचन '**संशयात्मा विनश्यति**' पर भली प्रकार ध्यान दीजिए। इससे आपके मनोबल की वृद्धि होगी, आपका आत्मविश्वास सुदृढ़ होगा, आपका चरित्र उज्ज्वल होगा। फिर आपकी सफलता में कोई संदेह नहीं रहेगा।

अनासक्त कर्मयोग की आवश्यकता

मानव जीवन उतार-चढ़ाव, सुख-दुःख, हानि-लाभ, अनुकूल-प्रतिकूल का चित्रपट है। एक समय जीवन में वह आता है जब मनुष्य हँसता है, खुशी के मारे बासों उछलता है। और एक समय वह भी आता है जीवन में जब मनुष्य रोता है, निराश, चिंतित और खिन्न रहता है, मानो हँसी-खुशी कोई स्वप्न की बात थी। राजमहलों में खेलने, कूदने वाले राम और सीता को नंगे पैरों, वल्कल वस्त्र पहने चौदह वर्ष वन-वन भटकना पड़ा। श्रीकृष्ण, जिन्हें अवतार मानते हैं उन्हें भी अपने वंश का पतन अपनी आँखों से देखना पड़ा। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का इतिहास इन दोनों ही पहलुओं से भरा पड़ा है।

क्या मानव जीवन इन दोनों पहलुओं की निरी क्रीड़ा मात्र है? क्या यह उस निर्जीव गेंद की तरह है, जिसे नौ खिलाड़ी इधर से उधर फेंकते हैं और इसमें ही उसका अस्तित्व है। अयोग्य हो जाने पर वह फेंक दी जाती है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

नहीं ? ऐसी बात नहीं। जीवन का अस्तित्व उस अनंत काल, नित्य निरंतर सत्य, अजर-अमर तत्त्व की तरह है, जिसके संदर्भ में रात-दिन, सरदी-गरमी, रचना-विनाश आदि के क्रम चलते रहते हैं, किंतु उसकी आदि से चली आ रही यात्रा नहीं रुकती। अनंत की यात्रा का लक्ष्य अनंत ही हो सकता है। पूर्ण, पूर्ण की ओर ही जा सकता है। जीवन-मरण, सुख-दुःख, हानि-लाभ, प्रतिकूल-अनुकूल तो मार्ग के टेढ़े-सीधे, ऊँचे पत्थर मात्र हैं।

जीवन-पथ की इन विभिन्नताओं में आगे बढ़ने का एक सरल उपाय है, इनके प्रति अनासक्त होना, निस्पृह होना। एक निरपेक्ष की तरह रहकर अपने कर्तव्य पर आगे बढ़ते रहना। गीता में इसीलिए निष्काम कर्मयोग, आनासक्ति का उपदेश दिया है।

संसार और इसके पदार्थों के प्रति जितनी आसक्ति होती है, लगाव होता है, उतना ही मनुष्य का अभिमान बढ़ता जाता है। धन के प्रति, कुटुंब के प्रति अनावश्यक मोह रखने वाले अभिमान में ग्रसित होते देखे गए हैं। विद्या का अभिमान करने वाले अपने आप को असाधारण व्यक्ति समझने लगते हैं। उच्च पद पर काम करने वाले अपने आप को भाग्यशाली, शालीन समझते हैं। वे भूल जाते हैं कि हम भी दूसरे मनुष्यों की तरह साधारण मनुष्य हैं।

संसार और इसके आकर्षणों को सत्य मानने वाले पर अभिमान पूरी तरह अपनी सवारी करता है। किंतु मिट्टी के घरौंदे की तरह टूटने-फूटने वाले पदार्थों की क्षणभंगुरता, नश्वरता, अनित्यता समझ में आ जाए, तो इनके प्रति आसक्ति नष्ट हो जाती है। और आसक्ति नष्ट हो जाने पर अभिमान भी नहीं रहता। जब मनुष्य यह सोचता है अथवा परिस्थितियों द्वारा सोचने को मजबूर किया जाता है कि उसका यह यश-वैभव का महल किसी भी क्षण तहस-नहस हो सकता है, उसकी यह बौद्धिक क्षमता कभी भी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

नष्ट होकर अहं विक्षिप्त बन सकता है, अपनी धन-संपत्ति को वह अपनी ही आँखों के सामने नष्ट-भ्रष्ट होते देख सकता है, अपने शक्तिशाली पहलवान शरीर को स्नायु रोगों से पीड़ित, धड़कन, गठिया से दुखी देख सकता है, तो सहज ही मनुष्य का अभिमान काफूर हो जाता है।

संसार और इसके पदार्थों का अस्तित्व अनित्य है, क्षणभंगुर है। ये कभी भी नष्ट हो सकते हैं। इनके प्रति अभिमान करना, इनमें लिप्त रहकर जीवन के आवश्यक कर्तव्यों को तिलांजलि दे देना बड़ी भारी भूल है। इनकी अनित्यता, क्षणभंगुरता का अभ्यास करते रहने पर अभिमान और इन आकर्षणों से उत्पन्न विकारों का शमन हो जाता है। मानसिक ग्रंथियों का निराकरण होता है।

मनुष्य, संसार और इसके पदार्थों के बारे में अनित्यता का अभ्यास करता है, किंतु सफलताओं का आकर्षण फिर उसे भुलावे में डाल देता है और उससे अभिमान की वृद्धि होने लगती है। उसे अपनी सामर्थ्य क्षमताओं पर अभिमान होने लगता है। किंतु जीवन की बाह्य सफलता तो आंतरिक जीवन के विकास व उच्चता की सफलता का परिणाम है, जो सहज और स्वाभाविक है। विकास के साथ सफलता, समृद्धि तो इस तरह है जैसे सिर पर बाल। यदि बालों को ही महत्त्व दिया जाए, उनकी सेवा की जाए, शरीर को भुला दिया जाए तो यह एक बड़ा भारी अज्ञान ही कहा जाएगा। बाह्य सफलताओं का चिंतन करके अपने कर्तव्य में दत्तचित्त लगे रहना चाहिए। इससे अभिमान की वृद्धि नहीं होगी। व्यक्ति, जीवन में अनासक्त और निरपेक्ष होकर अपनी जीवनयात्रा पूरी करेगा।

जब हथौड़ा पत्थर पर मारा जाता है, तो पत्थर उसका प्रतिवाद करता है और इसलिए वह टूट जाता है। शीशे के जमीन पर पड़ते ही टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं, किंतु गेंद को जोर से मारने पर भी वह ऊपर ही उछल जाती है, इसका कारण यह कि अपने टकराने वाले

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

भाग को वह शिथिल कर देती है। इसी तरह जब विभिन्न कुसंस्कार काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर मानसिक क्षेत्र में उथल-पुथल मचाएँ तो संसार की अनित्यता, पदार्थों की क्षणभंगुरता और परिस्थितियों की चंचलता का तत्त्वज्ञान समझना आरंभ कर देना चाहिए। क्षण-क्षण में जलाशय में तरंगें उठती रहती हैं, एक जाती और दूसरी आती रहती है। इस संसार का भी यही क्रम है। आज लाभ तो कल हानि, आज सुख तो कल दुःख। रात और दिन की तरह, धूप और छाँह की तरह प्रिय और अप्रिय परिस्थितियों का ताना-बाना भी बुनना पड़ता है। इससे किसी जीवधारी को आज तक छुटकारा नहीं मिला। कोई भी पूर्ण सुखी इस धरती पर नहीं हुआ। कुछ-न-कुछ चिंता हर किसी को लगी रहती है। फिर अपने लिए यदि हम यह अभिलाषा करें कि हमें पूर्ण सुख-शांति निरंतर बनी रहे तो यह कैसे संभव हो सकता है? इस परिवर्तनशील जगत में नित्य नया दृश्य दिखाई पड़ना स्वाभाविक है। यह बदलाव सदा सुखद ही नहीं हो सकता और प्रिय-अप्रिय दोनों ही परिस्थिति के लिए हम को सदैव प्रस्तुत रहना चाहिए।

संपत्ति और विपत्ति में मानसिक संतुलन को बनाए रहना, धीर पुरुषों का काम है। कायर ही हड़बड़ी मचाते हैं। हमें कायर नहीं, धीर-वीर बनना चाहिए। जीवन में आती रहने वाली रंग-बिरंगी, कडुई-मीठी, धूप-छाँह को संतुलित मन से देखना चाहिए और उसकी ओर ध्यान न देकर अपने कर्तव्य-पथ पर धैर्यपूर्वक अनासक्त रहते हुए जीवन की ओर साहसपूर्वक चलते रहना चाहिए।

अनासक्त कर्मयोग और उसका दर्शन

संसार में ऐसे बहुत-से व्यक्ति होंगे, जो जीवन में बहुत दूर चलकर भी वापस लौट आए होंगे। उनकी बड़ी-बड़ी आशाएँ, आकांक्षाएँ और अभिलाषाएँ रही होंगी। पर वे जीवन में कुछ ऐसे हताश और हतोत्साह हो गए कि ऊँचाई की ओर दूर तक यात्रा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

करके नीचे उतर आए। उनके इस पुनरावर्तन के दो ही कारण हो सकते हैं। एक तो यह कि जीवन-पथ पर आने वाली प्रतिकूलताओं से वे परास्त हो गए अथवा उनके कर्तृत्व की असफलता ने उन्हें निराश कर दिया।

जीवन-पथ पर, कोई ऊँचा ध्येय लेकर चलने वालों को प्रायः बहुत बार ही असफलता का सामना करना होता है। जीवन में असफलताओं का आगमन कोई अप्रत्याशित घटना नहीं होती। सफलता-असफलताओं के आलोक-अंधकार से होकर ही मनुष्य को अपने ध्येय तक जाने का अवसर मिलता है। यदि जीवन में असफलताओं से संघर्ष न करने पड़ें और प्रारंभ किया हुआ अभियान अव्यवधानित रूप से लक्ष्य तक चला जाए, तो कोई भी सामान्य से सामान्यतम व्यक्ति भी लक्ष्यजयी बनने का श्रेय प्राप्त कर सकता है और तब उस लक्ष्य अथवा जीवन-परिधि का कोई मूल्य-महत्त्व ही न रह जाए। वह एक सामान्य यात्रा बनकर ही रह जाए।

जीवन में बाधाओं और असफलताओं को पार करते हुए लक्ष्य की ओर साहसपूर्वक बढ़ते जाना ही मनुष्य की महानता है। जिनको ऊँचाई पर पहुँचने के लिए कोई संघर्ष न करना पड़ा हो, असफलताजन्य निराशा पर विजय पाने के लिए और अधिक उत्साह और साहस की कुमुक न बढ़ानी पड़ी हो, उसे लक्ष्यप्राप्ति का कोई विशेष श्रेय नहीं मिल सकता है। श्रेय का महत्त्व कंटकाकीर्ण मार्ग को पार करके आगे बढ़ते रहने में ही मिलता है। जो पथ की बाधाओं से भयभीत होकर पीछे लौट आता है, उसे विद्वानों ने कापुरुष की संज्ञा दी है। असफलता और व्यवधान जीवन-पथ की सहज संभावनाएँ हैं। इनसे कोई भी लक्ष्यवान व्यक्ति अछूता नहीं रह सकता। जीवन में लक्ष्य निर्धारित न करना तो केवल एक अश्रेयस्कर सामान्यता ही है, पर लक्ष्य निर्धारित करने के बाद, बाधाओं और व्यवधानों के भय से उसे छोड़ देना

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कायरता है। इस कायरता का कलंक किसी भी सत्पुरुष को नहीं लेना चाहिए।

बीच रास्ते से लौट आने वाले निस्संदेह बड़े दयनीय व्यक्ति होते हैं तथापि असफलता का आघात होता बड़ा कठोर है। जल्दी ही लोग इसे सहन नहीं कर पाते और निराश होकर हतगति हो जाते हैं। जीवन में कुछ करना भी है और कर्तृत्व में असफलताओं का आना भी असंभाव्य नहीं और उससे निराशा एवं निरुत्साह का भय भी सदा संभाव्य ही है, तब आखिर ऐसा कौन-सा उपाय ग्रहण किया जाए, जिससे निराशा एवं निरुत्साह का भय जाता रहे और असफलताओं से टक्कर लेते हुए सफलताओं की ओर बढ़ते रहा जा सके। यह शक्ति और साहस आखिर किस प्रकार प्राप्त हो सकती है?

इसका उपाय है, और बड़ा ही अमोघ उपाय है, वह है— 'अनासक्त कर्मयोग।' यह अनासक्त कर्मयोग का जीवन-दर्शन स्वयं भगवान वासुदेव का अनुमोदित दर्शन है। गीता में इसकी बड़ी ही विशद तथा विस्तृत व्याख्या की गई है। भगवान ने स्वयं इसका उपदेश करके कर्मविमुख होकर बैठे रहने वाले अर्जुन की क्लीवता दूर की थी। अनासक्त कर्मयोग जीवन का एक बहुत बड़ा समाधान है। जीवन-पथ पर इसका अनुसरण करने वाला कर्मयोगी असफलताओं एवं प्रतिकूलताओं से प्रभावित होकर निराश अथवा हतोत्साह नहीं होता। वे सफलता-असफलताओं के बीच हँसते-खेलते, समभावपूर्वक आगे बढ़ते जाते हैं। न तो उन्हें सफलता प्रभावित कर पाती है और न असफलता। दोनों स्थितियों में उनका मानसिक संतुलन एक जैसा बना रहता है।

कर्म और कर्मफल में अपना अधिकार न मानना ही अनासक्ति कही गई है। कर्म में कर्तापन का भाव रखना और उसके फल में अपना अधिकार मानना ही आसक्ति। आसक्तिवान व्यक्ति जल्दी ही परिस्थितियों तथा परिणामों से प्रभावित हो उठता है। किंतु कर्म और

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उसके अच्छे-बुरे, अनुकूल-प्रतिकूल परिणामों का बोझ अपने ऊपर न लेने वाला किन्हीं विषमताओं से प्रभावित नहीं होता। फलतः उसका सुख, चैन, शांति और संतोष अक्षुण्ण बना रहता है। न तो वह कभी निराश होता है और न हतोत्साह। वह जीवन-पथ पर निर्द्वंद्व भाव और अप्रतिहत गति से बढ़ता चला जाता है। इसके विपरीत जो कर्म और कर्मफल को आत्माधारित करता है, वह अच्छे-बुरे परिणामों एवं परिस्थितियों से क्षण-क्षण प्रभावित होता हुआ लहराधीन व्यक्ति की तरह इतस्ततः आंदोलित होता रहता है। इससे उसकी शक्तियाँ जल्दी ही शिथिल हो जाती हैं और वह एक निष्क्रिय निराशा से घिरकर हतोत्साह हो जाता है।

शास्त्रों तथा मनीषी चिंतकों ने गहरे अनुसंधान के बाद घोषित किया है कि कर्मों एवं कर्मफल में आसक्ति ही भव-बंधन का कारण है और बंधनों के कारण ही मनुष्य को अशांति, असंतोष, शोक, संताप और आवागमन की यातना भोगनी पड़ती है। जिस दिन मनुष्य कर्म-बंधन से छूट जाता है, उसी दिन भवसागर से भी मुक्त हो जाता है। सूक्ष्म अथवा तात्त्विक विचार से अलग रहकर भी यदि साधारण तौर पर भी विचार किया जाए, तब भी पता चल जाएगा कि कर्मासक्ति निश्चय ही बंधनों का हेतु होती है। जिन कर्मों को हम अपना मानकर करेंगे और उनमें कर्तापन का अभिमान रखेंगे, तो उनका सारा दायित्व अपने ऊपर ही तो आ जाएगा और तब हमें उनके फलों से बँधना होगा, उनका भोग करना होगा। जिन कर्मों को हम करने जा रहे हैं, उनके विषय में अधिकारपूर्वक यह नहीं जान सकते कि आदि से लेकर अंत तक हमारी कर्मगति निष्कलंक एवं निष्पाप है अथवा रहेगी। उनके आदि, मध्य अथवा अवसान तक कहाँ पर कौन-सा सूक्ष्म पाप उसकी लपेट में आ सकता है—इस बात को स्पष्ट अथवा प्रामाणिक रूप से नहीं जाना जा सकता। कर्मगति को, इसीलिए बड़ा सूक्ष्म कहा गया है। कार्य के कारण उसकी प्रेरणा अथवा प्रवाह में कहाँ पर कौन-सा स्खलन

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

विनिहित हो सकता है। इसका आधिकारिक ज्ञान कार्य-व्यस्त व्यक्ति के लिए संभव नहीं। तथापि यह अज्ञान क्षमा नहीं किया जा सकता। कर्मों में कर्तापन का भाव अथवा आसक्ति रखने पर उसका दायित्व अपने पर आएगा ही। फलतः उसके बंधन में बँधना ही होगा।

यदि एक बार यह भी मान लिया जाए कि हमारी कर्म शृंखला आदि से अंत तक निष्कलंक एवं निष्पाप रहती है, तब भी उसमें आसक्ति रखने पर बंधनों का अधिकारी बनना होगा। पाप कर्म अथवा पुण्य कर्म दोनों ही यदि आसक्ति से प्रेरित हैं, निश्चय ही बंधनों के कारण बतलाए गए हैं। बंधनों से रक्षा का केवल एक ही उपाय है कि कर्मों अथवा उनके फलों में कर्तापन का भाव अथवा आसक्ति न रखी जाए।

जब हम कर्म कर रहे हैं और स्पष्ट देख और समझ रहे हैं कि हम स्वयं ही इनको कर रहे हैं, तब भी उनमें कर्तापन का भाव न आए, यह बात भी कुछ कम कठिन नहीं है। तथापि तत्त्ववेत्ताओं ने इसका भी बड़ा सरल उपाय बताया है और वह इस एक उपनिषद् वाक्य में निहित है—

यत् यत् कर्म प्रकुर्वीत तद् ब्रह्मणं समर्पयेत्।

'जो-जो कर्म करें, वह सब ब्रह्म को समर्पित कर दें।'

अपने समस्त कर्म तदनुसार कर्मफल यदि परमात्मा को समर्पित कर दिए जाएँ, तो उनका कोई दायित्व अपने पर न रहे। ऐसी निरपेक्ष स्थिति द्वारा ही बंधनों से बचे रहा जा सकता है अन्यथा नहीं। समर्पण की इस भावना से सारे कर्मों का भार परमात्मा अपने ऊपर उसी प्रकार ले लेता है, जिस प्रकार तत्कृते कार्य करने वाले कर्मचारी के काम का दायित्व बड़ा अधिकारी अपने ऊपर ले लेता है।

कर्म और कर्मफल में आसक्ति रखने पर मनुष्य को जिन अनुकूल-प्रतिकूल परिणामों के बीच से गुजरना पड़ता है और

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जिसके फलस्वरूप आशा-निराशा के झटके खाने पड़ते हैं, समर्पण की दशा में उसकी संभावना शेष नहीं रह जाती। मनुष्य सफलता-असफलता से प्रभावित हुए बिना निर्द्वंद्व भाव से कर्तव्य-पथ पर अग्रसर होता रह सकता है और अपने कर्म और कर्मफल परमात्मा को समर्पित कर देने पर मनुष्य सफलता में हर्षातिरेक के कारण स्थगन और असफलता में निराशा के कारण प्रत्यावर्तन, इन दोनों अयोग्यताओं से बच जाता है।

किसी के काम में सफलता-असफलता दोनों ही संभाव्य हैं। दोनों का प्रभाव निष्क्रियता का कारण बन सकता है। तथापि सफलता की अपेक्षा असफलता का आघात अधिक गहरा होता है। इसको न सहन करने वाले बहुधा निराश ही हो जाते हैं। इस घातक स्थिति से बचे रहने के लिए कर्म और कर्मफलों को ब्रह्मार्पण कर देना एक पवित्र तथा अप्रहत उपाय है। ऐसा समर्पणशील व्यक्ति न कभी चिंतित होता है और न निराश। अपने लक्ष्य के प्रति उसका आशावाद अजर-अमर बना रहता है, जिसके आधार पर वह निरंतर बाधा-व्यवधानों की उपेक्षा करता हुआ आगे बढ़ता चला जाता है, उसे पीछे लौटने की प्रवृत्ति नहीं होती। आशावाद ही जीवन और उसकी सफलता का सबसे बड़ा रहस्य है इसका महत्त्व बतलाते हुए तत्त्ववेत्ता अरस्तू ने कहा है—"अपने कर्मों और उसके फल को ईश्वर पर छोड़ देने से आशावाद अजर-अमर बनता है। ईश्वर सभी तरह आशावाद का केंद्र है। आशावाद और ईश्वरवाद एक ही रहस्य के दो नाम हैं।"

अपने कर्म और उनका परिणाम ईश्वर पर छोड़ देने से कर्तव्यों का अपार भार सिर पर होने और लाख सफलता, असफलता आने पर भी मनुष्य तटस्थ बना रहता है। उसे आशा-निराशा, चिंता-दुश्चिंता कुछ भी नहीं होती। वह सदैव एक-सा प्रसन्न तथा स्वस्थ बना रहता है। संसार के महान उद्योग संचालक हेनरी फोर्ड ने एक प्रश्न के उत्तर में अपने व्यस्त तथापि स्वस्थ जीवन

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

का रहस्य बतलाते हुए एक स्थान पर कहा है—'ईश्वर को अपने कार्यों का प्रबंधक और स्वामी मानने से फिर मुझे कोई चिंता नहीं रहती और इसी निश्चिंतता के कारण में अधिक स्वस्थ और संतुष्ट रहता हूँ।'

इस प्रकार, कहना न होगा कि अनासक्ति कर्मयोग जीवन का एक बहुत बड़ा समाधान है। यदि आप चाहते हैं कि जीवन के उन्नत लक्ष्य तक पहुँच सकें, हारकर बीच रास्ते से न लौटना पड़े, तो अपने सारे कर्म और कर्मफल ब्रह्मार्पण करके अनासक्त कर्मयोग का आश्रय लीजिए और जीवन में लक्ष्य की सफलता के साथ कर्म-बंधन से मुक्त रहकर संसार-सागर से पार हो जाइए।

कर्म कुशल होना ही योग है

कर्म में कुशलता प्राप्त करने का नाम योग है। अच्छी भावपूर्ण कविता लिख लेने वाले को कहते हैं कि वह एक कुशल कवि है। अच्छा मकान बना लेने वाला कुशल कारीगर, नाटक में सुडौल भाव-भंगिमाएँ प्रदर्शित कर सके उसे कुशल कलाकार मानते हैं। किसी काम की दक्षता प्राप्त कर लेना ही उस कर्म की कुशलता हुई। आध्यात्मिक भाषा में इसे ही योग कहते हैं।

नट तरह-तरह की कलाबाजी दिखाता है, बाँस पर चढ़ने, तार पर नाचने, उछलने-कूदने की क्रियाओं का सफल प्रदर्शन करता है। इन कार्यों में उससे राई-रत्ती भर चूक नहीं होती है। जिस कार्य में कर्ता को पूर्ण दक्ष कहे जाने का यश मिले—यह उसकी कुशलता हुई। काम न बिगड़े और सामान्य व्यक्तियों से उसमें कुछ अधिक सफलता दिखाई दे, तो कहेंगे इस कार्य में कुशलता प्राप्त है। इसे यों भी कह सकते हैं कि वह अमुक कार्य का योगी है।

काम करते समय हमारी कर्मेंद्रियाँ, मन या चित्त ये सब एक ही दिशा में क्रियाशील रहते हैं। किसी दीवार की चूने से पुताई

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

करनी हो तो एक हाथ से बाल्टी पकड़ते हैं, पैरों से सीढ़ी पर खड़े होकर दूसरे हाथ से पुताई करते हैं। भिन्न-भिन्न कार्य होते हुए भी हाथ, पाँव, उँगलियाँ आदि अवयवों का लक्ष्य एक ही था—पुताई करना। आँखें यह बताती जाती थीं कि अभी यह जगह छूट गई है, इतनी जगह बाकी है, यहाँ बाल्टी है, यहाँ चूना है। चित्त की दिशा भी उसी में थी कि चूना गाढ़ा है, ठीक है, पानी कम तो नहीं, पुताई कितनी सुंदर है, इस तरह से चित्त वृत्तियाँ सजग थीं। क्रियात्मक, निरीक्षणात्मक और विश्लेषणात्मक तीनों प्रक्रियाओं के एक साथ चलते रहने के कारण दीवार की सुंदर पुताई संभव हो सकी। इनमें से एक विभाग भी काम करने से इनकार कर देता तो काम में गड़बड़ फैलती और उसका पूरा किया जाना संभव न होता।

इंद्रियाँ कार्य को पूर्ण करने में स्वतः समर्थ नहीं होतीं। मन उनका संचालन और नियंत्रण करता है इसलिए सफलता या असफलता का कारण उसे ही मानते हैं। सवार बैलगाड़ी को ले जाकर किसी खड्डे में डाल दे, तो दोष गाड़ी का नहीं क्योंकि उसे ज्ञान नहीं होता, वह स्वतः चालित नहीं होती। बैलों को भी दोष नहीं दे सकते, उनका बेचारों का कसूर भी क्या था, जिधर नकेल घुमा दी उधर चल पड़े। 'नाथ' पड़ी थी उनके नथुनों में, जिधर का इशारा मिलता था उधर ही चलते थे। दोष यदि हो सकता है तो वह सवार का है। क्योंकि गाड़ी चलाने की संपूर्ण जिम्मेदारी उसी की थी। शरीर द्वारा किसी काम को सफल बनाने में मन का ही उत्तरदायित्व अधिक माना जाता है क्योंकि वह संचालक है। उसी से आज्ञा पाकर दूसरे अवयव काम पर जुटते हैं।

दोषयुक्त कर्म या असफलता का कारण होता है—मन की विशृंखलित दशा। अस्त-व्यस्त, अनेकाग्र होकर काम करने से ही प्रायः गलत परिणाम निकलते हैं। जब भी काम अपूर्ण रहेगा तो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मन ही दोषी ठहराया जाएगा। ज्ञान और अनुभव की कमी के कारण या दत्त-चित्त न होकर यों ही बिखरे-

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बिखरे रहकर काम करेंगे तो कार्य की यथोचित पूर्णता संदिग्ध ही रहेगी। कार्य का न होना, पूर्णतः चित्त की अस्थिरता और असावधानी के कारण ही होता है।

जिस काम को जानते ही न हों उसमें भूल संभव है, उसे सीखना पड़ता है किंतु सीखने के बाद भी काम की सारी जटिलताएँ दूर हो जाएँगी—ऐसा नहीं कहा जा सकता। इन कठिनाइयों का हल भी स्थिर चित्त और मन को पूर्ण एकाग्र करने से हो जाता है। भिन्न हल करने का नियम एक ही है। विद्यार्थी जानते हैं कि पहले, 'मोटी लकीर', फिर 'कोष्ट', फिर 'का', 'भाग', 'गुणा' और तब 'धन' तथा 'ऋण' को हल करते हैं। 'भिन्न' हल करने का यह सामान्य नियम प्रत्येक विद्यार्थी सीख लेता है, किंतु नियमों की तोड़-फोड़ करते समय एक विद्यार्थी गलती कर जाता है। दूसरा उसे नियमानुसार हल करता जाता है। एक का उत्तर सही होता है और दूसरे का गलत। नियमों का ठीक-ठीक जिसने पालन किया सवाल उसी का सही था। अस्थिरता के कारण दूसरे ने सही ढंग से काम नहीं किया, बीच की क्रियाएँ गलत कर दीं, फलस्वरूप सवाल गलत हो गया। यह सिद्धांत जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में लागू होता है। जिस उद्देश्य को पूर्ण तन्मयता के साथ हल करते हैं, वह जरूर सिद्ध होता है। बिना लगन, बिना तत्परता काम करने की सही दिशा का निर्माण नहीं होता। एकाग्रता कार्य की सफलता के लिए सदैव अपेक्षित है, इसके बिना परिणाम प्रायः सही नहीं निकलते।

किसी वस्तु के स्वरूप के विषय में मनुष्य अनजान हो सकता है किंतु कर्म में असफलता का कारण मनुष्य की अनस्थिरता को ही कहा जाएगा। चित्त का निरोध न करके पागलपन से जो काम किए जाते हैं, उनमें असफलता मिले तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है?

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पतंजलि योग में आया है—"**योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः**" अर्थात चित्त की वृत्तियों को वश में रखना ही योग है। दूसरे शब्दों में इसे पूर्ण तन्मयता भी कह सकते हैं। हल ढूँढ़ने में पूर्ण रूप से तन्मय हो जाना ही योग है। गीता में इसी भाव को इस तरह प्रस्तुत किया गया है, "**योगः कर्मसु कौशलम्**" अर्थात कर्म में कुशलता प्राप्त करना ही योग है। दोनों बातें एक-सी हैं। चाहें कर्म की कुशलता को योग कहें या चित्तवृत्तियों के निरोध को। चित्तवृत्तियों के निरोध से, एकाग्रता से ही कर्म की पूर्ण सफलता प्राप्त होती है, इसलिए दोनों बातें एक जैसी ही हैं। भाव प्रत्येक अवस्था में यही है कि किसी भी विषय की सफलता के लिए चित्त की स्थिरता या पूर्ण तन्मयता होनी चाहिए।

भूल प्रायः अशांत चित्त होने से ही होती है। एकाग्र चित्त होकर काम करने से वह अच्छे-से-अच्छे ढंग से होता है। भूल का पता भी तभी चलता है जब चित्त शांत होता है, अशांत मन से काम करने में संचालन की स्थिति ही कहीं अन्यत्र होती है, इसीलिए फल के विषय में जागरूक नहीं रहते। ऐसी दशा में बनते भी उलटे-सीधे परिणाम ही हैं। अन्यमनस्कता के कारण कोई काम ढंग से, शऊर से नहीं होते। सही स्थिति में किए कार्यों के ही सही परिणाम निकलते हैं।

सीखने और जानने के लिए भी सही तरीका यही है कि बताने या सिखाने वाले की बातों को ध्यानपूर्वक सुनते हैं या नहीं। स्वाध्याय में जो केवल पढ़ जाने की क्रिया पूरी करता है, उससे किसी तरह का मानसिक या चारित्रिक विकास नहीं होता। कोई विद्यार्थी यह कहे कि उसने दो-दो बार सारी पुस्तकें पढ़ी हैं फिर किस तरह उसे फेल कर दिया गया, तो यही समझना चाहिए कि उसने पढ़ा है, मनन नहीं किया। शब्द दुहराते चले जाएँ और आशय कुछ न निकालें, तो उस अध्ययन का लाभ ही क्या होगा? जो कुछ पढ़े, उसे भली प्रकार मनन करे तो वह बात परिपक्व होकर ज्ञान का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रूप धारण करती है। विचारों को तदनुरूप कर्मों में प्रसारित करें, 'स्वाध्याय' शब्द तब कहीं सार्थक होता है। अक्षरों को शब्द रूप दे देना ही काफी नहीं है। उनका अर्थ भी समझें तो आपका सीखना सही माना जाएगा।

बिना विश्राम से किया हुआ कर्म, अनिच्छापूर्वक तथा पाप की भावना से किए गए कृत्य कभी मनुष्य को सुखी नहीं रख सकते। व्यग्रता बढ़ाने वाले कर्म भला किसी को संतोष दे पाए हैं? शांति प्राप्त करने के लिए सत्कर्मों में कुशल होना अनिवार्य है।

भोगवाद मनुष्य के दुष्कर्मों को बढ़ावा देता है। ऐसी अभिनव-शीलता आज लोगों में प्रचुर मात्रा में आ गई है, इसलिए इस समाज को योगभ्रष्ट समाज कहना ही उपयुक्त होगा। शरीर और मन की शक्तियाँ विश्रृंखलित होकर समाज में बुराइयाँ पैदा कर रही हैं, मनुष्य के दुःखों का शतशः कारण वही है।

शांति पाने के लिए हमें अतीत को जाग्रत करना पड़ेगा। अतीत का अर्थ उन विचारणाओं से है जिनमें राष्ट्र की सद्वृत्तियाँ हों। लोगों का विवेक ज्ञान और वैभव समृद्ध बने तो सच्चे योग के दर्शन दिखाई देने लगेंगे। चिर-शांति का आधार मनुष्यों में सत्कर्मों के प्रति गहन आस्था है। इस विश्वास को जगाएँ तो हमारी वह कमियाँ दूर हो सकती हैं जिनसे आधुनिक जीवन में उदासीनता और निष्प्राणता छाई हुई है।

अनासक्ति कर्मयोग का तत्त्वज्ञान

अनासक्ति का अर्थ यह नहीं कि जो कुछ आप करें उसमें आपको रुचि न हो। उसकी अच्छाई-बुराई, सफलता-असफलता की चिंता न करें। ऐसा करने से तो कोई भी कार्य करने में लापरवाही ही रहेगी। यदि अनासक्ति का अर्थ असंबंध, अरुचि अथवा निरपेक्षिता लिया जाएगा तो कोई भी कार्य कुशलतापूर्वक नहीं किया जा सकता। बिना कोई आशा रखे कोई भी काम करने में मनुष्य का मन न लगेगा। किसी कर्म में लाभालाभ का विचार ही उस कर्म में

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रुचि उत्पन्न करता है। जब मनुष्य असफलता का भय और सफलता की आशा लेकर कार्य करेगा तभी उसकी संलग्नता और उत्तरदायित्व पूर्ण ढंग से कर सकेगा अन्यथा नहीं।

यदि ऐसा है तो अनासक्त कर्मयोग का मतलब क्या? अनासक्ति भावना का संबंध काम करते समय नहीं उसके पूर्ण हो जाने पर संयोगवश उसकी असफलता मात्र से है, सफलता से भी नहीं। सफलता की स्थिति में उसका प्रसन्न होना स्वाभाविक है। यदि सफलता का हर्षातिरेक किसी को अभिमान अथवा अहंकार की उत्पत्ति करता है, तब ही उसे अनासक्ति का सहारा लेना आवश्यक है। क्योंकि ऐसी स्थिति में कर्ता को अपना किया हुआ एक छोटा-सा कार्य भी बड़ी भारी कृति मालूम होगी जिससे संतुष्ट होकर वह और अधिक कार्य करने से विरत होने लगेगा। वैसे सामान्यतः किसी कार्य की सफलता से मनुष्य का उत्साहवर्द्धक प्रसन्नता से विरक्त होने की कोई विशेष आशंका नहीं है।

हाँ, असफलता की स्थिति में मनुष्य को अवश्य अनासक्ति योग का अवलंबन लेना चाहिए, जिससे उसे असफलता के खेद अथवा असंतोष, हतोत्साह अथवा निराशा का अनुभव न हो। असफलता से प्रभावित होकर सामान्य मनुष्य प्रायः पुनः प्रयत्न में विश्वास नहीं करने लगता है। दोनों दशाओं में कर्मफल से विरत अर्थात अप्रभावित रहने का निर्देश इसलिए किया गया है कि जो मनुष्य सफलता में प्रसन्न होने का अभ्यासी है, उसका असफलता की स्थिति में खिन्न और निराश होना स्वाभाविक है। अनासक्ति का पूर्ण अभ्यास करने के लिए ही कर्मफल अर्थात सफलता-असफलता के प्रति उदासीन रहने का निर्देश किया गया है। यद्यपि तटस्थता एक महान स्थिति है तथापि यदि हमको गलत प्रेरणा न दे, तो असफलता में प्रसन्नता होना कोई हानिकर अस्वाभाविकता नहीं है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

एक ओर कहा गया है कि मनुष्य का कर्म में अधिकार है, उसे हर अच्छा-बुरा काम करने की स्वतंत्रता है, पर दूसरी ओर निर्देश है कि मनुष्य सब कुछ करता हुआ भी कुछ नहीं करता। वह एक माध्यम मात्र है, उसकी समस्त क्रियाएँ परमात्मा द्वारा प्रेरित होती हैं। विराट् पुरुष परमात्मा ही सारे कर्मों का कारण है।

यह दोनों कथन देखने में एक-दूसरे के विरोधी प्रतीत होते हैं। जब मनुष्य किसी शक्ति की प्रेरणा से यंत्रवत कार्य करता है, तब वह कर्मों में स्वतंत्र, उसका उत्तरदायी किस प्रकार ठहराया जा सकता है? और यदि वह कर्मों में स्वतंत्र है, अच्छा-बुरा जो चाहे कर सकता है, तब किसी शक्ति की प्रेरणा की बात कैसे टिक सकती है?

इन कथनों के विरोधाभास को समझने के लिए गहराई से विचार करने की आवश्यकता है। मनुष्य में जो चेतनापूर्ण गतिवत्ता है उसका कारण तो वह विराट् शक्ति है किंतु कर्मगति की दिशा मनुष्य की अपनी है। परमात्मा विद्युत की भाँति गतिशीलता की शक्ति तो देता है किंतु उस शक्ति से संचालित मनुष्य-यंत्र किस ओर जाता है, इसका उत्तरदायी वह नहीं है। विद्युत धाराएँ केवल प्रेरणा देती हैं, अब आगे उपभोक्ता का कर्तव्य है कि वह उसका उपयोग रोशनी करने में करता है या किसी के प्राण लेने में। गैस मोटर को ढकेलती भर है, उसके चलाने के ढंग का उत्तरदायित्व संचालक पर है।

संसार में जो कुछ अच्छा-बुरा हितकर अथवा अहितकर होता है वह सब परमात्मा की प्रेरणा तथा इच्छा से होता है, मनुष्य का उसमें कोई हाथ नहीं है। वह स्वयं कुछ नहीं करता। किसी विराट् शक्ति द्वारा उससे बलात् कराया जाता है, ऐसा विश्वास धारण करने से मनुष्य भले ही अपने कर्मफल का भागी न बने, पर यह विश्वास व्यवहार जगत में हितकर नहीं है। स्वभावतः बुराई की ओर दौड़ने वाला मनुष्य इस विश्वास के बल पर और भी भयंकर हो जाएगा।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उसको किसी कर्म का फल भले ही भोगना न पड़े, किंतु उसके कुकर्म दूसरों के लिए तो कष्टप्रद एवं अनिष्टकर होंगे ही।

किसी को मारने वाला यह सोचकर अपने कृत्य की जिम्मेदारी से मुक्त हो जाए कि उसने वैसा स्वयं नहीं किया बल्कि सर्व-शक्तिमान परमात्मा की प्रेरणा से किया और मरने वाला अथवा उसके संबंधी यह सोचकर संतोष कर लें कि इसमें मारने वाले का कोई दोष नहीं, मरने वाला परमात्मा की इच्छा से मृत्यु को प्राप्त हुआ है, यह भला किस प्रकार संभव हो सकता है?

यदि इस नियम को सार्वभौम मानकर यह कल्पना भी कर ली जाए कि संसार का प्रत्येक मनुष्य यह विश्वास रखने लगा है कि कोई किसी काम का उत्तरदायी नहीं है और न कोई किसी को कष्ट अथवा हानि पहुँचाने का दोषी है, तब तो संसार में एक भयानक अव्यवस्था ही उत्पन्न हो जाए। न कोई किसी को मारने-लूटने में संकोच करे और न कोई उसका प्रतिकार। सबल व्यक्ति निर्बलों को एक मिनिट में मिटाकर रख दें। किसी कृत्य के परिणाम, उसके दंड तथा प्रतिकार के भय से ही मनुष्य एक साधारण अनुशासन में चलता है।

सब कुछ परमात्मा की इच्छा से होता है—ऐसा विश्वास बना लेने पर मनुष्य के ज्ञानी होने की कम किंतु निरंकुश होने की अधिक संभावना है। यदि मनुष्य के प्रत्येक कर्म में सर्वशक्तिमान की प्रेरणा रहती है तो फिर कर्म करने वाले को उसका परिणाम क्यों भुगतना पड़ता है। मनुष्य असंयम करता है किंतु ईश्वर की इच्छा से तो फिर उसे रोग के रूप में उसका दंड क्यों मिलता है? एक प्रकार से तो यह परमात्मा का अन्याय ही प्रतीत होता है। पहले तो वह किसी को कुछ बुरा करने को प्रेरित करता है और फिर उसे वैसा करने का दंड देता है, यह कहाँ का न्याय हुआ। और यदि यह मान लिया जाए कि सर्वशक्तिमान मनुष्य से शुभाशुभ कर्म कराकर फिर जो उसे उसका पुरस्कार अथवा दंड देता है, यह उसकी लीला

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है, खेल है—तब भी यह उस सर्व शक्तिमान विराट् पुरुष के अनुरूप नहीं है। यह बचकाना खेल न तो उसके गौरव के उपयुक्त है और न वह ऐसा खेल खेलेगा।

विराट् पुरुष द्वारा प्रेरित यह यांत्रिकता जड़ प्रकृति तथा विवेक रहित पशु-पक्षियों में तो किसी हद तक मानी जा सकती है किंतु सचेतन तथा विवेकशक्ति संपन्न मनुष्य के विषय में नहीं मानी जा सकती।

परमात्मा ने मनुष्य को अनेक आश्चर्यजनक शक्तियाँ देकर स्वतंत्र कर दिया है कि यदि वह चाहे तो शक्तियों का सदुपयोग करके परमपद प्राप्त कर ले अथवा उनके दुरुपयोग द्वारा अधोगति में जा पड़े। उसने मनुष्य को सारे उपादान देकर खिलाड़ी की तरह संसार के मैदान में छोड़ दिया है और स्वयं एक निष्पक्ष दर्शक की भाँति उसका खेल-खेलता है कि सुगति-दुर्गति के इस विशाल खेल में कौन खिलाड़ी जीतता है और कौन हारता है। जो अपने स्रोत अर्थात लक्ष्य को पाता जाता है, वह उस परमपद परमात्मा की गोद में पहुँचता जाता है और जो हारता है वह खेलने के लिए दोबारा संसार में भेज दिया जाता है। मनुष्य की आयु खेल के एक अवसर की अवधि है। समाप्त हो जाने के बाद यदि खिलाड़ी सफल नहीं हो पाता, तो उसे समयानुसार पुनः अवसर व समय दिया जाता है।

विवेकवान मनुष्य को इस भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए कि उसके शुभाशुभ कर्मों का प्रेरक तथा संचालक सर्वशक्तिमान परमात्मा है, उसका अपना कोई दायित्व नहीं है, न वह कुछ करने में स्वतंत्र है और न करता ही है।

अनासक्ति कर्मयोग का यह अर्थ कदापि नहीं है कि तटस्थ रहकर कुछ भी अच्छा-बुरा किए जाओ, कोई भी गुण-दोष हमारे लिए नहीं आएगा। अनासक्ति कर्मयोग का केवल यह अर्थ है कि अपने कर्मों में फलाफल से प्रभावित होकर कर्मगति में व्यवधान

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अथवा विराम न आने दें, जिससे दिन-प्रतिदिन अपने कर्मों में सुधार करते हुए परमपद की ओर बढ़ते जाएँ।

अनासक्त जीवन में सुख-शांति

मनुष्य का जीवन एक वाटिका है। वाटिका को अच्छी स्थिति में रखने के लिए उस पर चारों ओर की दृष्टि रखनी पड़ती है। किस पौधे को पानी देना है, कहाँ निकाई की जाए, कौन-सी मेंड़ टूट रही है, कौन-सा फूल फूलने लगा, किसे खाद दी जाए आदि-आदि इन सब बातों का ध्यान रखने वाला ही कुशल माली कहा जाता है। उसी का बाग भी सुंदर, सुरभित और हरा-भरा रहता है। पौधे खूब-खूब फूलते-फलते हैं, आस-पास का वातावरण भी सुवास से भरा रहता है। माली को भी प्रसन्नता होती है और मालिक को भी प्रसन्नता होती है। पास से आने-जाने वालों को भी उतनी ही प्रसन्नता होती है। पूर्ण विकसित, पुष्पित, पल्लवित और सुरक्षित वाटिका से सभी को प्रेरणा और प्रसन्नता मिलती है।

इतने प्रबंध न जुटाकर माली यदि किसी आकर्षक फूल की डाली के पास बैठा रहे या केवल फल ही ढूँढ़ता रहे तो सारी वाटिका अव्यवस्थित हो जाएगी। पौधे मुरझा जाएँगे। फूल सूख जाएँगे। न हरियाली रहेगी, न सुवास। पतझर की तरह सारा वातावरण शुष्क, निष्प्राण और नीरस लगेगा। वहाँ कुछ भी आनंद दिखाई नहीं देगा।

मनुष्य का जीवन भी ठीक इसी तरह का है। उसमें अनेक तरह की व्यवस्था, बच्चों की पढ़ाई, रोजी-रोजगार, बीमारियों के चक्कर, शादी-विवाह, मेल-मिलाप आदि के तरह-तरह के कर्म उसे करने होते हैं। जहाँ पर जीवन के संपूर्ण विधान में ऐसी व्यवस्था होगी, वहाँ जरूर सुख-शांति और संतोष की परिस्थितियाँ होंगी। प्रत्येक कार्य को चतुराई के साथ पूरा करने से ही यह व्यवस्था ठीक रह सकती है। इनमें से कोई कर्म ऐसा नहीं, जो छोड़ दिया जाए। समय और परिस्थिति के अनुसार सभी पूरे करने पड़ते

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

हैं। यदि किसी ओर ध्यान न दिया जाए तो उधर ही अव्यवस्था फैलेगी, गड़बड़ी उत्पन्न होगी। दिनभर काम तो खूब करें, पर आहार की व्यवस्था न रहे, तो काम न चलेगा। धन खूब कमाया जाए, पर बच्चे सुशिक्षित न हों तो पारिवारिक व्यवस्था ठीक न जमेगी। रोगी को दवा का प्रबंध, रहने को मकान, खेती के लिए हल-बैल आदि अनेकों उपकरण, पहनने के लिए कपड़े, यात्रा के लिए सवारी। प्रत्येक वस्तु का यथास्थान उपयोग है। कोई भी वस्तु उपेक्षणीय नहीं। समय के अनुसार आवश्यकताओं की माँग बदलती रहती है। उन्हें उसी क्रम से पूरा किया जाना चाहिए, तभी जीवन में ठीक व्यवस्था रह सकती है।

इस व्यवस्था को चौपट करने वाली स्थिति का नाम है— आसक्ति। किसी खास तरह के सुख या इच्छापूर्ति के लिए अपने आप को एक ही स्थान पर रोक देना ही आसक्ति कहलाती है। सुख की इच्छा से बँध जाना आसक्ति है। जो वस्तु प्रिय लगे, आकर्षक लगे उसके साथ गठबंधन बाँधकर लिप्त हो रहना ही उसका प्रधान लक्षण है। दुराव, अव्यवस्था और असंतोष का कारण यह आसक्ति ही है।

यदि शरीर का कोई भी अंग अपने नियत कार्य के करने में प्रमाद करे, तो उसका फल सारे शरीर को भुगतना पड़ता है और शारीरिक मशीन के चलने में बाधा आ जाती है। जैसे हाथ यदि भोजन को ग्रहण करके बैठा रहे, उसे मुँह तक न पहुँचाए तो शरीर की दुर्बलता के साथ ही हाथ भी दुर्बल पड़ जाएगा। मुँह भोजन का पूरा स्वाद तो ले, पर उसे पेट में न पहुँचाए तो भी यही दशा होगी। पेट उस खाए हुए अन्न को अपने में ही ठूँसे रहे, उसका रक्त बनाकर शरीर को न दे और मल-विसर्जन की क्रिया का परित्याग कर दे, तो सारा शरीर रोगग्रस्त हो जाएगा। प्रत्येक कार्य को नियत समय, क्रम और आवश्यकता के अनुसार उचित परिमाण में करते रहना ही कर्मयोग या अनासक्ति कहा जाता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है। मनुष्य जीवन की सारी सुंदरता इसी बात पर निर्भर है कि वाटिका की तरह उसके प्रत्येक अंग, प्रत्येक विभाग की समुचित देख-रेख होती रहे। चित्तवृत्तियाँ तथा इच्छाएँ एक ही स्थान पर केंद्रित न हों अन्यथा जीवन सौंदर्य नष्ट होने की आशंका बनी रहेगी।

अतः यह आवश्यक हो जाता है कि अपनी इच्छाओं को, रागों की कल्पना को कम करें, पर यह तभी हो सकता है, जब यज्ञीय जीवन की महत्ता का भान हो। संतोषी जीवन, स्वल्प निर्वाह और निर्लेप आचरण से ही ऐसी सुविधा उत्पन्न हो सकती है। मन शुभ कामनाओं में लगा रहे। बुद्धि के पीछे तर्क जुड़ा हुआ हो। प्रत्येक कर्म विवेक और हित-अहित के विचार पर आधारित हो। हाथ में जो काम लें, उसमें तन्मय हो जाएँ, पर जैसे ही वह काम पूरा हो जाए उसे इस तरह भूल जाएँ, जैसे उससे उस कर्म का कोई संबंध ही न रहा हो। मनुष्य के सामने जो भी कर्तव्य आएँ, उन्हें निष्काम भावना से पूरा करता रहे।

भारतीय परंपरा सदैव ऐसी ही रही है। यहाँ सदैव प्रवृत्ति में ही निवृत्ति के दर्शन हुए हैं। बलि, दधीचि, कर्ण, हरिश्चंद्र, रंतिदेव आदि महापुरुषों के उदाहरण मौजूद हैं, जिनसे जीवन को यज्ञमय बनाकर उदारतापूर्वक जीने, खिलाड़ियों की तरह खेलने की ही प्रेरणा मिलती है। शरीर-सुख और सांसारिक भोग सामयिक हैं। अतः उनमें आसक्त होकर अजर-अमर जीवन को कष्टमय बना लेना बुद्धिमानी नहीं कही जा सकती। यह बहुत बड़ा अनुसंधान है, दर्शन है, जिसे ऋषियों ने दीर्घकालीन तप के बाद निर्धारित किया है। वर्णाश्रम धर्म का मूल मंत्र भी अनासक्ति ही है। लोक-धर्म की मर्यादा के लिए संतान उत्पन्न की जाती थी। इससे कुल और संसार भी चलने की बात कही जा सकती है। आज की तरह पुत्र न होना कोई दुर्भाग्य नहीं समझा जाता था।

माताएँ अपने बच्चों को छोटी अवस्था में ही गुरुकुलों में भेज देती थीं और देवसेवा में, गृह-कार्यों में लग जाती थीं, प्राकृतिक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जीवन में रहकर वह बालक शरीर, मन और बुद्धि-विवेक से पूर्ण परिपक्व होकर निकलते थे, रूप, गुण, यौवन तथा बल संपन्न होकर गृहस्थ में प्रवेश करते थे, तो एक सुयोग्य नाविक की भाँति गृहस्थी की नाव को ठीक तरह संचालित रखते थे। जब उनके भी बालक इस योग्य हो जाते थे कि आश्रितों का पालन-पोषण भली-भाँति कर सकें, तो धीरे-धीरे उन्हें पारिवारिक उत्तरदायित्व सौंपकर वानप्रस्थ आश्रम के लिए उद्यत हो जाते थे। तीर्थाटन आदि करते हुए मुक्त प्रकृति का ज्ञान-लाभ प्राप्त करते थे और अंतिम अवस्था में घर-परिवार आदि का बिलकुल मोह त्यागकर केवल ब्रह्मानुभूति में तल्लीन होकर इस मनुष्य जीवन को सार्थक बना जाते थे। जब तक यह व्यवस्था हमारे राष्ट्र में रही, तब तक इस देश में किसी तरह के दुःख दारिद्र्य तथा अभाव भी नहीं रहे।

दुःख को दूर करने के लिए अनासक्ति ही सर्वोत्तम उपाय है। आसक्ति सभी प्रकार के दुःखों की जननी है। मोह के कारण ही संबंधियों के बिछुड़ने पर वियोगजनित दुःख का अनुभव होता है। अतः मोह को नष्ट कर दीजिए। देहाभिमान के कारण ही थोड़ा-सा सम्मान न मिलने या अपमान हो जाने से असह्य दुःख प्राप्त होता है। अतः देहाभिमान का नाश करना चाहिए। जो लोग संसार और उसके सुखोपभोग के साधनों की आशा लगाए बैठे हैं उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि ये तन्मात्राएँ केवल तब तक हैं, जब तक शरीर जीवित है। प्राण निकलते ही इनका कुछ भी मूल्य न रह जाएगा। केवल मन में बसा हुआ, मोह, ममत्व और राग ही शेष रह जाएगा, इसी के कारण लोग जन्म-मरण के भवबंधनों में बँधे हुए सांसारिक कष्ट भोगते रहते हैं।

मनुष्य आनंद की खोज में है। आनंद में ही उसे तृप्ति मिलती है, पर यह आनंद मिलता उन्हीं को है जिन्होंने सुख और दुःख की वास्तविकता को समझ लिया है अर्थात जिन्होंने संसार

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

और उसके प्रपंच, आत्मा और उसके स्वरूप को जान लिया है। यह स्थिति बन जाने पर वह मोहग्रसित नहीं होता, संसार की किसी वस्तु से उसे लगाव नहीं रहता। लोकोपकारी कर्मों का संपादन करना ही उसका ध्येय बन जाता है। इस तरह के कर्तव्यपालन में ही सर्वांगीण व्यवस्था रहती है और व्यवस्था रहते हुए दुःख का कोई नाम नहीं रहता। कर्मयोग का इतना ही रहस्य है कि मनुष्य कर्म करके कर्तापन का अभिमान न करे। इसमें सांसारिक सुख भी है और पारलौकिक हित भी। अनासक्त जीवन ही शुद्ध और सच्चा जीवन है।

कर्म का ब्रह्मार्पण

केनोपनिषद् में एक उपाख्यान है। उसमें बताया गया है, कि जल, वायु, अग्नि आदि देवता अपने-अपने बल का बड़ा अभिमान करते थे। एक दिन इंद्र सभा में सभी देवता अपनी शक्ति को बड़ा बताते हुए शेखी बघार रहे थे कि इतने में ही एक देवी प्रकट हुई और उसने एक तिनका रखकर प्रत्येक देवता से उसे नष्ट करने के लिए कहा। बड़े-बड़े पहाड़ों को उड़ा देने वाले, प्रलयंकारी तूफान पैदा करने वाले पवन ने बड़े दर्प और उपेक्षा के साथ उस तिनके को उड़ाना चाहा, जैसे वह उसके लिए सामान्य चीज हो। उसने धीरे-धीरे पूरी शक्ति लगा दी किंतु तिनका टस-से-मस नहीं हुआ। अग्नि जो समस्त ब्रह्मांड को भस्म करने का गर्व करती थी, वह उस छोटे-से तिनके को जला न सकी। वरुण उसे बहा नहीं सका। इस तरह उस तिनके को नष्ट करने में सभी देवता असफल रहे। इतने में वह देवी अंतर्धान हो गई। सभी देवता बड़े असमंजस में थे। इंद्र ने वस्तु-स्थिति के मर्म को समझते हुए कहा—"देवताओ! तुम अपने कार्यों और बल का व्यर्थ ही अभिमान करते हो। यह बल तुम्हारा नहीं, वरन उस देवी का ही है। ब्रह्म ही उस देवी के रूप में आपकी परीक्षा लेने आए थे। संसार में जो कुछ भी हो रहा है उस ब्रह्म की प्रेरणा से ही हो रहा है। हम सब तो केवल माध्यम मात्र

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

हैं।" इंद्र की बात सुनकर देवताओं को अपनी-अपनी असलियत का पता चला।

मनुष्य की शक्ति, सत्ता और सामर्थ्य सीमित है। वह विश्व-ब्रह्मांड की एक सामान्य इकाई है। मनुष्य जो सोचता है उसके विपरीत भी परिणाम मिल सकते हैं। जो कुछ मनुष्य करता है उसका अच्छा या बुरा परिणाम क्या होगा, इसका सही-सही निर्णय वह नहीं कर पाता? विश्व नियम के अंतर्गत ही मनुष्य के जीवन का संचालन और नियमन होता है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को निष्काम कर्मयोग, कर्मफल में अनासक्ति का उपदेश देते हुए विराट् स्वरूप का दर्शन कराते हुए बताया है—"समस्त संसार के कर्मों के कारण विराट् स्वरूप परमात्मा ही है, तू नहीं।" आगे अर्जुन को केवल एक माध्यम, यंत्र रूप में रहकर काम करने की शिक्षा दी है।

संसार के सभी धर्मो ने कर्मफल और कर्म के अभिमान के त्याग की शिक्षा दी है। अपने कर्म और कर्मफल ईश्वर को समर्पण करने, उस पर छोड़ने का आदेश दिया है।

कर्मफल को और अपने कर्म को ईश्वरीय सत्ता पर छोड़ देना जीवन का एक बहुत बड़ा समाधान है। अपने कर्म और उसके अच्छे-बुरे, अनुकूल-प्रतिकूल परिणामों का बोझा उठाए रखने वाला आदमी चैन, सुख, शांति, संतोष अनुभव नहीं कर सकता। उसकी स्थिति समुद्री लहर में पड़े उस दुर्बल मनुष्य जैसी हो जाती है जो कभी इधर, कभी उधर थपेड़े खाता रहता है और हाँफता रहता है। कर्म और कर्मफल का ईश्वर को समर्पण कर देने पर मनुष्य एक बहुत बड़े बोझ से मुक्त हो जाता है।

डेल कार्नेगी ने अपना एक संस्मरण लिखा है, 'हेनरी फोर्ड के पास मैंने जाकर पूछा कि इतना कार्य-भार होते हुए भी आप स्वस्थ कैसे रहते हैं?' इस पर उन्होंने कहा—"मैं ईश्वर को अपने कार्यो का प्रबंधक, स्वामी मानता हूँ और अपने आप को काम करने वाला

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

श्रमिक। ईश्वर को अपने कार्यों का प्रबंधक और स्वामी मानने से फिर मुझे कोई चिंता नहीं रहती और इसी निश्चिंतता से मैं अधिक स्वस्थ और संतुष्ट रहता हूँ।"

कर्म और कर्मफल में आसक्ति रहने से मनुष्य को अनुकूल-प्रतिकूल स्थितियों से गुजरना पड़ता है और इसी के अनुसार आशा-निराशा का भी सामना करना पड़ता है और इससे मनुष्य की शक्तियों का काफी क्षय होता है। अपने कर्म और कर्मफल को ईश्वर पर छोड़ देने से निराशा, चिंता, असंतोष का कोई स्थान नहीं रह जाता, मनुष्य का आशावाद ही एकमेव अजर-अमर रहता है। तत्त्ववेत्ता अरस्तू ने लिखा है—"अपने कर्मों और उसके फल को ईश्वर पर छोड़ देने से आशावाद अजर-अमर बनता है। ईश्वर सभी तरह आशावाद का केंद्र है। आशावाद और ईश्वरवाद एक ही है।" ईश्वर का अवलंबन लेने पर, अपने कर्म और कर्मफल का समर्पण ईश्वर को कर देने से सफलता-असफलता मनुष्य को प्रभावित नहीं करती। अजर-अमर आशावाद के सहारे वह दोनों में संतुलित रहकर कर्मपथ पर अग्रसर होता रहता है।

स्वार्थ में ही नहीं, वरन परोपकार, रचनात्मक भले कामों में लगने पर भी यदि मनुष्य इनमें कर्तापन का अभिमान और फलासक्ति से ग्रस्त रहता है तो वे भी मनुष्य के बंधन का कारण बन जाएँगे और बंधन ही अशांति, क्लेश, असंतोष का कारण बनता है। अच्छे काम करते हुए प्रतिकूल परिणाम, असफलता आदि मिलने पर ऐसा व्यक्ति पतित हो सकता है। अपने नैतिक बल को खोकर पुनः अनैतिक हो सकता है। फलासक्ति के कारण मनुष्य सुधार-पथ पर बहुत दूर आगे बढ़कर भी फिर से लौट सकता है। ऐसी स्थिति में कोई विशेष सफलता, महानता, विकास की आशा नहीं की जा सकती। जिनकी बड़ी-बड़ी आशाएँ-आकांक्षाएँ थीं, कुछ अच्छे कार्य कर गुजरने की अभिलाषाएँ थीं, उन्होंने कार्य की प्रारंभिक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कठोरता या असफलताओं से निराश होकर सब कुछ छोड़ दिया। अतः फलासक्ति, कर्तापन का अभिमान एक बहुत बड़ी फिसलन है, जिससे गिरने के बाद अधिकांश लोग उठ नहीं पाते और निम्न स्तर पर गिरते चले जाते हैं।

प्रत्येक मनुष्य का आत्मतत्त्व अनंत विश्व-चेतना से जुड़ा हुआ है। प्रत्येक व्यक्ति का जीवन सार्वभौमिक विश्व नियम की प्रेरणा से चलता है। आत्मचेतना और विश्व-चेतना की एकता, आत्मा और परमात्मा की एकात्मकता होने पर सामान्य व्यक्ति भी असाधारण, अनंत शक्तियों का केंद्र बन जाता है। पानी की बूँद अपने आप में कुछ नहीं, यदि वह अपने रूप का, अपनी संकीर्ण दुनिया का अस्तित्व ध्यान में रखकर विच्युत रहेगी तो उसकी कोई शक्ति सामर्थ्य नहीं रहेगी। किसी भी क्षण उसके अस्तित्व का ही लोप हो जाएगा। किंतु यही बूँद विशाल महासागर के साथ एक रूप होकर उतनी ही शक्ति, सामर्थ्य संपन्न बन जाएगी। मनुष्य की भी विश्व-विराट् में यही स्थिति है। जब वह अपने अभिमान और कर्तापन, कर्मफल के अस्तित्व को लेकर चलेगा तो उसकी शक्ति सीमित, क्षुद्र, संकीर्ण, नाशवान होगी। उसकी शक्ति सामर्थ्य बाह्य सफलता-असफलताओं से टकराकर ही नष्ट हो जाएगी। किंतु यही मानवीय शक्ति सामर्थ्य का संबंध विश्व-विराट् के साथ हो जाए तो वह असीम और महान बन जाएगी। इसका मार्ग है—अपने समस्त जीवन, कर्म, कर्तापन, कर्मफलों का समर्पण उस विश्वात्मा को परब्रह्म परमात्मा को किया जाए। यही सच्ची पूजा, उपासना, अर्चना है। "**यत्यत् कर्म प्रकुर्वीत तद् ब्रह्मणं समर्पयेत्**" हम जो कुछ भी करें, हमारा जो कुछ है, सब कुछ परमात्मा को, परम प्रभु को समर्पण करें। विश्व-भुवन की समस्त चेष्टाओं के प्रेरक परम प्रभु को अपनी सकल चेष्टाओं का समर्पण करके स्वयं को मुक्त , बंधन रहित, आनंदमय बना सकेंगे तभी जीवन की चिरसाध पूरी होगी?

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कर्मों का फल ईश्वर को अर्पण कीजिए

कर्मों और कर्मफलों को ईश्वरार्पण कर देने के आदेश में बहुत बड़ा रहस्य एवं मंतव्य छिपा हुआ है। जिन-जिन धर्म-प्रवर्त्तकों ने इस रहस्य को समझ लिया है, उन्होंने अपने अनुग्रह-पात्रों को वैसा करने का आदेश दिया है।

कर्मों एवं कर्मफलों को ईश्वरार्पण कर देने में छिपे रहस्य का पता लगाने से अनेक मोटी बातें सामने आती हैं। संसार में जो कुछ क्रिया-कलाप दृष्टिगोचर होता है, उसका मूल प्रेरणा-स्रोत ईश्वर ही है। या यों कहना चाहिए कि यह सब कुछ ईश्वर ही करता है। प्रत्यक्ष में अधिकारियों द्वारा किए हुए सारे कार्य परोक्ष में प्रमुख राजसत्ता द्वारा ही किया हुआ माना जाएगा। मनुष्य ईश्वर का प्रतिनिधि कर्मचारी है। स्वतंत्र अथवा मूल कार्यकर्ता नहीं। वह जो कुछ करता है, ईश्वर की प्रेरणा से, उसी की शक्ति द्वारा, उसी के हेतु करता है। यही कारण है कि जब-जब वह उसके निर्देश के विरुद्ध स्वेच्छाचारिता करता है, तब-तब अपदस्थ होकर दंड का भागी बनता है। वह अपनी स्वेच्छाचारिता के उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं हो सकता।

जिस प्रकार मनुष्य स्वेच्छाचारिता के रूप में परम प्रभु से विद्रोह करता है, उसी प्रकार कर्मों के स्वामी, संचालक एवं स्रोत परमात्मा को न मानकर अपने को मानना भी उसके प्रति चोरी करना है। जो कर्मचारी अपने स्वामी के आदेशों का ठीक-ठीक पालन करता हुआ कर्म करता है, वह उसके फलाफल का उत्तरदायी नहीं होता। उसके कर्मों का सारा परिणाम स्वयं स्वामी सँभालता है और कर्मचारी निर्द्वंद्व तथा निर्भीक अवस्था में यथावत् स्थित रहता है। न उसे चिंता करने की आवश्यकता रहती है और न व्यग्र होने की।

समझने के लिए यदि यह भी मान लिया जाए कि मनुष्य स्वयं कर्म करता है और उसके फल का अधिकारी भी वह स्वयं ही है,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

तब भी अपनी यह पूँजी यदि वह सर्वसमर्थ परमात्मा को सौंप दे तो स्वर्ग-नरक, सुख-दुःख, शोक-संताप, अच्छाई-बुराई आदि द्वंद्वों से उसी प्रकार सुरक्षित हो जाए जैसे कोई धनाढ्य अपना धन रिजर्व बैंक में जमा करके चोर डाकुओं, ठगों, उचक्कों और चाटुकारों, शोषकों से छुट्टी पा लेता है। अस्तु, अपने प्रत्येक कर्म को, उसके फल को उसी की संपत्ति मानकर उसी प्रकार से उसे समर्पित कर देने में ईमानदारी और कल्याण है, जिस प्रकार कोई सेनापति किसी भूखंड को जीतकर सम्राट को समर्पित कर देता है।

जिन कर्मों और कर्मफलों को अपने ऊपर लादे रहने से कोई लाभ नहीं उलटी हानि ही है, उन्हें अपने पास रखे रहना बुद्धिमानी नहीं। फिर एक कर्म करके उसका फल सिर पर रख लेने से दूसरा कर्म करते समय वह क्षिप्रता न रह सकेगी जो निर्भार होकर काम करने में है। इस प्रकार यदि एक के बाद दूसरे कर्म का भार अपने सिर पर लादे चले जाएँगे तो शीघ्र ही बहुत बड़े बोझ से दबकर सारी स्फूर्ति तथा क्षमता का अंत कर लेंगे। प्रतिदिन के असंख्यों कर्मों का बोझ लेकर कोई कितनी दूर तक सुविधापूर्वक जीवनयात्रा कर सकता है? जीवन-रण में जो जितना अधिक स्फूर्तिवान और निर्द्वंद्व होगा, वह उतनी ही अधिक सफलता प्राप्त करेगा।

यह स्वतः सिद्ध है कि जो कर्म को अपना मानेगा वह उसके फल का भी अधिकारी बनेगा और तदनुसार ही फल की मिठास तथा कड़ुवाहट को भी चखना पड़ेगा। मनुष्य का स्वभाव है कि वह अपने प्रत्येक कर्म का फल मधुर-से-मधुर चाहता है। किंतु ऐसा होना संभव नहीं कि उसके सारे कर्मफल मीठे ही हों। ऐसी दशा में इच्छा के विरुद्ध तिक्तफल पाने पर वह दुखी होगा, निराश होगा, और रोएगा। तब क्यों न इस दुःख की कारणभूत भूमिका कर्मों की फलासक्ति से किनारा कर लिया जाए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इन मोटे कारणों के अतिरिक्त कर्मफलों की आसक्ति त्याग करने के आदेश के सूक्ष्म कारण और भी महत्त्वपूर्ण हैं। मनुष्य जीवन कोई साधारण उपलब्धि नहीं, इसके पाने का हेतु असंख्यों जन्मों का पुण्य ही है। यह न तो यों ही अकस्मात् मिल गया है और न यों ही साधारण रूप में आगे मिल सकेगा। मनुष्य जीवन एक अमूल्य अवसर है। यह बार-बार नहीं आता। मनुष्य जीवन एक ऐसा अवसर है, जिसका सदुपयोग करके कोई भी सच्चिदानंद परमात्मा को पा सकता है। तुच्छ शारीरिक भोगों की तुलना में जो सर्वसुख रूप परमात्मा के साक्षात्कार और परमपद मोक्ष की उपेक्षा करता है, वह उस मनुष्य की तरह ही गँवार और अभागा है, जो चिंतामणि को गुंजाफल के लोभ में त्याग देता है।

यह परमात्मा का कितना बड़ा अनुग्रह है कि उसने हमें घोड़ा, गधा, बैल, बकरी आदि न बनाकर मनुष्य बनाया है। अब यदि हम इस मनुष्य जीवन को घोड़ों और गधों जैसा बना लेते हैं, तो न केवल अपनी हानि ही करते हैं, बल्कि उस दाता को भी लज्जित करते हैं। मनुष्य जीवन देने से बड़ा कोई दूसरा अनुग्रह परमात्मा के पास नहीं है। मनुष्य जीवन देकर मानो उसने अपने सारे वरदान, सारी कृपा और सारी करुणा ही हम पर उड़ेल दी है।

कर्मफल की आसक्ति में एक बहुत बड़ा दोष यह है कि फलाकांक्षी का सारा ध्यान फल की ओर ही लगा रहता है, जिससे वह निपुणतापूर्वक कर्म नहीं कर पाता और ऐसी दशा में प्रतिकूल फल की तनिक भी संभावना होने पर काम करना छोड़ देता है। बहुत बार यह भी होता है कि प्रतिकूल फल की आशंका से कोई काम प्रारंभ ही नहीं करता। फललोभी इसी ऊहापोह में पड़ा रहता है कि न जाने ऐसा करने में सफलता मिलेगी अथवा असफलता, और यदि वह किसी प्रकार से कुछ करने की हिम्मत भी करता है तो हर समय सफलता के लोभ में असफलता की चिंता करता है, जिससे असफलतापूर्ण परिस्थितियों को ही अधिक बल मिलता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रहता है। सफलता की अत्यधिक कामना असफलता को ही निमंत्रित करती है।

कर्म को अपना किया हुआ मानने से उसकी असफलता में तो दुःख होता ही है, सफलता में भी मनुष्य अभिमान से अभिभूत होकर अपनी हानि कर लेता है। एक कर्म की सफलता का अभिमान दूसरे कर्म में अदक्षता उत्पन्न कर देता है। सफलताभिमानी की इच्छा रहा करती है कि लोग उसकी योग्यता तथा समर्थता की प्रशंसा करें, उसका आदर तथा सम्मान करें। किसी भी कारण से उत्पन्न हुआ अभिमान मनुष्य को पतन के गर्त में गिराए बिना नहीं रहता।

मनुष्य में एक सीमित शक्ति रहती है; किंतु जब वह अपनी शक्ति विश्व के निर्माता या नियामक में समाहित कर देता है, तो वह अनंत शक्तिवान हो जाता है। सिंधु में बिंदु की तरह मिलकर पूर्णता को प्राप्त कर लेता है। कर्तापन का अभिमान करने वाला, विराट् विश्व-चेतना से अलग होकर संकुचित सीमा में घिरकर बड़ा ही दीन-हीन बन जाता है। कर्माभिमानी जहाँ छोटे-छोटे काम करने में कठिनाई अनुभव करता है और पग-पग पर सफलता-असफलता से प्रभावित होता है, सुख-दुःख के वशीभूत होता रहता है, वहाँ स्वयं को संपूर्ण रूप से परमात्मा को अर्पण कर देने वाला बड़े-से-बड़े काम को साधारण रूप से कर लेता है।

कोई छोटा काम भी जब ईश्वरीय कार्य समझकर किया जाता है तो भी वह महान बन जाता है। किसी कार्य को ईश्वर का कार्य समझकर उसमें उपासना का भाव रहता है, जिससे मनुष्य अपने पूर्ण पवित्र तन-मन से उसे करता है और ऐसी दशा में कार्य में सफलता मिलना अनिवार्य है। परमात्मा के प्रति किया हुआ छोटा-सा नीराजन भी जिस प्रकार परम पवित्र तथा महान समझा जाता है, उसी प्रकार प्रभु को समर्पित किया हुआ मनुष्य का साधारण कार्य भी असाधारण माना जाता है। एक गरीब द्वारा की

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

हुई छोटी-सी आरती के प्रति क्या गरीब, क्या अमीर सभी नत-मस्तक होते हैं, पूर्ण पवित्र समझते हैं? उसी प्रकार ईश्वरीय कार्य समझकर किया हुआ लघु-से-लघु कार्य भी लोगों की श्रद्धा-भक्ति का कारण बनता है।

इस चिर-दुर्लभ मानव जीवन को पाकर जो छोटे-छोटे कर्मफलों के लिए लालायित रहता है, वह परमात्मा के साक्षात्कार जैसे परम लाभ से वंचित रह जाता है। प्रत्येक कर्म को परमात्मा का समझ लेने में मनुष्य का अपना कुछ बिगड़ता नहीं, तब न जाने वह क्यों कर्माभिमानी बनकर अनमोल मानव जीवन का दुरुपयोग किया करता है?

ममता हटाने पर ही चित्त शुद्ध होगा

'हमारा चित्त अशुद्ध है'—प्राय: लोगों की यह शिकायत रहा करती है। शिकायत ठीक है। यदि उनका चित्त अशुद्ध न हो, वह दोष रहित हो तो उनको दु:ख-द्वंद्वों का सामना न करना पड़े। चिंता, क्षोभ तथा असंतोष का ताप जब किसी को संतप्त करने लगता है और वह उसका कारण बाह्य परिस्थितियों में नहीं खोज पाता, क्योंकि वह वहाँ होता ही नहीं, तो उसे यही मानना पड़ता है कि उसकी इस यातना का कारण उसका चित्त-दोष ही है। निर्दोष चित्त व्यक्ति की प्रसन्नता कभी भंग नहीं होती। चित्त की निर्दोषिता ही वह प्रसन्नता है, जिसकी आकांक्षा मनुष्य किया करता है और जो कि जीवन की सबसे सच्ची एवं सार्थक उपलब्धि है।

मनुष्य की इच्छा रहती है कि उसका चित्त उसके वश में रहे। वह जिस प्रकार चाहे उसका संचालन करे। चित्त गति के अनुसार ही मनुष्य कर्मों में नियुक्त होता है। सत्कर्मों को करने की इच्छा हर मनुष्य में होती है। वह सत्कर्म करना भी चाहता है किंतु चित्त की उच्छृंखलता के कारण ऐसा नहीं कर पाता। चित्त-दोष के कारण न चाहता हुआ भी वह असत् कर्मों में प्रेरित हो जाता है और फलस्वरूप दु:ख, क्षोभ अथवा पश्चात्ताप का भागी बनता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जिस प्रकार चित्त की उच्छृंखलता दुःख का कारण है, उसी प्रकार उसकी स्ववशता सत्कर्मों अथवा शुभ-संकल्पों के माध्यम से सुख का हेतु होती है। इसी कारण हर मनुष्य अपने चित्त को स्वाधीन रखना चाहता है। चित्त स्ववश तभी हो सकता है, जब वह निर्दोष हो। सदोष अथवा अशुद्ध चित्त उपद्रवी होता है। विपरीत-गतिगामी होने से वह मनुष्य को भयावह अंधकार की ओर ही लिए भागता रहता है। अंधकार से मनुष्य को स्वाभाविक घृणा तथा भय से वितृष्णा ही होती है। क्योंकि यह दोनों आनंद के घोर शत्रु हैं।

स्वाधीन-चित्त केवल शांतिदाता ही नहीं, शक्तिदाता भी होता है। शक्ति, सुख की जननी है। उससे आत्मविश्वास और आत्मविश्वास से निर्भयता का आविर्भाव होता है। अनुशासित चित्त का शक्ति-भंडार मनुष्य को इतना कार्य सक्षम बना देता है कि वह बड़े-बड़े विस्मयकारक कार्य कर सकता है। जीवन की सार्थकता एवं सफलता इस एक बात पर ही निर्भर रहती है कि वह कुछ ऐसे सत्कर्म कर सके, जिससे उसका तथा संसार का उपकार हो और उसकी आत्मा को एक शाश्वत संतोष मिले। उसे जीवन अथवा मृत्यु दोनों स्थितियों में हर्ष की उपलब्धि हो। मनुष्य का चित्त सच्ची शक्तियों का आगार है। इस शक्ति-कोष का उद्घाटन तब ही होता है जब चित्त अनुशासित तथा स्ववश होता है। चित्त की स्वाधीनता उसकी निर्दोषिता पर ही निर्भर है।

मनुष्य के लिए अब यह बात अनजान नहीं रह गई है कि उसे क्या करना है और क्या नहीं करना चाहिए, क्या करने में उसका कल्याण है और क्या करने में अकल्याण है। अशुद्ध चित्त के कारण बहुधा यह होता रहता है कि मनुष्य कल्याणकारी कार्य करना चाहता है, किंतु नहीं कर पाता, प्रत्युत उससे परवश ही ऐसे कार्य हो जाते हैं जो अमांगलिक तथा अकल्याणकारी होते हैं। ऐसी दशा में पश्चात्ताप होना स्वाभाविक है। मनुष्य मन-ही-मन रोता-खीझता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

और अपने को कोसता है। वह जानता है कि इस प्रकार के अवांछनीय कार्य उसको प्रगति-पथ पर, सुख-शांति के महान मार्ग पर न बढ़ने देंगे, जिससे उसका बहुमूल्य मानव जीवन यों ही नष्ट होकर व्यर्थ चला जाएगा और तब उसे आत्मोन्नति, आत्मकल्याण करने का अवसर न जाने कभी मिलेगा भी या नहीं। मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा होती है कि वह अति दुर्लभ मानव जीवन का सदुपयोग करके आत्मकल्याण का अधिकारी बन जाए। किंतु खेद है कि चित्त की अशुद्धता के कारण वह अपने इस महत् उद्देश्य में सफल नहीं हो पाता।

बहुधा लोग चित्त की चंचलता को ही वह दोष मान लेते हैं जिसके कारण हम उसे स्ववश नहीं कर पाए। चित्त की चंचलता वस्तुतः उसका दोष नहीं है बल्कि यह उसकी विकलता है, छटपटाहट है, जो शुद्धि प्राप्त करने की लालसा एवं प्रयास से उत्पन्न होती है। नैसर्गिक नियम के अधीन चित्त स्वाभावतः शुद्धि की ओर स्वयं गतिशील रहा करता है और जब तक उसे अभीष्ट शुद्धता नहीं मिल जाती, वह एक ओर से दूसरी ओर को भागता रहता है। ज्यों ही उसे अभीष्ट शुद्धता जो कि प्रसन्नता के रूप में होती है, मिल जाती है, वह स्थिर, शांत एवं संतुष्ट हो जाता है। फिर न वह व्यग्र होता है और न चंचल। अभीष्ट केंद्रबिंदु पर पहुँचकर वह एकरस शुभ संकल्पों तथा सत्कर्मों में लगकर मानव जीवन को सफल एवं सार्थक बना देता है। चित्त की चंचलता इस बात का प्रमाण है कि वह अपने अभीष्ट लक्ष्य को नहीं पा रहा है, जिसके लिए वह लालायित होकर भागा-भागा फिर रहा है। मनुष्य को चाहिए कि वह उसकी सहायता करे। एक बार उसे अपने केंद्रबिंदु पर पहुँच जाने में मदद करे, जिससे कि वह शुद्ध एवं प्रबुद्ध होकर मनुष्य को उसी प्रकार सहायक तथा सुखदाता बना सके जिस प्रकार पिता द्वारा पाला-पोषा पुत्र उसका अवलंब बन जाता है। चित्त द्वारा शुद्धि का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रयत्न और कुछ नहीं, मनुष्य के कल्याण-पथ पर पहुँचने की सामर्थ्य प्राप्त करने का प्रयास ही है।

चित्त में अस्वाभाविकता आ जाना ही उसकी अशुद्धि है जिसके कारण हम उसे अपने वश में नहीं रख पाते। वासनाओं की उत्पत्ति और उनकी पूर्ति को ही जीवन मान लेना, वह अस्वाभाविकता है जो चित्त की अशुद्धि का कारण बनती है। जबकि स्वाभाविक जीवन वासनाओं से परे है। वासनाओं से परे जो एक सत्य, शिव और सुंदर जीवन है वही वास्तविक जीवन है। उस जीवन की अनुभूति कर लेने पर मनुष्य का चित्त शांत, संतुष्ट एवं स्थिर हो जाता है।

वासनाएँ जीवन की अविराम विकृतियाँ हैं। एक बार जब इनका क्रम प्रारंभ हो जाता है, तो फिर खतम होने का नाम नहीं लेता। एक वासना की पूर्ति से दूसरी वासना का जन्म होता है। वासनाओं का जाल इतना सघन तथा सुदृढ़ हो जाता है कि एक बार फँस जाने पर उसमें से निकल जाना कठिन हो जाता है। मनुष्य मछली की तरह छटपटाता हुआ तड़प-तड़पकर जीवन खो देता है।

वासनाओं की उत्पत्ति एवं पूर्ति स्वयं में कोई प्रक्रिया नहीं है। इनको जन्म और पूर्ति का सुख देने वाली एक चेतन सत्ता है, उसी चेतन सत्ता के प्राप्त करने का प्रयास ही वह स्वाभाविक जीवन है, जो चित्त की शुद्धि में सहायक होता है। आत्मप्रकाशक मूलसत्ता को जीवन न मानकर वासनाओं की उत्पत्ति एवं पूर्ति को जीवन मान लेना ही अस्वाभाविकता है, जिसको अपना लेने से चित्त अशुद्ध एवं विकृत हो जाता है।

वासना प्रधान चित्त सदैव ही किसी-न-किसी प्रकार का अभाव अनुभव करता रहता है। वासनाओं एवं तृप्ति में स्वाभाविक विरोध है। जिस समय तक वासनाओं की उपस्थिति रहेगी, अभाव बना रहेगा। वासनाओं से निवृत्त चित्त में एक शाश्वत तृप्ति का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

समावेश हो जाता है और यही तृप्ति उसकी वह निर्विकारता है जिसकी मनुष्य को अपेक्षा है, आवश्यकता है।

वस्तुओं के प्रति अत्यधिक आकर्षण का कारण है वस्तुओं को बहुत महत्त्व देना। जब मानव जीवन की सुख-शांति का हेतु वस्तुओं की प्राप्ति मान लिया जाता है, तब उनका महत्त्व अनावश्यक रूप से बढ़ जाता है। मनुष्य भ्रांत मान्यता के वशीभूत होकर वस्तुओं के संग्रह में निरत हो जाता है। वह उन्हें पाने में कर्तव्याकर्तव्य का भी बोध खो देता है। एक वस्तु पाने के बाद दूसरी पाने की लालसा में प्रयत्न करता हुआ वह स्वाभाविक जीवन से भटककर अस्वाभाविक जीवन की ओर चला जाता है, जिससे संघर्ष, अशांति तथा अतृप्ति की वृद्धि हो जाती है। ऐसी दशा में चित्त का शुद्ध रहना संभव नहीं हो सकता।

जिनको पाने और इकट्ठा करने में मनुष्य अपना सारा जीवन ही यापन कर डालता है, यदि उन वस्तुओं में सुख एवं संतुष्टि होती तो कोई एक वस्तु पाकर मनुष्य अवश्य संतुष्ट तथा सुखी हो जाता और उसे दूसरी वस्तु की कामना न रहती। सुख में खंड नहीं होते वह अखंड एवं पूर्ण होता है। वह जिसमें रहता है पूर्ण एवं अखंड रूप में रहता है, अन्यथा बिल्कुल नहीं रहता। एक वस्तु से तृप्त न होकर दूसरी के लिए लालायित रहना इस बात का प्रमाण है कि सच्चा सुख, संतुष्टि वस्तुओं में नहीं है। इसलिए उसके लिए उनका संग, असंगत एवं अस्वाभाविक है, जो कि चित्त की अशुद्धि का विशेष कारण बनती है।

चित्त की शुद्धि के लिए वस्तुओं से असंग रहना आवश्यक है। वह हर चीज इन अर्थों में वस्तु ही कही जाएगी जो नश्वर एवं परिवर्तनशील है। आवश्यकतानुसार, निर्मोह के साथ संसार की वस्तुओं का उपयोग करते हुए अविनश्वर आत्मा के प्रति आकर्षित रहना ही वस्तुओं का असंग कहा गया है। वस्तुओं के साथ असंग रहने की स्थिति में मनुष्य में माया, मोह, ममता, लोभ तथा अहंकार

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

की वे विकृतियाँ उत्पन्न नहीं होने पातीं जो कि चित्त की अशुद्धता अथवा मल कही गई है। इन विकृतियों के अभाव में चित्त शुद्ध, शांत एवं स्थिर रहता है जिससे एक शाश्वत, सात्त्विक तथा अनिर्वचनीय प्रसन्नता प्राप्त होती है और यही प्रसन्नता मानव जीवन का लक्ष्य एवं उद्देश्य है।

निस्संदेह इस नश्वर संसार में रहते हुए और नश्वर वस्तुओं की आवश्यकता होने पर उनसे संग होना असंभव नहीं, किंतु आवश्यकताजन्य संग व्यवहारिक है, स्थायी अथवा सार्वत्रिक नहीं है। मनुष्य का सार्वत्रिक संबंध तो उसकी अपनी उस आत्मा से है, जिसका कभी न तो नाश होता है और न जिसमें कभी कोई विकार ही उत्पन्न होता है। संग करते हुए भी वस्तुओं से असंग रहने की कला का अभ्यास कर लेने वाले अपने चित्त को शुद्ध करके शाश्वत सुख-शांति एवं संतोष के अधिकारी बनते हैं।

जो कुछ है सब तोहि

परमात्मा की शरणागति में आ जाने के बाद भी आंतरिक मलिनताएँ और अहंकार के आघात जीवात्मा का पूर्ण आनंद का असीम सुख प्राप्त नहीं होने देते। मनुष्य कभी पदार्थ और कभी ब्रह्म की ओर खिंचता रहता है। यद्यपि उस समय लक्ष्य परमात्मा की प्राप्ति ही होता है तथापि ब्रह्मतत्त्व में विलय के लिए जो पवित्रता अपेक्षित थी वह न बन सकने के कारण ही यह द्वंद्वात्मक स्थिति बनी रहती है। "मैं परमात्मा की उपासना करता हूँ।" इतना भी अहंभाव जब तक शेष रहता है, तब तक पूर्ण समर्पण में कमी है। देह, इंद्रिय, प्राण, मन, बुद्धि और अहंकार इन सब पर जब पूर्ण रूप से परमात्मा का अधिकार हो जाता है तभी पूर्ण समर्पण की असीम सुखदायिनी स्थिति मिल जाती है। उस समय 'मैं' और 'मेरा' यह भाव समाप्त हो जाता है। जो कुछ है सब तेरा है। "तेरा तुझे सौंपने में ही" जीवात्मा आनंद लेने लगे, तो यह समझना

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

चाहिए कि उसके मल-विक्षेप धुल गए हैं। दिव्य शरणागति की प्राप्ति हो गई है।

मनुष्य जब तक सांसारिक अभिमान में भूला रहता है, तब तक उसकी शक्ति और सामर्थ्य बिलकुल तुच्छ और नगण्य होती है। जीवन के सारे अधिकार जब ईश्वर के हाथ सौंप देते हैं तो पूर्ण निश्चिंतता आ जाती है। कोई भय नहीं, कोई आकांक्षा नहीं। न कुछ दु:ख और न ही किसी प्रकार का सुख शेष रहता है। पूर्ण तृप्ति और अलौकिक आनंद की अनुभूति होती है। जब जीवन की बागडोर परमात्मा को सौंप देते हैं, तब उसे बुलाना भी नहीं पड़ता। वह स्वयं ही आकर पहरेदारी करते हैं। भक्त के प्रत्येक अवयव में स्थित होकर अपना कार्य करने लगते हैं। इस स्थिति को ही पूर्ण समर्पण कहते हैं।

इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए शरणागति की साधना करनी होती है। जीवन के जिस भाग को शुद्ध करते चलते हैं उसी में परमात्मा का प्रकाश झलकने लगता है और आगे बढ़ने का साहस मिलने लगता है। श्रद्धा और विश्वास की प्रशस्ति निरंतर बढ़ती रहती है, तो लक्ष्य की समीपता भी बढ़ती है और पूर्ण समर्पण की स्थिति दिखाई देने लगती है।

अनन्य भाव से परमात्मा की उपासना शरणागति का मुख्य आधार है। ईश्वर के समीप बैठने से वैसी ही दिव्यता उपासक को भी प्राप्त होती है और उसके पाप-संताप गलकर नष्ट होने लगते हैं। नित्य-निरंतर यह अभ्यास चलाने से ही जीवन में वह शुद्धता आ पाती है, जो पूर्ण शरणागति के लिए आवश्यक होती है।

परमात्मा की ही सत्ता इस संसार के कण-कण में समाई है। प्रत्येक वस्तु में ओत-प्रोत है। वृक्ष-वनस्पति, जीव-जंतु, सूर्य-चंद्रमा, आकाश-पाताल सब उसी लीलामय प्रभु के विविध रूप हैं। प्रत्येक वस्तु में उसी का निवास, उसी की झाँकी देखना चाहिए, इससे उसकी भक्ति-भावना प्रगाढ़ होती है। सभी के प्रति आत्मीयता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जागती है। दया, करुणा और न्याय मनुष्य तभी कर सकता है, जब वह सर्वत्र परमात्मा को विराजमान देखे। इस स्थिति को प्राप्त करना मनुष्य का प्रमुख कर्तव्य है इसके बिना वह अनन्य भक्ति प्राप्त करने का अधिकारी भी नहीं बन सकता।

भावनाओं के द्वारा जिस तरह सबमें अपना ही स्वरूप देखने की आत्मीयता जगाई थी, कर्म में भी वैसी ही स्वच्छता लानी पड़ती है। जिससे किसी का जी दुःखता हो वह कार्य कभी हितकर नहीं हो सकता क्योंकि जीवमात्र के प्रति अन्याय का अर्थ परमात्मा के नियमों की अवज्ञा करना है। ईश्वर की आज्ञाओं का तिरस्कार करके भी भला कोई उसे पा सका है? इस संसार का पत्ता-पत्ता उसी का है, फिर किसी के प्रति धृष्टता, अन्याय और अत्याचार भला वह क्यों सहन करेगा! हमें अपने कर्मों के द्वारा भी उसके सौंदर्य को नष्ट नहीं होने देना चाहिए। हम वह कार्य करें जिससे संसार की भलाई हो, यहाँ की सुंदरता बढ़े, तभी तो उसके प्रिय पात्र बनने का सौभाग्य हमें प्राप्त हो सकेगा।

दुष्कर्म मनुष्य अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए करता है। उसे अपना शरीर, अपना हित और अपने सुख अधिक प्रिय होते हैं, इसी से औरों के सुख छीनने-झपटने का वह प्रयत्न करता है, पर जिन्हें परमात्मा से प्यार होगा, उसे अपने सुख तो तुच्छ ही जान पड़ेंगे। हर प्रेमी की इच्छा यही होती है कि अपने प्रियतम की कौन-सी साध पूरी करें। परमात्मा हमारा प्रियतम होगा तो उसकी इच्छा पूरी करने में कौन-सी कठिनाई रहेगी। परमात्मा अपने सभी बच्चों की परवरिश समान रूप से करना चाहता है। यही इच्छा अपनी भी बने तो समझें कि हम भी उसे प्यार करते हैं। ईश्वर के प्रति अपनी आत्मीयता बनाए रखना चाहते हों तो यह जरूरी है कि उसके पुत्रों के प्रति भी आत्मीयता रखें। कोई ऐसा काम न करें जिससे किसी का जी दुःखता हो। किसी को कष्ट या क्लेश पहुँचाकर ईश्वर की भक्ति प्राप्त कर लेना बिलकुल

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

असंभव है। शुद्ध, सात्त्विक, सत्कर्मों से ही उसे प्रसन्न किया जा सकता है।

सत्कर्म दिखावे के लिए ही न हों। उनके प्रति हमारी गहन निष्ठा भी होनी चाहिए। ईश्वर के प्रति जितना अधिक विश्वास होगा उतना ही अधिक सत्कर्मों में प्रीति बनी रहेगी। जब भी कभी उसे भूल जाते हैं तभी दुष्कर्म बन पड़ते हैं। ईश्वर के प्रति प्रगाढ़ आस्था रखेंगे तभी कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में भी सत्कर्म और कर्तव्यपालन से विचलित न होंगे। प्रलोभनों में वही फँसते हैं जिनका ईश्वर-विश्वास डगमगाता रहता है, पर जिसने चिंतन, मनन और विचार द्वारा हृदय-आत्मा से ईश्वरीय स्थिति को स्वीकार कर लिया है, उससे भूलकर भी कोई ऐसा कार्य न होगा, जिससे किसी को कष्ट पहुँचता हो।

कर्म की प्रेरणा मनुष्य को प्राय: इच्छाओं, आकांक्षाओं से ही मिलती है। जैसी कामनाएँ करते हैं कर्म भी वैसे ही बन पड़ते हैं। भोग-वासना से प्रेरित होकर ही लोग असंयम और व्यभिचार बढ़ाते हैं। स्वास्थ्य की खराबी का कारण अखाद्य पदार्थों को नहीं मानेंगे, वरन स्वादप्रियता को कहेंगे जिससे प्रभावित होकर मनुष्य कम-ज्यादा का ध्यान न देकर अच्छी-बुरी वस्तुओं को उदरस्थ करता रहता है। कर्म का मूल मनुष्य की इच्छा है अत: कामनाओं पर नियंत्रण रखना अत्यंत आवश्यक है। ऐसा न करें तो जीवन-लक्ष्य की साधना में शिथिलता आ जाती है।

स्वार्थ की संकीर्णता का परित्याग कर दें, तो मामूली-सी आवश्यकताएँ ही शेष बचती हैं, इनके लिए कोई बड़ी दौड़-धूप नहीं करनी होती। व्यर्थ की आपा-धापी बढ़ाने से ही मनुष्य अपने सात्त्विक लक्ष्य को भूल जाते हैं। ऋषियों का जीवन इसीलिए सदैव त्यागमय रहा है। वे जीवनयापन के साधनों में थोड़ा-सा समय लगाकर, शेष समय का सदुपयोग विश्व-रहस्य जानने तथा ब्रह्म का सान्निध्य प्राप्त करने में बिताते थे। भारतीय संस्कृति को गौरव

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रदान करने का यह महानतम कार्य ऋषियों ने अपनी आवश्यकताओं को घटाकर किया था। आज भी वही मार्ग श्रेष्ठ है, उसी पर चलकर अपनी आध्यात्मिक प्यास बुझा सकते हैं।

अपनी कामनाओं को जितना ही बढ़ाते हैं परिस्थितियों का दबाव उतना ही अधिक पड़ता है। फलस्वरूप लोग दैव को दोष लगाते हैं। परमात्मा की अकृपा समझते हैं किंतु विचारपूर्वक देखें तो ऐसी बात नहीं है। परमात्मा का विधान सबके लिए सदैव मंगलदायक ही होता है। हमें उसी की रचना, उसी के विधि-विधान के साथ अपने जीवन का तालमेल पैदा करना चाहिए। वह जो कुछ भी करेगा हमारे हित के लिए ही करेगा। इस विश्वास से आत्मा में बड़ा बल बढ़ता है।

देह के साधनों और संबंधों को ही सत्य मानना मनुष्य की सबसे बड़ी भूल है। शरीर के सुख की ही बात सोचना बुद्धिसंगत कदापि नहीं हो सकता। हमें जन्म से पूर्व और मृत्यु के बाद वाले स्वरूप का भी विचार करना पड़ेगा। तात्त्विक दृष्टि से हमारा पिता, हमारी माता, भाई, स्वजन, स्नेही सब कुछ वही है। वह हमारा संरक्षक है। उसी ने हमें जीवन दिया है। सुख के अनेक साधन भी उसी ने जुटाए हैं। परम कृपालु स्वामी, सहृदय सखा भी वही है। उससे भिन्न मनुष्य का कुछ भी तो अस्तित्व नहीं है। मनुष्य जीवन देकर उसने हमारा कितना बड़ा उपकार किया है? क्या हमें इस कृतज्ञता को भूल जाना चाहिए? क्या उससे विलग रहकर हम कभी सुखी रह सकेंगे? एक ही उत्तर है कि उसकी शरणागति के बिना सुख नहीं मिल सकता। उसे पाने के लिए तो पूर्ण रूप से समर्पण करना ही पड़ेगा।

कर्मयोग संबंधी भ्रांतियाँ और उनका निराकरण

लोक-परलोक में कल्याण के लिए शास्त्रों और मुख्यतः गीता में, मनुष्यमात्र को अनासक्त कर्मयोग का उपदेश किया गया है। निस्संदेह अनासक्त कर्मयोग कल्याण का बहुत बड़ा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

रहस्य है। यह एक ऐसा जीवन दर्शन है, कर्म करने की ऐसी पद्धति है जिसका अनुसरण करने से मनुष्य के लिए लोक अथवा परलोक में कोई भय नहीं रहता। किंतु इस अनासक्त योग के विषय में बहुत-सी भ्रांतियाँ और शंकाएँ सामने आती हैं। इनका समाधान किए बिना इस योग को न ठीक से समझा जा सकता है और न उचित रीति से उसका अनुसरण ही किया जा सकता है। अस्तु, इस महत्त्वपूर्ण योग को ठीक-ठीक समझ लेना नितांत आवश्यक है।

प्रायः लोग इस अनासक्ति कर्मयोग का आशय यह समझते हैं—"चूँकि मनुष्य की अपनी शक्ति सामर्थ्य कुछ भी नहीं है, वह विश्व-ब्रह्मांड की एक सामान्य इकाई मात्र है। मनुष्य के व्यक्त अथवा अव्यक्त किसी कर्म का हेतु, प्रेरक और संचालक भी वही एक परमात्मा ही है। मनुष्य की न तो अपनी कोई प्रेरणा है और न कर्म; उसके सारे कर्म और सारी क्रियाएँ उसकी इच्छा, प्रेरणा और शक्ति द्वारा संपादित होती हैं।"

अनेक लोग कर्मों में अनासक्ति का अर्थ यह लगाते हैं कि "जो भी काम किए जाएँ असंबंध एवं निरपेक्ष भाव से किए जाएँ। वे किए तो जाएँ पर उनसे और उनके परिणाम से कोई संबंध न रखा जाए। यंत्र प्रवृत्ति से उनका प्रतिपादन कर दिया जाए। कुछ लोग इससे थोड़ा आगे बढ़कर इस प्रकार मान लेते हैं कि अपना कर्तव्य तो करते रहा जाए लेकिन उसके परिणाम की चिंता न की जाए।"

बहुत-से अतिवादी लोग तो यहाँ तक बढ़ जाते हैं कि हम जो भी काम करते हैं, वह वास्तव में हम नहीं करते। हमसे कराए जाते हैं और वह कराने वाला है—परमात्मा। हमारे द्वारा होने वाला काम अच्छा है या बुरा इसकी न तो हमें चिंता करनी चाहिए और न अपने ऊपर उत्तरदायित्व ही लेना चाहिए। उन सबका उत्तरदायी वह कराने वाला ईश्वर ही है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इस प्रकार अनासक्त कर्मयोग के संबंध में न जाने कितनी भ्रांतियाँ लोगों के मस्तिष्कों में चला करती हैं। अनासक्त कर्मयोग के संबंध में सारी धारणाएँ भ्रांतिपूर्ण हैं।

यह बात सही है कि मनुष्य इस विश्व-ब्रह्मांड की एक इकाई है और उस परमात्मरूप चेतनसत्ता से संचालित होता है। फिर भी यह मानना कि मनुष्य का हर काम उसी की प्रेरणा से होता है, उसको कराने वाला वही है, मनुष्य तो एक यंत्र मात्र है, जैसा संचालित किया जाता है वैसा चल पड़ता है, जिधर चला दिया जाता है चल पड़ता है। इस मान्यता में सामान्य रूप से दो बाधाएँ हैं—एक तो यह कि वह सत्य, शिव और सुंदर परमात्मा किसी मनुष्य से कोई गलत काम नहीं करा सकता और यदि वह कराता है तो उसका दंड मनुष्य को नहीं मिलना चाहिए। लेकिन तथ्य इसके विपरीत दृष्टिगोचर होता है। जो भी मनुष्य कोई गलत या बुरा काम करता है तो देर-सबेर उसे उसका दंड मिलता है। यह बात किसी प्रकार भी समझ में आने योग्य नहीं है कि एक ओर तो वह परमात्मा गलत काम कराता है और दूसरी ओर दंड देता या दिलाता है। परमात्मा, जो कि इस समस्त जड़ चेतन संसार का पालक, संचालक और स्वामी है, ऐसा अन्यायपरायण नहीं हो सकता।

दूसरी धारणा है—कर्म तो किए जाएँ पर असंबद्ध अथवा निरपेक्ष भाव से। यह धारणा भी अयुक्त एवं भ्रांतिपूर्ण है। जो कार्य असंबद्ध भाव से किया जाएगा उसमें किसी प्रकार की अभिरुचि अथवा तत्परता न रह सकेगी। जिस काम में अभिरुचि तथा तत्परता न रहेगी, जो ऊपरी मन से यों ही असंलग्न प्रवृत्ति से किया जाएगा वह न तो ठीक से किया जा सकता है और न उसका परिणाम ही उपयुक्त होगा। ऊपरी मन से अस्त-व्यस्त ढंग से किए गए काम का परिणाम असफ़लता के रूप में ही सामने आएगा, जबकि संसार में न तो कोई कार्य असफलता के लिए किया जाता है और न संसार

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

का काम असफलताओं से चल सकता है। सारे कार्य सफलताओं के लिए ही किए जाते हैं और कार्यों की सफलता पर ही व्यक्ति तथा संसार की प्रगति तथा उन्नति निर्भर है। कार्यों में सफलता तभी मिलती है, जब वे संलग्नता तथा तत्परतापूर्वक किए जाते हैं। इसलिए अनासक्त कर्मयोग का यह अर्थ लगाना कि सारे कार्य असंबद्ध भाव से परिणाम की चिंता किए बिना किए जाएँ अथवा असंगत तथा अनुपयुक्त हैं।

कर्माकर्म का दायित्व अपने ऊपर न मानकर परमात्मा पर मानना अनासक्त कर्मयोग का गलत अर्थ लगाना है। इससे मनुष्य का दुस्साहस बढ़ेगा और वह पाप-पुण्य की मान्यता के प्रति धृष्ट हो उठेगा। अपनी पतनोन्मुख प्रवृत्तियों के कारण अपकर्मों में ही लग सकता है। जिससे संसार में भयानक अव्यवस्था तथा अनैतिकता फैल सकती है। किसी भी उत्तरदायित्व रहित व्यक्ति से सत्कर्म की आशा नहीं की जा सकती। इस आशय के साथ भगवान कृष्ण तथा अन्य ऋषि-मुनियों ने अनासक्त कर्मयोग का उपदेश किया होगा ऐसी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

कर्तव्य में तत्परता और फल की ओर से उदासीनता-अनासक्त कर्मयोग का ऐसा अर्थ लगाने वाले भी गलती पर माने जाएँगे। सफलता-असफलता और लाभ-हानि का दृष्टिकोण रखे बिना कार्यों में तत्परता की बात कहना मनोवैज्ञानिक विरोध है। सुफल को लक्ष्य करके ही कोई कार्य किया जाता है और तभी उसमें तत्परता भी आती है। जिन कार्यों के फलों से कोई प्रयोजन न होगा, वे कुशलतापूर्वक किए ही नहीं जा सकते। कार्य में सफलता तो मनुष्य का ध्येय होता ही है, असफलता से भी निष्प्रयोजन नहीं रहा जा सकता। यदि ऐसा होगा तो असफलता के कारणों और उनको दूर करने के उपायों को खोजने की प्रवृत्ति ही न होगी, जिससे बार-बार असफलता हाथ आएगी जो किसी प्रकार भी वांछनीय नहीं हो सकती।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अब प्रश्न यह उठता है कि जब अनासक्त कर्मयोग का आशय यह भी नहीं है, वह भी नहीं है तब आखिर उसका वास्तविक आशय है क्या? अनासक्त कर्मयोग का वास्तविक आशय इस प्रकार समझना होगा—

कर्म संबंधी यह उपदेश दो शब्दों द्वारा वहन कराया गया है—एक 'अनासक्त' और दूसरा 'कर्मयोग'। अनासक्ति का आशय है राग न रखना। आप कोई कितना ही बड़ा अथवा छोटा काम क्यों न करें, उसके प्रति अपने मन की भावना न जोड़िए। ऐसा करने से उस कर्तृत्व में अहंकार का समावेश होगा। बार-बार यह विचार आए कि अमुक कार्य मैंने संपादित किया है, मैं एक कुशल कर्ता अथवा कर्तृत्ववान व्यक्ति हूँ। अहंकार की भावना क्या व्यक्ति और क्या समाज दोनों को हानिकारक है। "पाप मूल अभिमान"—अहंकार को सभी पापों की जड़ बतलाया गया है। जब किसी कार्य में आसक्ति नहीं होगी, तब उसके प्रति अहंकार भी नहीं होगा। अहंकार की उत्पत्ति आसक्ति से ही होती है और आसक्ति वहीं होती है, जहाँ अपनेपन का भाव होता है। अस्तु, कर्मों में अकर्तापन का भाव रखना ही अनासक्ति है। यह एक आध्यात्मिक अनुशासन तथा नम्रता है।

निखिल ब्रह्मांड की चेतन सत्ता के अधीन होने से हम सबकी सारी शक्ति, जिसके आधार पर कर्म करने में समर्थ हैं, उसी की है। अस्तु, अपने कर्मों का कर्ता अपने को न मानकर उस मूल सत्ता परमात्मा को मान लेने में जहाँ एक ओर अपना कल्याण है, वहाँ दूसरी ओर सत्य को स्वीकार करने की नैतिकता भी है।

दूसरा शब्द है—'कर्मयोग'—इसका स्पष्ट अर्थ स्वयं भगवान ने गीता में दे दिया है, "**योगःकर्मसु कौशलम्**" कर्म में कुशलता ही योग है। कार्य कुशल वही हो सकता है जो अच्छी तरह से जानता हो कि कौन-सा काम करने योग्य है और कौन-सा करने

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

योग्य नहीं है। जो कार्य की प्रकृति ही नहीं समझ सकता वह कार्यकुशल कैसा? कार्य-कुशलता की पहली शर्त है कार्य की प्रकृति और उसकी जाति जानना, दूसरी शर्त है उसके निष्कर्ष अथवा परिणाम का अनुमान कर सकना, साथ ही कुशल शब्द के अंतर्गत शिव, शुभ तथा सुंदर का भाव प्रवाहित होता है; अस्तु, कार्य-कुशलता के क्षेत्र में अशुभ कर्मों के आने का प्रश्न ही नहीं उठता। इसके अंतर्गत शुभ तथा कल्याणकारी काम ही आते हैं।

अब कुशलता का अर्थ निपुणता भी है। कर्मयोग का तात्पर्य तभी पूरा हो सकता है जब कोई भी कार्य निपुणतापूर्वक किया जाए, निपुणता तब तक नहीं आ सकती जब तक वह पूरी तन्मयता, शक्ति और एकाग्रता से नहीं किया जाएगा। इस प्रकार संपूर्ण योग्यताओं के साथ किए गए कार्य में सफलता की आशा की जा सकती है, असफलता की नहीं। तथापि पूर्ण प्रयत्नों तथा प्रतिभाओं के बावजूद भी प्रारब्ध, संयोग अथवा परिस्थितिवश असफलता भी मिल सकती है, उसके लिए पुनः अनासक्ति का निर्देश प्रस्तुत है।

अनासक्त कर्मयोग का वास्तविक तात्पर्य यह है कि किसी भी काम को पूरी कुशलता के साथ कर्तापन का अभिमान छोड़कर किया जाए और उसके फल से निर्लिप्त, निस्पृह अथवा अनासक्त रहा जाए, जिससे न तो सफलता का अभिमान हो और न असफलता में निराशा अथवा निरुत्साह और शायद अनासक्त कर्मयोग का यही तात्पर्य अधिक-से-अधिक निर्भ्रांत एवं समीचीन है।

कर्म पर भावना का प्रभाव

यों कर्म के बाह्य रूप को देखकर भी उसके भले-बुरे होने का अनुमान लगाया जाता है, पर उसकी वास्तविक कसौटी कर्ता की भावना ही रहती है। आमतौर से सद्भावना की प्रेरणा से जो कर्म किए जाते हैं, वे शुभ, सराहनीय और नैतिक होते हैं। पर कभी-कभी बाहर से भर्त्सना योग्य दीखने वाले कुछ कार्य ऐसे ही भी होते

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

हैं, जो सद्भावनापूर्वक किए गए होते हैं। ऐसी दशा में आध्यात्मिक दृष्टि से उन्हें शुभ ही माना जाएगा और उनका परिणाम भी कर्ता को शुभ ही मिलेगा, भले ही लौकिक दृष्टि से उन्हें निंदनीय कहा जाए।

लौकिक दृष्टि से कर्म के बाह्य स्वरूप को ही महत्त्व दिया जाता है। क्योंकि व्यक्ति की भावना का प्रमाण उसी से तो मिलता है। भीतर की बात कर्ता या उसका भगवान ही समझता है। लोगों को तो किसी की मनोवृत्ति का परिचय उसकी बाह्य गतिविधियों से ही मिलता है, इसलिए मोटी कसौटी कर्म का स्वरूप ही मानी गई है और उसी के आधार पर निंदा–प्रशंसा भी होती है। राजदंड और लोकमत भी उसी आधार पर कर्म के भले–बुरे होने का निष्कर्ष निकालते हैं। काम चलाने की दृष्टि से यह व्यवस्था ठीक भी है, पर वास्तविकता को जानना हो तो कर्ता की भावना को ही महत्त्व देना पड़ेगा।

गेरुआ वस्त्रधारी, कमंडल, चिमटा लिए, जटाजूट, भस्म, त्रिपुंड से सुसज्जित व्यक्ति को आमतौर से संत–महात्मा माना जाता है और लोग उसका आदर–सम्मान भी करते हैं। वेशभूषा को देखकर उसके त्यागी, भगवत भक्त और परमार्थ प्रिय होने की मान्यता बनती है, पर ऐसा भी हो सकता है कि किसी चोर, डाकू ने अपनी वास्तविकता छिपाए रखने और आसानी से अपना दुष्कर्म करते रह सकने की दृष्टि से यह आवरण बनाया हो। इस प्रकार की प्रवंचना से लोग धोखा खा सकते हैं, पर कर्ता के लिए तो वह दोहरा पाप ही हो जाएगा। चोरी के साथ–साथ धोखेबाजी का दोहरा पुट लग जाने से साधारण चोर की अपेक्षा उस ठग–चोर का अपराध दूना हो गया। उसका दूना पतन होगा। दूना नरक मिलेगा।

अन्य कर्म भी ऐसे हो सकते हैं, जो बाहर से अच्छे दिखाई पड़ें, पर उनके पीछे कर्ता की दुरभिसंधि छिपी हो। शुभ कार्यों की

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आड़ में अशुभ कर्म होते हुए भी आएदिन देखने को मिलते हैं। गोशाला, विधवाश्रम, अनाथालय जैसी संस्थाएँ बाहर से सदुद्देश्य को लेकर खोली गई प्रतीत होती हैं, पर कई बार उनके भीतरी घोटाले ऐसे रूप में सामने आते हैं, जिनसे उनके पीछे स्वार्थ साधन का व्यापार छिपा मालूम होता है।

धर्म-पुण्य की बात दूसरों से कहकर स्वयं मुफ्त का माल लूटने वाले धर्मध्वजी लोगों की धर्म शिक्षा भी ऐसी ही प्रवंचना होती है। उसमें धर्मप्रेरणा का नहीं, स्वार्थ साधना का ही उद्देश्य प्रधान रहता है। ऐसी दशा में बाहर से धर्मजीवी दीखते हुए भी वे लोग साधारण जेबकटों की अपेक्षा धर्मबुद्धि का शोषण करने का पाप भी करते हैं और दोहरे अपराधी ठहरते हैं। सामूहिक आयोजनों और संस्थाओं की सेवा-व्यवस्था करने वाले जब टट्टी की ओट शिकार करते हैं, तो उनका पाप अधिक प्रबल ही माना जाता है। बाहर के लोग जिन्हें वास्तविकता का ज्ञान नहीं है वे सत्कार्यों में लगे हुए लोगों की प्रशंसा ही करेंगे, आदर ही देंगे। पर कर्ता को उसका परिणाम उस दृष्टिकोण के अनुरूप ही मिलेगा, जिससे प्रेरित होकर उसने वह कार्य किया है।

इसी प्रकार बाहर से बुरे दीखने वाले कार्य भी ऐसे हो सकते हैं जो निंदनीय और घृणित दिखाई दें, पर सदुद्देश्य से प्रेरित किए जाने के कारण वस्तुतः वे शुभ कर्म ही माने जाते हैं और उनसे आत्मा का पतन नहीं उत्थान होता है। डॉक्टर के आपरेशन करते समय रोगी की चिल्लाहट और वेदना को देखते हुए यह अनुमान होता है कि कोई निर्दयी किसी असहाय पर जुल्म ढा रहा है। समीप जाकर देखने से इस बात की और भी अधिक पुष्टि हो जाती है। एक आदमी चाकू हाथ में लिए है किसी के शरीर में उसे भोंक रहा है, खून बह रहा है, पीड़ित व्यक्ति मेज पर पड़ा है, उसे जकड़ रखा गया है, उसकी कष्ट और चीत्कार पर वह खड़े हुए कंपाउंडर आदि ध्यान नहीं देते। कैसी हृदयहीनता का दृश्य है। देखने वाले

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अनजान आदमी को यह सब घोर अत्याचार ही प्रतीत होगा। पर वे जानकार लोग जिन्हें डॉक्टर के सदुद्देश्य और आपरेशन के बाद एक बड़े रोग से मुक्ति का विश्वास है, वे विचलित नहीं होते। उन्हें उस खून-खच्चर, तड़पन, चिल्लाहट के बीच भी करुणा और सद्भावना का दर्शन होता है और वह डॉक्टर भी अपनी आत्मा के सामने सच्चा होने के कारण इतनी चीर-फाड़ करने के बाद भी पुण्यात्मा ही ठहरता है। कर्म का बाह्य स्वरूप नहीं, कर्ता की भावना ही तो प्रधान मानी जाती है।

किसी भूखे, पीड़ित या दीन-दुखी की सहायता के उद्देश्य से कोई बालक घर से रोटी या कपड़ा चुराकर ले जाता है और उसे दुखियों को दे आता है। घर वालों की प्रकृति का ज्ञान होने के कारण उसे यह आशा नहीं है कि उस भरे-पूरे घर में से दीन-दुखियों के लिए माँगने पर भी कुछ मिल सकेगा, ऐसी दशा में वह चोरी करना ही उचित समझता है। बात खुलती है। घर वाले उसकी भर्त्सना करते हैं, चोरी का अपराध लगाकर ताड़ना देते हैं। बाहरी दृष्टि से बालक का वह कार्य चोरी ही गिना जा सकता है, पर वस्तुतः उसकी आत्मा ने जिन परिस्थितियों में उसे चोरी करने की आज्ञा दी, वे ऐसी ही थीं कि बालक अपराधी नहीं ठहरता। आजीविका कमाने से लेकर नित्यकर्म करने तक में हम ईश्वर के सौंपे उत्तरदायित्वों को एक ईमानदार सेवक की तरह पूरा करते रहने का ध्यान रखें, तो वह भावना ही हमारे साधारण दीखने वाले कार्यों को भी पुण्य परमार्थ बना देंगी और उनका परिणाम लोक और परलोक दोनों में कल्याणकारक ही होगा।

हमें अपनी भावना का परिष्कार करना चाहिए। संकीर्णता और स्वार्थपरता जब तक कायम है, तब तक श्रेष्ठ कार्य करते हुए भी उनमें से कोई स्वार्थ साधन करने की इच्छा बनी रहेगी और फिर चाहे वह इच्छा पूर्ण भी न हो पाए, पर उस दुर्भावना के आधार पर वह सत्कर्म भी पाप रूप ही प्रस्तुत होंगे। जब अवसर मिलेगा तब

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

स्वार्थपरता प्रबल होकर दुष्कर्म करा भी लेगी। किंतु यदि अपना दृष्टिकोण उच्च है, प्रत्येक कार्य कर्तव्यपालन की धर्मबुद्धि से किया जा रहा है तो साधारण श्रेणी का जीवनयापन करते हुए अपना गृहस्थ-पालन भी तप-साधना और योगाभ्यास की तरह सत्कर्म सिद्ध होगा और उसी में जीवनोद्देश्य के पथ पर भारी प्रगति होती चली जाएगी।

इस संसार में भावना ही प्रधान है। कर्म का भला-बुरा रूप उसी के आधार पर बंधनकारक और मुक्तिदायक बनता है। सद्भावना से प्रेरित कर्म सदा शुभ और श्रेष्ठ ही होते हैं, पर कदाचित् वे अनुपयुक्त भी बन पड़े, तो भी लोक-दृष्टि से हेय ठहरते हुए वे आत्मिक दृष्टि से उत्कृष्ट ही सिद्ध होंगे। आंतरिक उत्कृष्टता, सदाशयता, उच्च भावना और कर्तव्य-बुद्धि रखकर हम साधारण जीवन व्यतीत करते हुए भी महान बनते हैं और इसी से हमारी लक्ष्यपूर्ति सरल बनती है।

कर्म के बाहरी और भीतरी स्वरूप में अंतर अथवा प्रतिकूलता होने पर लोग तो बाहरी बात को ही महत्त्व देंगे। जो कार्य अनैतिक दीखेंगे, उनकी भर्त्सना भी करेंगे और दंड भी मिलेगा। उतना होते हुए भी आंतरिक भावना की ही प्रमुखता रहेगी। नैतिक उद्देश्यों के लिए अनैतिक कार्य भी शुभ ही माने जाते हैं। अच्छा तो यही है कि भीतर-बाहर की परिस्थितियाँ एक-सी रहें। भीतर भी सदुद्देश्य हो बाहर भी प्रियदर्शी कार्य बनें, पर यदि कारणवश कभी ऐसा सामंजस्य न भी हो पाए, प्रतिकूलता ही दीखे, तो आत्मिक उद्देश्य ही प्रधान रहेंगे, उन्हीं के आधार पर कर्ता को पापी या पुण्यात्मा ठहराया जाएगा।

दैनिक जीवन में हम जो कुछ करते हैं, उनमें से कुछ कार्य पाप, कुछ पुण्य, कुछ साधारण क्रिया-कलाप दिखाई देते हैं। अनुमान यही होता है कि जो शुभ कर्म बने हैं उनका पुण्यफल मिलेगा। जो पाप किए हैं उनका नरक मिलेगा और जो नित्यकर्म, जैसे जीवन

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

यात्रा के साधारण कर्म हैं, वे व्यर्थ-निरर्थक माने जाएँगे, पर वस्तुस्थिति ऐसी नहीं है। हमारा दृष्टिकोण जिंदगी जीने के संबंध में जैसा भी कुछ रहा होगा, उसी के आधार पर उन कर्मों की गणना होगी और वैसा ही शुभ-अशुभ फल मिलेगा।

गृहस्थ का पालन करते समय हम ऐसा सोचें कि भगवान ने हमें एक माली की तरह एक छोटा उपवन लगाने और उसे फलने-फूलने योग्य बनाने का उत्तरदायित्व सौंपा है और उसे पूरी ईमानदारी तथा सद्भावना से पूरा करते रहना हमारा कर्तव्य है। इस भावना से देखने पर अपने स्त्री-बच्चे हमें भगवान के बगीचे के एक सुरभित वृक्ष लगेंगे और उनकी सेवा करते हुए उस बगीचे के मालिक परमात्मा की प्रसन्नता की आशा बँधेंगी। यदि वे लोग अपने अनुकूल नहीं भी बन पाते, अपनी सेवा-सहायता नहीं भी करते, तो भी कोई दुःख न होगा। अपना कर्तव्यपालन करते रहने में कभी त्रुटि करने की इच्छा न होगी। माली अपने मालिक के हर पौधे को सींचता है। कटीली झाड़ियों वाले नीबू और मधुर फल वाले आम के झाड़ों में से किसी के प्रति भी उसे रोष या मोह नहीं होता, मालिक ने जिस प्रकृति के भी पेड़ सींचने को दे दिए उन्हें ही तो उसे बढ़ाना-बनाना है। गृहस्थ में सब कोई अपनी मनमरजी के नहीं होते, उनमें कुछ अनुपयुक्त स्वभाव के भी होते हैं। ऐसी दशा में कर्तव्य-बुद्धि से, ईश्वर का बगीचा सींचने वाले माली की तरह जो अपने परिवार का पालन करता है, उसका कार्य ईश्वर भक्ति और देवालय की पूजा करते रहने वाले पुजारी की धर्मचर्या से किसी भी प्रकार कम श्रेष्ठ नहीं ठहरता।

कर्म तब बंधन रूप होता है जब वह स्वार्थ बुद्धि से, फल की आशा से और अहंकार की पूर्ति के लिए किया जाता है। तभी ऐसी स्थिति आती है कि इच्छित परिणाम न मिलने पर क्षोभ और दुःख उपजे। इस दृष्टिकोण से यदि जिंदगी जीने का क्रम बना है तो अपनी मरजी के विरुद्ध जो कुछ भी हो रहा होगा, उस सब से

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अशांति एवं उद्विग्नता उठेगी। स्त्री-बच्चे यदि अपने इच्छानुगामी नहीं बनते तो उन पर रोष आएगा और उनकी सेवा बंद कर देने की इच्छा उत्पन्न होगी। सुंदर और सेवाभावी स्त्री में अनुरक्त होना और फूहड़, कर्कश के प्रति कुपित रहना स्वार्थ बुद्धि का ही प्रतिफल है। स्वार्थ की पर्त जितनी ही मोटी होगी उतनी ही हमारे भव-बंधन मजबूती से बँधते चले जाएँगे, पर यदि हमारा प्रत्येक कार्य परमार्थ बुद्धि से, उच्च दृष्टिकोण से किया जा रहा हो तो साधारण दीखने वाले कार्य भी पुण्य फलदायक, मुक्ति की ओर ले जाने वाले सिद्ध होंगे।

जीवन का प्रत्येक कार्य हम उच्च आदर्शों की पूर्ति की दृष्टि रखकर करें। सबसे बड़ा स्वार्थ-परमार्थ जीवनोद्देश्य की पूर्ति को ही मानें।

कर्मवाद और मानवीय प्रगति

हमारे देश में कर्मफल पर साधारणतः सभी लोग विश्वास करते हैं। प्रायः प्रत्येक मनुष्य यह समझता है कि जो जैसी करनी करता है, उसे वैसा ही फल भोगना पड़ता है। इतना ही नहीं, पुनर्जन्म में भी व्यापक रूप से विश्वास होने के कारण लोग यह भी समझा करते हैं कि एक जन्म की कमाई का फल मनुष्य को दूसरे जन्म में मिलता है। कर्म तथा पुनर्जन्म संबंधी यह ज्ञान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यदि कोई मनुष्य इसके यथार्थ तत्त्व को समझ ले, तो अत्यंत तेजी से वह अपनी उन्नति कर सकता है और इस प्रकार शीघ्र सिद्धि प्राप्त कर आवागमन से रहित हो जा सकता है, क्योंकि इन प्राकृतिक तथ्यों के ज्ञान तथा सदुपयोग से मनुष्य की शक्तियाँ अपरिमित बढ़ जाती हैं, पर आज हम किस प्रकार इनका उपयोग कर रहे हैं? जब कभी मनुष्य पर कोई आफत आ पड़ती है, कोई बीमारी अथवा कठिनाई आ जाती है, तो वह प्रायः यह सोचकर अपने चित्त को सांत्वना दे लेता है, कि उसके पूर्व जन्म की कमाई ऐसी ही थी कि उसे इस जन्म में सुविधाएँ नहीं मिल

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सकतीं। बस ऐसा सोचकर वह चुपचाप बैठ जाता है, प्रायः निकम्मा हो जाता है। इस प्रकार कर्म-संबंधी इन नियमों को शक्ति का साधन बनाने के बदले इनको अकर्मण्यता का बहाना बना लिया गया है। एक साधारण मनुष्य जिसे कर्म तथा पुनर्जन्म की बातें कुछ भी नहीं मालूम हैं, वह ऐसा नहीं करता है। उसके सामने तो जब कई कठिनाइयाँ आती हैं, तो वह साहसपूर्वक उनका सामना करने का प्रयत्न करता है। वह पुरुषार्थ को ही अपना कर्तव्य समझता है। कैसे आश्चर्य की बात है। कहाँ तो जीवन के गूढ़ रहस्यों को न जानने पर भी पुरुषार्थ और कहाँ जीवन के सार-तत्त्वों का ज्ञान रखने पर भी अकर्मण्यता। ठीक है, महान नियमों का अर्थ गलत रूप से समझने का ऐसा ही नतीजा होता है। ऐसी ही समझ वालों के लिए गोस्वामी तुलसीदास जी लिख गए हैं—

कादर जन कर एक अधारा। दैव-दैव आलसी पुकारा॥

इसका यह तात्पर्य नहीं निकालना चाहिए कि तुलसीदास जी ने दैव की अवहेलना की है। ऐसा तो कभी संभव नहीं। इसमें उन्होंने यही भाव दिखलाया है कि आलसी अथवा अकर्मण्य लोग किस प्रकार अपनी अकर्मण्यता को राम नाम अर्थात किसी महान तत्त्व की आड़ में छिपाना चाहते हैं।

कर्म से अभिप्राय क्या है ? साधारणतः जब हम किसी को धनी, किसी को गरीब, किसी को भाँति-भाँति के ऐश और आराम में और किसी को भूखों मरते, रोगी और अन्य तरह से पीड़ित देखते हैं, तो कहते हैं कि ये सभी लोग अपने-अपने पूर्व जन्मों के कर्मों के फल भोग रहे हैं। इसलिए कर्म का संबंध किसी ऐसे न्यायपूर्ण नियम से जान पड़ता है, जो अपना कार्य मनुष्य के अनेक जन्मों में भी पूरा कर लेता है। इससे पता चलता है कि प्रकृति किसी का पक्षपात नहीं करती, न अपनी ओर से किसी को इनाम देती है और न किसी को दंड।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अपनी ही करनी प्रत्येक मनुष्य के सामने आती है और प्रकृति का यह नियम इतना दृढ़ मालूम होता है कि मनुष्य भले ही अपनी कार्यवाहियों को भूल जाए, पर प्रकृति उसे नहीं भूलती और इसलिए कई जन्मों के बाद भी उसका बदला अवश्य चुकाती है।

वास्तव में कर्म का अर्थ है जो कुछ किया जाए। अस्तु, जो किया जाता है, उसमें प्राकृतिक रूप से भूत, वर्तमान और भविष्यत् के भाव मिले रहते हैं। किसी भी कार्य को वर्तमान समय में करने के हेतु कुछ कारणों का होना आवश्यक है। कोई कार्य बिना कारण के नहीं हो सकता। इसी प्रकार जो कार्य अभी किया जाता है, वह भविष्य में होने वाले किसी कार्य का कारण बनता है। इसलिए कर्म से कार्य-कारण का परस्पर संबंध समझा जाता है।

यह क्रिया आपसे आप प्राकृतिक रूप से हुआ करती है। प्रत्येक कार्य के साथ ही उसका प्रतिकार्य भी आपने आप अर्थात प्राकृतिक रूप से लगा रहता है। कार्य-प्रतिकार्य और कार्य-कारण वास्तव में एक ही वस्तु हैं, केवल शब्दों तथा उनके भावों को प्रकट करने की रीति में अंतर है। इसी कार्य-कारण अथवा कार्य-प्रतिकार्य के प्राकृतिक संबंध को कर्म-व्यवस्था कहते हैं। कर्म को यदि कार्य कहें, तो प्रतिकार्य को कर्मफल कहेंगे।

यह सत्य है कि कर्म का कर्मफल के साथ अविच्छेदनीय संबंध लगा हुआ है, पर इसका यह मतलब नहीं कि प्रत्येक कर्म का फल उसी समय मिल जाता है। कुछ कर्मों के फल तात्कालिक मिलते हैं और कुछ के फल देर से मिलते हैं। कितने ही ऐसे कार्य हैं, जिनके फल इस जन्म में नहीं, अगले जन्म में भी नहीं और अगले जन्म में मिलते हैं और कितने तो ऐसे हैं कि जिनके फल अनेक वर्षों बाद मिलते हैं, क्योंकि कर्म-व्यवस्था एक अत्यंत पेचीली व्यवस्था है। एक-एक फल की पूर्ति के लिए प्रकृति को अनेक प्रकार के साधनों का सामना करना पड़ता है, पर जो हो, चाहे

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आज हो अथवा एक हजार अथवा एक लाख वर्षों के बाद हो, पर प्रत्येक भले-बुरे कर्मों का फल मनुष्य को भोगना अवश्यंभावी तथा अनिवार्य है।

इस तथ्य को साधारण लोग व्यावहारिक रूप से प्रायः नहीं जानते हैं। इसीलिए वे बहुधा आज के ही आराम और मौज में मगन रहते हैं। "खाओ-पियो और मौज करो" यही उनका सिद्धांत रहता है। इस प्रकार अपनी मौज अपने सुख के लिए वे कितनों को दुःख पहुँचाते हैं, इस पर तनिक भी ध्यान नहीं देते। यदि उनका ध्यान इस बात की ओर आकर्षित किया जाए कि ऐसी करनी का बहुत बुरा परिणाम उनको भोगना पड़ेगा, तो वे प्रायः यही उत्तर देते हैं कि "कि आज तो चैन से गुजरती है, आकबत की खबर खुदा जाने।" हाँ, खुदा अवश्य जानता है। हम भले ही अपने दुष्कर्मों को भूल जाएँ, पर 'कर्म' छोटे-से-छोटे और बड़े-से-बड़े अथवा भले-से-भले और बुरे-से-बुरे किसी भी कार्य को वह नहीं भूलता और समय पर उसका फल अवश्य भोगवाता है। इसलिए यदि इस तथ्य को हम समझकर ग्रहण करें तो अनेक बुरे-कार्य हम से आप से आप छूट जाएँगे और इस प्रकार जीवन बहुत सुधर जाएगा।

हमारे द्वारा किए गए कर्मों के संबंध में साधारण नियम यह है कि हम इस जन्म में जो भी अच्छे अथवा बुरे कार्य अर्थात दूसरों को सहायता अथवा कष्ट पहुँचाने के जो कार्य करेंगे उसके फलस्वरूप दूसरे जन्म में वैसे ही सुख अथवा दुःख के साधन मिलेंगे, अर्थात उसी के अनुकूल परिस्थिति में हमारा जन्म होगा। इस जन्म में अपनी वासनाओं द्वारा जिस हद तक मनुष्य दूसरों की ओर प्रेम और दया अथवा द्वेष और क्रोध के भावों का संचालन करता है, उसी के अनुकूल दूसरे जन्म में उसकी अच्छी अथवा बुरी वृत्तियाँ बनती हैं, अर्थात वैसी ही भली या बुरी वासनाओं की ओर दूसरे जन्म में उसकी अभिरुचि रहती है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

यहाँ इस बात पर भी कुछ विचार करना चाहिए कि अपनी परिस्थितियों, अभिरुचियों तथा अवसरों की ओर हमारा भाव कैसा होना चाहिए? एक बात तो स्पष्ट है कि हमको परिस्थितियाँ हमारे पूर्व जन्म की कमाइयों के फलस्वरूप प्राप्त हुई हैं। हमारे अपने ही किए कर्म इन रूपों में हमारे सामने आ उपस्थित हुए हैं। इनके बदलने का हमें क्या, किसी को अख्तियार नहीं है। कोई भी साधु, फकीर, महात्मा अथवा देवता कर्म की लकीर को नहीं काट सकते। तुलसीदास जी ने कहा है—"**विधि कर लिखा को मेटनिहारा।**" इनसे निपटारा तो इन्हें भोग लेने से ही हो सकता है, पर जिस प्रकार इनको भोगा जाएगा, उसी के अनुसार आगे आने वाले जन्म की परिस्थितियाँ बनेगी। इसलिए दुःखदायक परिस्थितियों के आने पर रोना-पीटना बेकार है। उन्हें सहर्ष स्वीकार कर आनंदपूर्वक भोग लेना चाहिए। सुख-दुःख दोनों में मन को संतुलित रखना चाहिए। तभी तो प्रकृति का हिसाब-किताब बराबर हो सकेगा, पर यदि ऐसा न करके हम रोने-तड़पने तथा अपने भाग्य को दोष देने लगें, तो ऐसे भावों तथा विचारों द्वारा फिर प्राकृतिक शक्तियों का संतुलन दूषित हो जाएगा और आगे चलकर हमको और अधिक दुःखों का सामना करना पड़ेगा। हमें जीवन में एक पक्के बहादुर खिलाड़ी की भाँति व्यवहार करना चाहिए। जहाँ हार गए, वहाँ हार मान लेनी चाहिए और जहाँ जीत गए वहाँ जीत माननी चाहिए, पर दोनों ही दशाओं में सदैव प्रसन्नचित्त रहना चाहिए। ये बातें तो साधारण रूप से मनुष्य के जीवन में आया-जाया करती ही हैं। इसलिए इनकी वजह से चित्त की शक्ति अथवा समता में कभी उद्विग्नता नहीं आने देना चाहिए। यदि पूर्ण न्याय के साथ हमारा पुराना कर्म अपना फल चुकाने आता है, तो हमें दुखी क्यों होना चाहिए? वास्तव में यह खुशी होने का अवसर है, क्योंकि इसके द्वारा कम-से-कम इस हद तक तो अपनी करनी का बोझ हमारे सिर से उतर जाता है। इसलिए पूर्व

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कर्मफल के बदले में प्राप्त सुख-दुःखों से जरा भी विचलित न होकर उन्हें सहर्ष स्वीकार कर इस जन्म में हमको अच्छा कार्य करना चाहिए, क्योंकि इसी प्रकार हमारा भविष्य अवश्यंभावी रूप में उज्ज्वल हो सकेगा।

इस आंतरिक दुर्बलता को हटाया और मिटाया जाए

कर्मयोग का अर्थ है सचाई के मार्ग पर, नीति और धर्म प्रतिष्ठा के मार्ग पर वीरोचित ढंग से बढ़ते हुए अपना इहलोक यशस्वी तथा समृद्ध और अपने शुद्ध अहंभाव का विकास करते हुए उसे 'स्व' एवं लोकमंगल की ओर ले जाते हुए क्रमशः परमात्मा में ढाल देना। यह मार्ग कठिन है, पर वीरों और साहसियों का यही मार्ग है। भारतवर्ष जो विश्व शिरोमणि रहा, वह अपनी इसी वीरोचित साधना के कारण रहा, किंतु महाभारत के बाद पिछली शताब्दियों के समय को भारत के लिए अज्ञानांधकार का युग कह सकते हैं। इसमें अगणित भ्रांत विचार-धाराएँ पनपीं। वेद की मान्यताओं पर अवलंबित एक सत्य सनातन धर्म के स्थान पर पंडितों और साधुओं ने अपने-अपने नाम के संप्रदाय खड़े कर दिए। अनेक देवता, अनेक ग्रंथ और अनेक सिद्धांत रख दिए, अनेक प्रथाएँ प्रचलित कर दीं, इससे सारा समाज दिग्भ्रांत हो गया। अनेक दिशाओं में दौड़ने वाले असंबद्ध लोगों की तरह अपना समाज बिखर गया। व्यक्तिवाद को प्रधानता दी गई। परलोक में स्वर्ग-मुक्ति और इस लोक में धन, संतान की बात सोचने तक लोग सीमित हो गए। देश, धर्म, समाज, संस्कृति एवं संगठित चेतना की बात को लोग एक प्रकार भूल से ही गए।

मुसलमानों ने जहाँ एक ओर तलवार के बल पर धर्म-परिवर्तन का प्रयत्न किया, वहाँ उस समय के विद्वानों को चुपके-चुपके भारी धनराशि देकर तथा अपने लोगों से

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उनके सिद्ध चमत्कारों की गाथाएँ गढ़वाकर प्रभावशाली इन लोगों ने अपने समाज को कमजोर बनाने के लिए भाग्यवाद, परावलंबन, पलायनवाद एवं व्यक्तिवाद की शिक्षाएँ धर्म एवं ईश्वर के नाम पर दीं, जिससे जातीय जीवन एक प्रकार से नष्ट हो गया।

उन्हीं दिनों धर्म के नाम पर अनेक ऐसी कुरीतियाँ उपजीं और पनपीं जिनके रहने से कोई समाज खोखला एवं मृतप्राय हो सकता है।

धर्म का मूल उद्देश्य कर्तव्यपरायणता है। हर व्यक्ति कर्त्तव्य-निष्ठ बने, स्वयं अधिक समर्थ संयमी बने और अपनी विशेषताओं के लाभ से सारे समाज को लाभान्वित करे, यही धर्म की मूलभूत प्रेरणा है। इसको भुलाकर औपचारिक आडंबरों का प्रवाह बढ़ गया और लोग तथाकथित कर्मकांडों को ही सब कुछ मानने लगे। सत्कर्मों द्वारा ईश्वर को प्रसन्न करने की अपेक्षा उसे दर्शन, पूजन जैसे क्रिया-कृत्यों से रिझाने पर विश्वास करने लगे। छोटा-सा कर्मकांड-दर्शन, स्नान आदि कर लेने से समस्त पाप दूर हो जाते हैं। इस मान्यता ने पाप का भय लोगों के मन में से निकाल दिया और वे दंड से सहज ही बच जाने की युक्ति पाकर निर्भयतापूर्वक दुष्कर्म करने लगे। इससे पाप कर्म बढ़े, इसी प्रकार देवी-देवताओं को न्याय-मार्ग पर चलकर संतुष्ट करने की अपेक्षा लोग मांस, मदिरा, मिष्टान्न आदि वस्तुओं की रिश्वत देकर उनसे मनचाही कामनाएँ पूर्ण कराने की मनौती मनाने लगे।

आज हिंदू धर्म का स्वरूप कितना विकृत है, यह हर कोई सहज ही देख सकता है। लगभग ८० लाख साधु-महंत ईश्वर के नाम पर मुफ्त के माल चरते हैं। चाहते तो शिक्षा प्रसार, सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन एवं सत्प्रवृत्तियाँ बढ़ाने का बहुत भारी काम कर सकते हैं। ईसाइयों के पादरी भी तो लोकसेवा का काम करते हैं, पर इन ८० लाखों में जनता से विपुल सुख-सुविधाएँ पाने पर भी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लोकहित की भावना नहीं उठती, यह कितने दुःख और लज्जा की बात है।

मंदिरों, देवालयों का उपयोग जनता में धर्म-प्रवृत्ति पैदा करने वाले रचनात्मक कार्य संचालक केंद्र के रूप में होना चाहिए, पर आज तो केवल प्रतिमा के भोजन, शयन, स्नान, आरती मात्र के क्रिया-कृत्यों में सब कुछ सीमित हो गया है।

किसी के मन में धर्म-भावना उठे तो उसका उपयोग वैयक्तिक कर्तव्यों को अधिक तत्परता के साथ पूरा करने एवं लोकोपयोगी कार्यों में अपना समय एवं धन लगाने के लिए होना चाहिए। उसके स्थान पर तीर्थयात्रा, ब्रह्मभोज आदि करके मनुष्य संतुष्ट हो जाता है। इस प्रकार धर्मोत्साह एक उपचार का अंग मात्र बनकर समाप्त होता रहता है। समाज को ऊँचा उठाने वाली प्रवृत्तियों के पोषण के लिए किसी का ध्यान नहीं, दान-दक्षिणा एवं धर्मोपचार पर इतनी धनराशि व्यय होती रहती है कि उतने से एक दूसरी देश-व्यापी धार्मिक पंचवर्षीय योजना चल सकती है।

सामाजिक कुरीतियों में, विवाह-शादियों में होने वाला अपव्यय और देन-लेन एक अभिशाप बनकर सामने उपस्थित है। औसतन हिंदू की आधी कमाई—विवाह-शादी, मृत्यु-भोज, तीर्थ, उद्यापन, दान-दक्षिणा आदि उपचारों में खरच होती रहती है, जिसकी पूर्ति के लिए बेईमानी के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रहता। स्वास्थ्य, शिक्षा, निवास, भोजन, वस्त्र आदि की आवश्यकताओं की उपेक्षा कर उसे कुरीतियों की वेदी पर चढ़ाने के लिए पैसा संचित करना पड़ता है। फलस्वरूप सारे परिवार का विकास रुका पड़ा रहता है।

जाति-पाँति की असमानता स्त्रियों को हीन मानना और उन्हें मुँह ढककर रहने एवं घर से बाहर न निकलने जैसे प्रतिबंधों से राष्ट्रीय प्रगति में भारी अवरोध पैदा हुआ है। ब्राह्मण, ब्राह्मण से छूत भेद माने, हरिजन, हरिजन से ऊँचा-नीचा कहलाए, यह कितने आश्चर्य की बात है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पूजा-उपासना के लिए अनेक देवता, अनेक मंत्र, अनेक पुस्तकें, अनेक मान्यताएँ, अनेक संप्रदायों का होना और उनमें परस्पर विपरीत मान्यताओं का प्रचलित रहना हिंदू-समाज की शक्ति को बढ़ाते नहीं, घटाते ही हैं। पुनर्विवाह न होने से हर वर्ष लाखों विधवाओं का पथभ्रष्ट होना एवं विधर्मी बनना हम आएदिन आँखों के सामने देखते हैं। हर साल अपने समाज में से लाखों व्यक्ति ईसाई, मुसलमान बन जाते हैं, पर वापस लेने या अन्य धर्मावलंबी हिंदू धर्म अपनाना चाहें तो उसके लिए द्वार बंद रहने जैसी संकीर्णताएँ हमारे दिन-दिन घटते चले जाने का प्रमुख कारण है। अंधविश्वास इतने अधिक प्रचलित हैं, जिनका ठिकाना नहीं। भूत-पलीतों से लेकर सयाने-दिवाने, ज्योतिषी, तांत्रिक, ओझा एवं सिद्ध-योगी बनने वाले नशेबाज बाबाओं तक का भ्रम-जंजाल इतना बढ़ा है कि उसमें फँसे हुए करोड़ों लोग न जाने कितनी क्षति उठाते रहते हैं?

आवश्यकता इस बात की है कि हिंदू धर्म की इन आंतरिक दुर्बलताओं से होने वाली हानि की भयानकता को समझा जाए और उन्हें दूर करने के लिए पूरे साहस और प्रयत्न के साथ काम किया जाए। इन त्रुटियों के रहते, हमारा धर्म अनुपयोगी मूढ़, अविश्वासी और पिछड़ा हुआ ही बना रहेगा। जब तक इस स्थिति में सुधार न होगा, तब तक अपने लोग भी उसका तिरस्कार करेंगे। हिंदू धर्म को प्राचीन काल जैसा महान शक्तिशाली एवं विश्वव्यापी बनाना हो तो उसमें घुसी बुराइयों का सुधार किया जाना और सच्चे कर्मयोग को प्रशस्त करना नितांत आवश्यक है।

सचाई व आत्मशुद्धि की आवश्यकता

गीताकार ने भी साधना, क्रिया पर जोर देते हुए कहा है— "**स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।**" जो व्यक्ति सचाई के साथ अपना कार्य करता है, उसे ही सिद्धि मिलती है। कर्म-साधना साध्य की अर्चना है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इसमें कोई संदेह नहीं कि साध्य कितना ही पवित्र, उत्कृष्ट महान क्यों न हो, यदि उस तक पहुँचने का साधन गलत है, दोषयुक्त है तो साध्य की उपलब्धि भी असंभव है। जिस तरह मिट्टी का तेल जलाकर वातावरण को सुगंधित नहीं बनाया जा सकता उसी तरह दोषयुक्त साधनों के सहारे उच्चस्थ लक्ष्य को प्राप्त करना भी असंभव है। वातावरण की शुद्धि के लिए सुगंधित द्रव्य जलाने होंगे। उत्तम साध्य के लिए उत्तम साधनों का होना आवश्यक है, अनिवार्य है। ठीक इसी तरह उत्कृष्ट साध्य-लक्ष्य का बोध न हो तो उत्तम साधन भी हानिकारक सिद्ध हो जाते हैं।

आज हमारी सबसे बड़ी भूल यह है कि हम साध्य तो उत्तम चुन लेते हैं, महान लक्ष्य भी निर्धारित कर लेते हैं, लेकिन उसके अनुकूल साधनों पर ध्यान नहीं देते। इसीलिए हमारे व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में गतिरोध पैदा हो जाता है और साध्य से हम दूर भटक जाते हैं। हम जो कुछ भी लक्ष्य निर्धारित करते हैं तो फिर हमारा ध्यान उस लक्ष्य पर ही रहता है। उसे कैसे-जैसे भी प्राप्त कर लिया जाए—यही हमारी साधना होती है और कई बार भ्रम में भटक कर हम गलत साधनों का उपयोग कर बैठते हैं। फलतः साध्य के प्राप्त होने का जो संतोष और प्रसन्नता मिलनी चाहिए उससे हम वंचित रह जाते हैं।

चाहे सामाजिक क्रांति हो या व्यक्तिगत साधना, लक्ष्य की प्राप्ति तभी संभव होगी जब साध्य और साधन को जोड़कर मनुष्य साधननिष्ठ बनेगा।

लोग धनवान बनना चाहते हैं, ठीक भी है। धनी बनना कोई बुरी बात नहीं है और इसके लिए पर्याप्त पुरुषार्थ बुद्धि-विवेक के साथ लगाया जाए तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य धनवान न बने। लेकिन पुरुषार्थ न करके बिना श्रम किए ही लोग लक्ष्मी अर्जित करना चाहते हैं। जुआ, सट्टा, चोर बाजारी, मिलावट, अधिक मुनाफाखोरी न जाने कितने ही अपराधी साधनों का अवलंबन ये

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लोग लेते हैं और समाज को, साथ ही स्वयं को भी हानि पहुँचाते हैं। क्योंकि समाज के नुकसान में ही आज व्यक्ति की हानि निहित है। कमजोर छिन्न-भिन्न समाज व्यक्ति की भी रक्षा नहीं कर सकता। जिस तरह चोरी, डकैती, व्यभिचार से अर्जित धन को बुरा समझा जाता है, इसी तरह उक्त अनैतिक साधनों से धनोपार्जन गलत है। बहुत कुछ अंशों में ऐसे मनुष्य को असफलता और असंतोष ही मिलता है। ऐसे व्यक्तियों को धन के द्वारा जो सुख आदि मिलना चाहिए, वह नहीं मिलता, परिणाम में वही उनके क्लेश का कारण बन जाता है।

उच्च पद प्रतिष्ठा, ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए मनुष्य के सामने विस्तृत संसार पड़ा हुआ है, पुरुषार्थ और प्रयत्न के साथ मनुष्य कुछ भी प्राप्त कर सकता है, लेकिन वह इस राजमार्ग को न अपनाकर दूसरों को नुकसान पहुँचाता है, बढ़ते हुओं की टाँग खींचता है, व्यर्थ ही संघर्ष पैदा करता है अथवा किसी की खुशामद-मिन्नतें करता है। ये दोनों ही साधन गलत हैं। इसके लिए व्यक्तिगत प्रयत्न आवश्यक है। अपने पुरुषार्थ के बल पर मनुष्य क्या नहीं प्राप्त कर सकता?

लोग चलते हैं जनसेवा का लक्ष्य लेकर, लेकिन वे जनता से अपनी सेवा कराने लग जाते हैं। बहुत-से ज्ञानी-उपदेशक धर्म पर चलने के लिए बड़े लंबे-चौड़े उपदेश देते हैं, लेकिन उनके स्वयं के जीवन में हजारों विकृतियाँ भरी पड़ी रहती हैं। कई साधु-संन्यासी, संत-महात्मा लोगों को त्याग, वैराग्य मोक्ष आत्मकल्याण की बातें कहते हैं, लेकिन वे जनसाधारण से भी अधिक माया-मोह में लिप्त पाए जाते हैं। देशसेवा के लिए राष्ट्र को उन्नति और विकास की ओर अग्रसर करने के लिए लोग राजनीति में आते हैं, लेकिन अफसोस होता है, जब वे पार्टीबाजी, सत्ता हथियाने के लिए, परस्पर लड़ते-झगड़ते हैं, कूटनीति का गंदा खेल-खेलते हैं, अपने घर भरते हैं, जनता की आँखों में धूल झोंकते हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

साधनों में इस तरह की भ्रष्टता व्यक्ति और समाज दोनों के लिए अहितकर सिद्ध होती है। इससे किसी का भी भला नहीं होता, सिद्धि उनसे बहुत दूर हट जाती है।

जिस तरह साधनों की पवित्रता आवश्यक है, उसी तरह साध्य की उत्कृष्टता भी आवश्यक है। साध्य निकृष्ट हो और उसमें अच्छे साधनों को भी लगा दिया जाए तो कोई हितकर परिणाम नहीं होगा। उलटे उससे व्यक्ति और समाज की हानि ही होगी। उत्कृष्ट साधन भी निकृष्ट लक्ष्य की पूर्ति के आधार बनकर समाज में बुराइयाँ पैदा करने लगते हैं। बुराइयाँ तो अपने आप भी फैल जाती हैं, लेकिन किन्हीं समर्थ साधनों का प्रयोग किया जाए तो वे व्यापक स्तर पर फैलने लगती हैं। अतः जिनके पास साधन हैं, माध्यम हैं, उन्हें आवश्यकता उत्कृष्ट लक्ष्य के निर्धारण की है।

कर्मयोग द्वारा परमात्मा की प्राप्ति का यही रहस्य है कि उस लक्ष्य का संकल्प फिर उसके अनुकूल ही उत्कृष्ट साधनों का उपयोग। साध्य और साधन की एकरूपता पर ही कर्मयोग सिद्धि का भवन खड़ा होता है।

कर्मयोग साधना का दैनिक अभ्यास

आत्मनिरीक्षण, आत्मसुधार-निर्माण और विकास ही कर्मयोग का सच्चा स्वरूप है। अपनी समीक्षा करने में पक्षपात करने से ही हमारे भीतर असंख्य दोष-दुर्गुण बढ़े हैं और अनौचित्य से संघर्ष करने का शौर्य साहस खो बैठने से वे जमकर बैठ गए हैं—हटने का नाम नहीं लेते। हमें अपनी शारीरिक और मानसिक त्रुटियों को बारीकी से ढूँढ़ना पड़ेगा और उन्हें हटाने के लिए अनवरत संघर्ष करते रहने को जीवन-साधना का अविच्छिन्न अंग बनाना पड़ेगा। उत्कृष्ट आदर्श और दिव्य जीवन के निर्माण का यही एकमात्र राजमार्ग है। हर महामानव ने यही जीवन-साधना की है और इसी मार्ग पर चलते हुए जीवनोद्देश्य प्राप्त करने में सफलता पाई है। हमें भी यही

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

मार्ग अपनाना होगा। अन्यथा आध्यात्मिक प्रगति–महानता की उपलब्धि एक दिवास्वप्न बनी रहेगी। जिस पवित्रता के आधार पर ईश्वर को प्रसन्न और आकर्षित किया जा सकता है, वह एकमात्र जीवन–साधना की चिरकालीन तपश्चर्या से ही प्राप्त होता है। पूजा–पाठ की औपचारिक पद्धतियाँ उस दिशा में सहायक तो हैं, पर लक्ष्य तक नहीं पहुँचा सकतीं। अपूर्णता से पूर्णता की ओर तुच्छता से महानता की ओर प्रगति का एकमात्र माध्यम जीवन–साधन ही है। उसी के आधार पर आत्मा को परमात्मा, नर को नारायण, पुरुष को पुरुषोत्तम बनने का अवसर मिलता है।

कर्मयोग–साधना की सहयोगी उपादेय प्रक्रियाएँ निम्न हैं—

(१) कर्मयोग से परिपूर्ण जीवन के लिए प्रातः–सायं "हर दिन नया जन्म हर रात नई मौत" का चिंतन करते हुए अपने को अधिकाधिक पवित्र, उत्कृष्ट एवं आदर्श बनाने का प्रयत्न जारी रखना चाहिए। दिनभर की शारीरिक और मानसिक दिनचर्या पर सतर्कतापूर्वक नियंत्रण रखना और रात को वैराग्य की भावना के साथ निश्चिंत होकर निद्रा माता की गोद में सो जाना। यह क्रम यदि नियमपूर्वक जारी रखा जा सके, तो इस प्रकार से आध्यात्मिक कायाकल्प हो सकता है। लोगों को पूजा–पाठ का मनोवांछित लाभ न मिलने की शिकायत करते सुना जाता है, पर जीवन–साधना का सत्परिणाम न मिले ऐसा कदापि संभव नहीं। जो चाहे परीक्षा करके देख ले।

(२) स्वाध्याय आत्मा का भोजन है। अपना पेट काटकर भी, आवश्यक कार्यों में कमी करके भी जीवन साहित्य को पढ़ने के लिए समय निकालना चाहिए। मानसिक शुद्धि के लिए, आत्मा की क्षुधा बुझाने के लिए ऐसा स्वाध्याय नितांत आवश्यक है। एक घंटा समय और पचास पैसा रोज इस ज्ञानयज्ञ के लिए जिनने अभी खरच

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

करने का क्रम नहीं बनाया है, उन्हें अब बना लेना चाहिए। इसमें न तो कंजूसी करनी चाहिए और न उपेक्षा बरतनी चाहिए। पेड़ के सहारे बेल ऊँची चढ़ती है। स्वाध्याय और सत्संग के सहारे आत्मिक स्तर उठता है। उपयुक्त स्वाध्याय और सत्संग घर बैठे उपलब्ध करने की जो प्रक्रिया युग–निर्माण के अंतर्गत चल रही है, उस लाभ से किसी को भी वंचित नहीं रहना चाहिए। जेवर, जायदाद और नोट नहीं, परिवार की सच्ची संपत्ति जीवन–निर्माण का प्रेरणाप्रद साहित्य है। अपने घर में एक ज्ञान मंदिर, घरेलू, नवनिर्माण पुस्तकालय रखना ही चाहिए, जिससे स्वयं को, अपने परिवार को, पड़ोसी और मित्रों को प्रेरणाप्रद प्रकाश मिलता रहे। यह ज्ञानयज्ञ हर घर में चलते रहना चाहिए। अखंड ज्योति और युग निर्माण योजना पत्रिकाएँ तथा सस्ते ट्रेक्टों में कुछ पैसा खरच करके हमें अपना ज्ञान मंदिर आरंभ करना चाहिए और पचास पैसा प्रतिदिन इस ज्ञानयज्ञ के लिए निकालकर आगे भी इस भंडार को बढ़ाने का क्रम जारी रखना चाहिए।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org